भारतीय समाज और नारी

डॉ. अखिलेश शुक्ल
डॉ. निशा राठौर

भारतीय समाज और नारी

भारतीय समाज और नारी

डॉ. अखिलेश शुक्ल
भारत सरकार गृह मंत्रालय द्वारा प्रतिष्ठित
''पं. गोविन्द वल्लभ पन्त एवार्ड'' तथा सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय द्वारा
'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड' से सम्मानित
समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
(उत्कृष्टता केन्द्र) रीवा (म.प्र.)

डॉ. निशा राठौर
एसोसिएट प्रोफेसर
इतिहास विभाग
आगरा कॉलेज, आगरा

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज
रीवा (म.प्र.)
www.researchjournal.in

ISBN-978-81-87364-78-8

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस **(ISSN0973-3914)**
(UGC Journal No. 40942) का वार्षिक विशेषांक

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा

प्रथम संस्करण : 2019

₹ **600**.00

प्रकाशक
गायत्री पब्लिकेशन्स
विन्ध्य विहार कालोनी
लिटिल वैम्बिनोज स्कूल कैम्पस
पड़रा, रीवा (म.प्र.) - 486001
फोन : 7974781746
Email- gayatripublicationsrewa@rediffmail.com
www.researchjournal.in

लेजर कम्पोजिंग-
अरविन्द कम्प्यूटर्स, रीवा (म0प्र0)

इस पुस्तक को यथा संभव अद्यतन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। फिर भी यदि इसमें कोई कभी अथवा त्रुटि रह गई हो तो उससे कारित क्षति अथवा संताप के लिए सम्पादक, लेखक, प्रकाशक एवं मुद्रक का कोई दायित्व नहीं होगा। विद्वत पाठक गण के सुझाव सादर आमंत्रित हैं।

आमुख

वर्तमान संदर्भ में भारतीय समाज में नारी की प्रस्थिति का विशद् विवेचन इस संदर्भ ग्रंथ में किया गया है। वैदिक काल से लेकर आज तक भारतीय महिलाओं के जीवन में अनेक उतार चढ़ाव आए हैं। लिखित साहित्य का प्रथम ग्रंथ वेद है। वेदों में सम्पूर्ण ज्ञान को समाहित किया गया है। वैदिक काल में समाज में महिलाओं की प्रस्थिति पूरी तरह पुरुषों के समान थी। वेद में नारियों की देवी के रूप में पूजा की गई है। यह धार्मिक प्रस्थिति और विचार आज भी कायम है, किन्तु समाज में स्थिति भिन्न है। आज भारत में वैदिक काल की कुछ अच्छाईयाँ विद्यमान है तो मध्यकाल में उत्पन्न हुई कुछ सामाजिक बुराइयाँ भी अस्तित्व में हैं। स्वतंत्रता के पश्चात् 26 जनवरी 1950 से भारत का अपना संविधान लागू हुआ। संविधान में नारी को पुरुषों के समान अधिकार और अवसर प्रदान करने की व्यवस्था की गई है। तत्पश्चात् विगत वर्षों में अनेक विधियाँ विनिर्मित की गई ताकि महिलाओं के साथ हो रहे भेद-भाव को समाप्त किया जा सके। अनेक शोध पत्रों में इनकी विवेचना की गई है। किन्तु जब तक भारत के लोग लड़कों के समान लड़कियों की शिक्षा-दीक्षा में ध्यान नहीं देंगे तब तक भारतीय नारी को दैहिक एवं भौतिक तापों से मुक्त नहीं किया सकेगा। सरकार, विधितंत्र ऐसे भेद-भाव को समाप्त करने के लिए कृत संकल्प है किन्तु अशिक्षा, अंधविश्वास, रूढ़ियाँ और परम्पराएं व्यक्ति को बालक और बालिका के बीच भेद-भाव को दूर करने में बाधक है। यह तभी संभव है जब समाज में शिक्षा का स्तर और दर में वृद्धि हो। शिक्षा और जागरूकता से ही इन व्याधियों से निजात पाया जा सकता है। यह एक संभावना है, किन्तु समाचार पत्र, मीडिया के सभी साधन, मनोरंजन के चैनल्स एवं महानगरीय सभ्यता पश्चिमोन्मुख होने के कारण भारतीय नारी का जो स्वरूप प्रस्तुत कर रहे हैं वह यथार्थ नहीं है। यथार्थ के नाम पर टी.वी. चैनल्स में नारी का जो रूप दिखाया जा रहा है या आधुनिकता के नाम पर जो नग्नता परोसी जा रही है उसे हम बदलती हुई लाइफस्टाइल अवश्य कह सकते हैं किन्तु वह भारतीय संस्कृति से मेल नहीं खाती है। इसके लिए महिलाओं को आगे आना पड़ेगा और महिला संगठनों को इस ओर सक्रिय होना पड़ेगा। महिलाओं की मानसिकता परिवर्तन ही प्रमुख निदान है। इसी तरह

आवश्यकता इस बात की है कि समाज में कन्या भ्रूण हत्या बंद हो। पर यह तभी संभव हो जब गर्भवती माँ, पिता, उसके परिवार के लोग, चिकित्सक और ऐसे सभी चिकित्सकीय केन्द्र मिलकर इसका विरोध करें। कन्या भ्रूण हत्या निरोध के लिए कानून एवं ऐसे कृत्य के लिए दण्ड की व्यवस्था है लेकिन लोगों को इसकी जानकारी नहीं है और यदि है, तो उनकी मानसिकता इसके विरोध की नहीं है। परिणाम यह है कि बालिकाओं का अनुपात कम होता जा रहा है। इसलिए इस भयानक स्थिति में परिवर्तन जागरूकता के माध्यम से ही हो सकता है। इसके लिए हमें समाज से दहेज रूपी दानव का अंत करना पड़ेगा। शिक्षा इस कार्य में बेहद सहायक होगी। नशाखोरी भी महिला उत्पीड़न का एक भयानक कारक है। अनेक शोध पत्रों में इन तथ्यों का विश्लेषण किया गया है। महिला सशक्तीकरण के संदर्भ में भी बहुत कुछ लिखा गया है। पर वास्तव में भारत के प्रत्येक राजनीतिक दल संसद में महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण की बात स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। पंचायती राज संस्थाओं और नगरीय निकायों में अवश्य ही महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है जिसके सकारात्मक परिणाम हमारे सामने आने लगे हैं।

प्राप्त शोध पत्रों को एक संदर्भ पुस्तक के रूप में प्रस्तुत करने के कार्य के लिए हम सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा के आभारी हैं। हम आशा करते हैं कि यह संदर्भ पुस्तक समाज के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

रीवा, गणतंत्र दिवस
26 जनवरी 2019

डॉ. एस. अखिलेश
डॉ. निशा राठौर

अनुक्रमणिका

1.	भारतीय समाज और नारी **डॉ. अखिलेश शुक्ल**	09
2.	भारतीय नारी : अतीत और वर्तमान **डॉ. (श्रीमती) काकोली गोराई**	23
3.	भारतीय समाज में महिलाओं की बदलती स्थिति **डॉ. मधुलिका श्रीवास्तव** **उमेश सिंह**	35
4.	नारी की स्थिति वैदिक काल से वर्तमान तक **प्रो. मंजरी अवस्थी**	43
5.	भारतीय समाज और महिलायें– एक सामाजिक मूल्यांकन (प्राचीन काल से वर्तमान तक) **डॉ. मधु**	50
6.	महिला सशक्तीकरण : एक ऐतिहासिक परिदृश्य **प्रो. अलका सक्सेना**	55
7.	महिलाओं की भूमिका व महिला सशक्तीकरण **श्रीमती रीना रानी दास**	63
8.	समाज में नारी अस्तित्व **कीर्ति पटेल**	70
9.	स्त्री की दुनिया और साहित्य **डॉ. अमित शुक्ल**	75
10.	स्त्रियों के प्रति चली आ रही परंपरागत अवधारणों को चुनौती देता उपन्यास : पंचकन्या **निशा मिश्रा** **डॉ. रानी अग्रवाल**	82

11. चरित्र–निर्माण की प्रथम एवं प्रधान शिल्पी – माता 87
डॉ. बसन्त कुमार मिश्र

12. महिलाओं के प्रति अपराधः एक विश्लेषण 94
डॉ. शाहेदा सिद्दीकी

13. नारी उत्थान में डॉ. अम्बेडकर का योगदान 99
डॉ. संध्या शुक्ला, वंदना शर्मा

14. भारतीय समाज में वृद्ध महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति और समस्यायें 106
प्रो. अर्चना चौहान

15. पंचायती राज और महिलाएँ 112
डॉ. कंचन मसराम

16. बस्तर जिले की राजनीति में महिलाओं का योगदान व वर्तमान चुनौती 119
सियालाल नाग

17. कल्चुरी युगीन समाज में नारियों की दशा 128
(छत्तीसगढ़ के विशेष सन्दर्भ में)
डॉ. महेन्द्र कुमार सार्वा

18. विद्रोही–भक्त कवयित्री मीरा के काव्य में प्रेम, संघर्ष और स्त्रीत्व 134
अर्चना वर्मा
डॉ. रानी अग्रवाल

19. ध्रुवस्वामिनी का आधुनिक संदर्भ एवं नारी मुक्ति 140
डॉ. गुड्डी बिष्ट, पंवार

भारतीय समाज और नारी

* डॉ. अखिलेश शुक्ल

जिन मनीषियों ने मानव समाज की रचना और नृतत्व विज्ञान पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है उन्होंने नर-नारी की स्थिति एवं महत्ता समान बतलायी है-दोनों को एक बराबर महत्व दिया है। क्योंकि दोनों में से एक के बिना भी समाज का अस्तित्व कायम नहीं रह सकता और न जीवन सुविधापूर्वक व्यतीत हो सकता है। पर वास्तविक स्थिति में यह विचार कार्य रूप में परिणित होता दिखाई नहीं देता, वरन् समाज की गति इसके विपरीत ही दिखाई पड़ती है। दुर्भाग्य से हमारे देश की हालत यह है कि नारी को पुरुष की अपेक्षा सब प्रकार से हीन और उसके आश्रित मान लिया गया है। यद्यपि मनु जैसे प्राचीन विचारक और स्मृतिकार स्त्रियों को बहुत पूजनीय बतला गये और उनका सदैव आदर सम्मान करते रहने की आज्ञा दे गये है पर आज उन बातों पर किसी को अमल करते नहीं देखा जाता। नर और नारी दोनों अपनी वास्तविक स्थिति और कर्त्तव्यों को भुला बैठे हैं और इसलिये दु:ख तथा कठिनाइयों में फँसकर अवनति के पाश में जकड़े हुये हैं।

भारत के प्राचीन अध्यात्म-विज्ञान के अनुसार आत्मा की पूर्णता प्राप्त करने के लिये ही नर-नारी का आविर्भाव हुआ है और दोनों में कुछ ऐसे पृथक-पृथक गुणों का विकास किया गया है कि जिनके सम्मिलन से सर्वोच्च आध्यात्मिक स्थिति प्राप्त की जा सकती है। शास्त्रों के मतानुसार पुरुष में जिन शक्तियों का विकास हुआ है उनमें ज्ञान, बल, तेज की प्रधानता है और नारी को जो शक्तियाँ प्रदान की गई हैं उनमें श्रद्धा, भक्ति, सेवा की प्रमुखता है। ये दोनों ही प्रकार की गुण मानव-समाज के प्रगति और उन्नति के लिए अनिवार्य हैं। यही कारण है कि जब तक स्त्री और पुरुष अपने-अपने कर्त्तव्यों का यथोचित रीति से पालन करते रहते हैं तब तक समाज में सुख, संतोष, शक्ति, प्रगति के दृश्य दिखाई देते रहते हैं और सब प्रकार की अमंगलजनक परिस्थितियाँ टलती रहती हैं। पर इसके विपरीत जहाँ वे अपने स्वाभाविक कर्त्तव्यों को भूल जाते हैं और एक दूसरे के अधिकारों का अन्यायपूर्वक अपहरण करने की चेष्टा करते हैं वहाँ तरह-तरह की कठिनाइयाँ

---

* प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्वशासी (उत्कृष्टता केन्द्र) महाविद्यालय रीवा, म.प्र.

आपत्तियाँ और क्लेश ही उत्पन्न होते हैं और समाज अवनति की ओर अग्रसर होने लगता है।

जिस प्रकार नर और नारी में पारस्परिक प्रतियोगिता एक दूसरे के अधिकारों तथा कर्त्तव्यों पर हस्तक्षेप अप्राकृतिक और समाज हित के लिये घातक है उसी प्रकार नारी को नर की अपेक्षाहीन अथवा कम समझने की प्रवृत्ति भी असत्य और सर्वथा त्याज्य है। यह ठीक है कि बहुत समय से संसार के एक बड़े भाग में पुरुष का कार्यक्षेत्र घर के बाहर रहा है और स्त्री को घर के भीतर ही रह कर अपने कर्त्तव्य का पालन करना पड़ा है। इसके परिणाम स्वरूप पुरुष में शारीरिक शक्ति, साहस, पुरुषार्थ, सूझबूझ, बुद्धिमता का विशेष रूप से विकास हो गया है। इसके विपरीत नारी का मुख्य कार्य सन्तानोत्पादन तथा शिशु-पालन रहा है, जिसमें उसे एक प्रकार की साधना और तपस्या का जीवन बिताना पड़ा है। सन्तान के लिये माता को कितना त्याग करना पड़ता है और अनेक बार आत्म-बलिदान तक कर देना पड़ता है, यह बात किसी से छिपी नहीं है। नारी का केवल यही एक गुण इतने महत्व का है जिनके कारण पुरुष को उसके सामने सदैव नतमस्तक रहना चाहिए और कभी उसके हीनत्व की भावना का मन में उठाना भी नहीं चाहिये। यदि नारी आज शारीरिक शक्ति, विद्या, बुद्धि में कुछ पिछड़ी हुई दिखाई देती है तो इसका कारण यही है कि उसने अपनी समस्त शक्ति और साधनों को पुरुष के उच्च निर्माण में लगा दिया है। इस स्थिति में उसमें हीनात्मा की कल्पना करना विवेक शून्यता के सिवाय और कुछ नहीं कहा जा सकता।

ऋग्वेद भारत का ही नहीं, अपितु संसार का प्राचीनतम ग्रंन्थ है। उसे नारी जाति की मान्य स्थिति का स्वर्णिम काल मानने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए, जब ऋषियों ने प्रकृति की आश्चर्यजनक शक्तियों को दैवी शक्ति का प्रतीक मानकर उनमें देवत्व का आरोप किया। रात्रि, उषा, सूर्या, इन्द्राणी, वाक्, ईला, शची, पृथ्वी, उर्वशी आदि वैदिक देवियों में अधिकांश प्राकृतिक शक्ति की प्रतीक हैं।

ऋग्वेद काल की नारी भावना का पूर्ण परिचय ऋग्वेद में वर्णित इन प्रतीकों से मिल जाता है। आर्यों द्वारा सर्जित और पूजित इन देवियों में अदिति स्वाधीनता की साकार प्रतिमा है, वह अनादि जननी है तथा मनुष्यों को बन्धन मुक्त करती है। इन्द्राणी एक ओर अपने त्याग और बलिदान से इन्द्र को बलवान बनाती है दूसरी ओर आदर्श पत्नीव्रत की प्रतिष्ठा करती है। सूर्या आदर्श आर्य वधू के रूप में आज भी समादृत है। एक ओर ललित कलाओं एवं ज्ञान की अधिष्ठात्र देवी सरस्वती की वीणा की स्वरलहरियों का अमर संगीत है तो दूसरी ओर परम लावण्यमयी सौन्दर्य और रूप की खान देवी उषा है जो अपनी कांति किरणों से

ऋषियों के सहज भावुक मन को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। नारी के प्रति वैदिक ऋषियों का दृष्टिकोण कुछ अंश में यथार्थ मूलक है और कुछ भावना मूलक। नारी के यथार्थ रूप से अभिप्राय उन दिनों की नारी के वास्तविक जीवन से है जो दुहिता पत्नी और माता के रूप में दिखलाई देता है।

मध्यकालीन युग के मुकाबले पौराणिक युग में महिलाओं की सामाजिक स्थिति बेहतर थी। बदलते वक्त में समाज के अन्दर काफी कुरीतियों ने जन्म लिया जो महिलाओं की दशा खराब करने में अहम भागीदार थी। मध्यकालीन युग में भारतीय समाज पुरुष प्रधान समाज बन गया था और औरतों को मात्र पुरुषों का गुलाम समझा जाने लगा था। महिलाओं से सिर्फ यही अपेक्षा की जाती थी कि वे पुरुषों की संतुष्टि का ध्यान रखें। परिणामस्वरूप धीरे धीरे महिलाओं की छवि गिरती चली गयी और पुरुष उन पर अपनी इच्छा मनवाने का दबाव बनाने लगे। उन्हें घर की चारदीवारी में कैद रखा जाता था। हालाँकि आज 21वीं सदी में भी हमें महिलाओं पर होते ऐसे अत्याचारों की खबरें सुनने को मिल जाती है।

पहले ऐसा देखा जाता था की अगर घर में बेटी का जन्म होता तो वहां मातम छा जाता था। पर वहीँ अगर बेटे का जन्म होता था तो परिवार के लोग खुशी से झूमने लगते थे। यह पुरुष प्रधान समाज की ही सोच थी जिसमें बेटे से अपेक्षा की जाती थी की वह परिवार के लिए पैसा कमाएगा, समाज में उनका नाम ऊँचा करेगा वही बेटी के जन्म लेते ही माँ को मनहूस माना जाता था। बेटी का जन्म परिवार के लिए किसी अभिशाप से कम नहीं था। नए समय के आगमन के साथ ही लोगों की सोच में भी बदलाव होने लगा। समाज में होते सकारात्मक परिवर्तन से महिलाओं की दशा भी सुधरने लगी।

संसार के पदार्थों का एवं विहित (करने योग्य) तथा निषिद्ध (न करने योग्य) कर्मों का ज्ञान जिससे होता है उसको वेद कहते हैं। वेद ईश्वर की रचना है। सृष्टि के आदि में सर्वप्रथम ईश्वर ने जो ज्ञान जीवात्मा को दिया है, उसी का नाम वेद है। वेद सर्वज्ञ ईश्वर की रचना होने से सम्पूर्ण है। क्योंकि मनुष्यादि उत्कृष्ट-निकृष्ट योनियां, सम्पन्नता-विपन्नता, सुख-दुःख, दीर्घायु-अल्पायु आदि सब हमें हमारे कर्मों के अनुसार मिलता है, अतः कर्मों का समग्रता से ज्ञान होना आवश्यक है। प्रतिदिन वेद स्वाध्याय करने से हमें विहित व निषिद्ध कर्मों के ज्ञान के साथ साथ संसार की असारता व आत्मा की शुद्धता का भी बोध होता है। मन निर्मल व शुद्ध हो जाता है तथा शाश्वत, दिव्य तत्व से योग होता है, जिससे हमारे जीवन के हर क्षेत्र में दिव्यता छा जाती है। जीवन को पवित्र बनाने का उत्तम साधन है - वेद स्वाध्याय। वेद नारी को अत्यंत महत्वपूर्ण, गरिमामय, उच्च स्थान प्रदान करते हैं। वेदों में स्त्रियों की शिक्षा- दीक्षा, शील, गुण, कर्तव्य, अधिकार

और सामाजिक भूमिका का जो सुन्दर वर्णन पाया जाता है, वैसा संसार के अन्य किसी धर्मग्रंथ में नहीं है। वेद उन्हें घर की सम्राज्ञी कहते हैं और देश की शासक, पृथ्वी की सम्राज्ञी तक बनने का अधिकार देते हैं। वेदों में स्त्री यज्ञीय है अर्थात् यज्ञ समान पूजनीय। वेदों में नारी को ज्ञान देने वाली, सुख-समृद्धि लाने वाली, विशेष तेज वाली, देवी, विदुषी, सरस्वती, इन्द्राणी, उषा- जो सबको जगाती है इत्यादि अनेक आदर सूचक नाम दिए गए हैं। वेदों में स्त्रियों पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं है। उसे सदा विजयिनी कहा गया है और उन के हर काम में सहयोग और प्रोत्साहन की बात कही गई है। वैदिक काल में नारी अध्ययन- अध्यापन से लेकर रणक्षेत्र में भी जाती थी। जैसे कैकयी महाराज दशरथ के साथ युद्ध में गई थी। कन्या को अपना पति स्वयं चुनने का अधिकार देकर वेद पुरुष से एक कदम आगे ही रखते हैं। अनेक ऋषिकाएं वेद मंत्रों की द्रष्टा हैं। अपाला, घोषा, सरस्वती, सर्पराज्ञी, सूर्या, सावित्री, अदिति- दाक्षायनी, लोपामुद्रा, विश्ववारा, आत्रेयी आदि। आइए, वेदों में नारी के स्वरुप की झलक इन मंत्रों में देखें -

यजुर्वेद 20.9

स्त्री और पुरुष दोनों को शासक चुने जाने का समान अधिकार है।

यजुर्वेद 17.45

स्त्रियों की भी सेना हो। स्त्रियों को युद्ध में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करें।

यजुर्वेद 10.26

शासकों की स्त्रियां अन्यों को राजनीति की शिक्षा दें। जैसे राजा, लोगों का न्याय करते हैं वैसे ही रानी भी न्याय करने वाली हों।

अथर्ववेद 11.05.98

ब्रह्मचर्य सूक्त के इस मंत्र में कन्याओं के लिए भी ब्रह्मचर्य और विद्या ग्रहण करने के बाद ही विवाह करने के लिए कहा गया है। यह सूक्त लड़कों के समान ही कन्याओं की शिक्षा को भी विशेष महत्त्व देता है।

कन्याएं ब्रह्मचर्य के सेवन से पूर्ण विदुषी और युवती होकर ही विवाह करें।

अथर्ववेद 14.1.6

माता- पिता अपनी कन्या को पति के घर जाते समय बुद्धिमत्ता और विद्याबल का उपहार दें। वे उसे ज्ञान का दहेज दें।

जब कन्याएं बाहरी उपकरणों को छोड़ कर, भीतरी विद्याबल से चैतन्य स्वभाव और पदार्थों को दिव्य दृष्टि से देखने वाली और आकाश और भूमि से सुवर्ण आदि प्राप्त करने कराने वाली हो तब सुयोग्य पति से विवाह करे।

अथर्ववेद 14.1.20

हे पत्नी ! हमें ज्ञान का उपदेश कर।

वधू अपनी विद्वत्ता और शुभ गुणों से पति के घर में सब को प्रसन्न कर दे।

अथर्ववेद 7.46.3

पति को संपत्ति कमाने के तरीके बता।

संतानों को पालने वाली, निश्चित ज्ञान वाली, सहस्त्रों स्तुति वाली और चारों ओर प्रभाव डालने वाली स्त्री, तुम ऐश्वर्य शाली हो। हे सुयोग्य पति की पत्नी, अपने पति को संपत्ति के लिए आगे बढ़ाओ।

अथर्ववेद 7.47.1

हे स्त्री ! तुम सभी कर्मों को जानती हो।

हे स्त्री ! तुम हमें ऐश्वर्य और समृद्धि दो।

अथर्ववेद 7.47.2

तुम सब कुछ जानने वाली हमें धन धान्य से समर्थ कर दो।

हे स्त्री ! तुम हमारे धन और समृद्धि को बढ़ाओ।

अथर्ववेद 7.48.2

तुम हमें बुद्धि से धन दो।

विदुषी, सम्माननीय, विचारशील, प्रसन्नचित्त पत्नी संपत्ति की रक्षा और वृद्धि करती है और घर में सुख लाती है।

अथर्ववेद 14.1.64

हे स्त्री ! तुम हमारे घर की प्रत्येक दिशा में ब्रह्म अर्थात् वैदिक ज्ञान का प्रयोग करो।

हे वधू ! विद्वानों के घर में पहुंच कर कल्याणकारिणी और सुखदायिनी होकर तुम विराजमान हो।

अथर्ववेद 2.36.5

हे वधू ! तुम ऐश्वर्य की नौका पर चढ़ो और अपने पति को जो कि तुमने स्वयं पसंद किया है, संसार सागर के पार पहुंचा दो।

हे वधू ! ऐश्वर्य कि अटूट नाव पर चढ़ और अपने पति को सफलता के तट पर ले चल।

अथर्ववेद 1.14.3

हे वर ! यह वधू तुम्हारे कुल की रक्षा करने वाली है।

हे वर ! यह कन्या तुम्हारे कुल की रक्षा करने वाली है। यह बहुत काल तक तुम्हारे घर में निवास करे और बुद्धिमत्ता के बीज बोये।

अथर्ववेद 2.36.3

यह वधू पति के घर जा कर रानी बने और वहां प्रकाशित हो।

अथर्ववेद 11.1.17

ये स्त्रियां शुद्ध, पवित्र और यज्ञीय (यज्ञ समान पूजनीय) हैं, ये प्रजा, पशु और अन्न देतीं हैं।

यह स्त्रियां शुद्ध स्वभाव वाली, पवित्र आचरण वाली, पूजनीय, सेवा योग्य, शुभ चरित्र वाली और विद्वत्तापूर्ण हैं। यह समाज को प्रजा, पशु और सुख पहुँचाती हैं।

अथर्ववेद 12.1.25

हे मातृभूमि ! कन्याओं में जो तेज होता है, वह हमें दो।

स्त्रियों में जो सेवनीय ऐश्वर्य और कांति है, हे भूमि ! उस के साथ हमें भी मिला।

अथर्ववेद 12.2.31

स्त्रियां कभी दुख से रोयें नहीं, इन्हें निरोग रखा जाए और रत्न, आभूषण इत्यादि पहनने को दिए जाएं।

अथर्ववेद 14.1.20

हे वधू ! तुम पति के घर में जा कर गृहपत्नी और सब को वश में रखने वाली बनों।

अथर्ववेद 14.1.50

हे पत्नी ! अपने सौभाग्य के लिए मैं तेरा हाथ पकड़ता हूं।

अथर्ववेद 14.2.26

हे वधू ! तुम कल्याण करने वाली हो और घरों को उद्देश्य तक पहुंचाने वाली हो।

अथर्ववेद 14.2.71

हे पत्नी ! मैं ज्ञानवान हूं तू भी ज्ञानवती है, मैं सामवेद हूं तो तू ऋग्वेद है।

अथर्ववेद 14.2.74

यह वधू विराट अर्थात् चमकने वाली है, इस ने सब को जीत लिया है।

यह वधू बड़े ऐश्वर्य वाली और पुरुषार्थिनी हो।

अथर्ववेद 7.38.4 और 12.3.52

सभा और समिति में जा कर स्त्रियां भाग लें और अपने विचार प्रकट करें।

ऋग्वेद 10.85.7

माता- पिता अपनी कन्या को पति के घर जाते समय बुद्धिमत्ता और विद्याबल उपहार में दें। माता- पिता को चाहिए कि वे अपनी कन्या को दहेज भी

दें तो वह ज्ञान का दहेज हो।

ऋग्वेद 3.31.1

पुत्रों की ही भांति पुत्री भी अपने पिता की संपत्ति में समान रूप से उत्तराधिकारी है।

ऋग्वेद 10.01.59

एक गृहपत्नी प्रातः काल उठते ही अपने उद्‌गार कहती है -

"यह सूर्य उदय हुआ है, इस के साथ ही मेरा सौभाग्य भी ऊँचा चढ़ निकला है। मैं अपने घर और समाज की ध्वजा हूं, उस की मस्तक हूं। मैं भारी व्याख्यात्री हूं। मेरे पुत्र शत्रु -विजयी हैं। मेरी पुत्री संसार में चमकती है। मैं स्वयं दुश्मनों को जीतने वाली हूं। मेरे पति का असीम यश है। मैंने वह त्याग किया है जिससे इन्द्र (सम्राट) विजय पता है। मुझे भी विजय मिली है। मैंने अपने शत्रु निरूशेष कर दिए हैं।"

वह सूर्य ऊपर आ गया है और मेरा सौभाग्य भी ऊँचा हो गया है। मैं जानती हूं, अपने प्रतिस्पर्धियों को जीतकर मैंने पति के प्रेम को फिर से पा लिया है।

मैं प्रतीक हूं, मैं शिर हूं, मैं सबसे प्रमुख हूं और अब मैं कहती हूं कि मेरी इच्छा के अनुसार ही मेरा पति आचरण करे। प्रतिस्पर्धी मेरा कोई नहीं है।

मेरे पुत्र मेरे शत्रुओं को नष्ट करने वाले हैं, मेरी पुत्री रानी है, मैं विजयशील हूं। मेरे और मेरे पति के प्रेम की व्यापक प्रसिद्धि है।

ओ प्रबुद्ध! मैंने उस अर्ध्य को अर्पण किया है, जो सबसे अधिक उदाहरणीय है और इस तरह मैं सबसे अधिक प्रसिद्ध और सामर्थ्यवान हो गई हूं। मैंने स्वयं को अपने प्रतिस्पर्धियों से मुक्त कर लिया है।

मैं प्रतिस्पर्धियों से मुक्त हो कर, अब प्रतिस्पर्धियों की विध्वंसक हूं और विजेता हूं। मैंने दूसरों का वैभव ऐसे हर लिया है जैसे की वह न टिक पाने वाले कमजोर बांध हों। मैंने मेरे प्रतिस्पर्धियों पर विजय प्राप्त कर ली है। जिससे मैं इस नायक और उस की प्रजा पर यथेष्ट शासन चला सकती हूं।

इस मंत्र की ऋषिका और देवता दोनों हो शची हैं। शची इन्द्राणी है, शची स्वयं में राज्य की सम्राज्ञी है (जैसे कि कोई महिला प्रधानमंत्री या राष्ट्राध्यक्ष हो)। उस के पुत्र-पुत्री भी राज्य के लिए समर्पित हैं।

ऋग्वेद 1.164.41

ऐसे निर्मल मन वाली स्त्री जिसका मन एक पारदर्शी स्फटिक जैसे परिशुद्ध जल की तरह हो वह एक वेद, दो वेद या चार वेद, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गांधर्ववेद, अर्थवेद इत्यादि के साथ ही वेदांगों, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छंद को प्राप्त करे और इस वैविध्यपूर्ण ज्ञान को अन्यों को भी दे।

हे स्त्री पुरुषों ! जो एक वेद का अभ्यास करने वाली वा दो वेद जिसने अभ्यास किए वा चार वेदों की पढ़ने वाली वा चार वेद और चार उपवेदों की शिक्षा से युक्त वा चार वेद, चार उपवेद और व्याकरण आदि शिक्षा युक्त, अतिशय कर के विद्याओं में प्रसिद्ध होती और असंख्यात अक्षरों वाली होती हुई सब से उत्तम, आकाश के समान व्याप्त निश्चल परमात्मा के निमित्त प्रयत्न करती है और गौ स्वर्ण युक्त विदुषी स्त्रियों को शब्द कराती अर्थात् जल के समान निर्मल वचनों को छांटती अर्थात् अविवादी दोषों को अलग करती हुई वह संसार के लिए अत्यंत सुख करने वाली होती है।

ऋग्वेद 10.85.46

स्त्री को परिवार और पत्नी की महत्वपूर्ण भूमिका में चित्रित किया गया है। इसी तरह, वेद स्त्री की सामाजिक, प्रशासकीय और राष्ट्र की सम्राज्ञी के रूप का वर्णन भी करते हैं।

ऋग्वेद के कई सूक्त उषा का देवता के रूप में वर्णन करते हैं और इस उषा को एक आदर्श स्त्री के रूप में माना गया है। (पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर द्वारा लिखित " उषा देवता ", ऋग्वेद का सुबोध भाष्य)

(अ) वेद में कन्या–

ऋग्वेद में प्राप्त अनेक प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि माता पिता के दुलार एवं प्रेम की अक्षय राशि कन्या को प्राप्त होती थी। ऋग्वेद में कन्या और माता-पिता के संबंध को रूपक द्वारा इन शब्दों में वर्णित किया हैः-

''संगच्छमाने युवती समन्ते स्वसाराजामी पित्रोरूपस्यथे''।।

-परस्पर उपकारी भाव से युक्त नित्य तरूणी युवती और जामतृ पिता की गोद में बैठते हैं।

कन्या का एक पर्याय दुहिता है। यह दुहने अर्थ वाली ''दुह'' धातु से बना है। विद्वानों का विचार है कि कन्याएँ दूध दुहने का कार्य करती थीं। गौरक्षा का प्रधान कार्य घर में इन्ही के हाथों रहता था। कन्याएँ तथा स्त्रियाँ रूई धुलती, वस्त्र बुनती और कसीदा-कारी करती थीं। कन्याएँ जलाशयों से जल भरकर लाती थीं। माता-पिता का वे इस कार्य से विश्राम देती थीं। इस प्रकार वह गृह कार्य में प्रवीणता प्राप्त करने के साथ साथ कन्या ब्रह्मचर्यव्रत पालन करती हुई शिक्षा भी प्राप्त करती थीं। ब्रम्हचर्य की समाप्ति पर उसका पाणिग्रहण संस्कार होता था।

''ब्रह्महनाचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्''

(आ) वेद में पत्नी–

कन्या जब वधू बनकर गृह में प्रवेश करती थी तब उसका कार्य अपने सास-ससुर की परिचर्या और गृहकार्य का निरीक्षण एवं सम्यक् सम्पादन था

यद्यपि उस पर उसके पति का स्वामित्व होता था पर वह गृह-कार्य के क्षेत्र में पूर्ण-प्रभुता-सम्पन्न होती थी। सूर्या के मन्त्रों में यह स्पष्ट रूप में मिलता है। वैदिक काल में नारी केवल गृह की सेविका ही नहीं अपित साम्राज्ञी भी कही गई है-

साम्राज्ञी श्वशुरे भव साम्राज्ञी श्वश्रुवां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधिदेववृषु।।

सामाजिक जीवन में भी स्त्रियों को सम्मान पूर्ण स्थान प्राप्त था। यह उनमुक्त प्रेम का युग था। सवन नाम के सार्वजनिक उत्सवों में स्त्रियाँ भी भाग लेती थीं। वैदिक -संस्कृति में स्त्रियाँ पुरूषों के सामान उच्च शिक्षा प्राप्त करती थीं। वेद के साक्ष्य के अनुसार विश्ववारा, लोपामुद्रा, सरस्वती, यमी, अपाला और घोषा ऋग्वेद की प्रभावशाली कवियित्रियाँ है। उन लेखकों एवं विद्वानों में जिनकी स्मृति में ब्रह्मयजन के अवसर पर नैतिक श्रद्धांजलि अर्पित की जाती है, सुलभा, मैत्रेय, वाक्, प्राचितेई एवं गार्गी वाचक्नवी हैं। समाज में एक पत्नीव्रत की मर्यादा मान्य थी बहुपतित्व की प्रथा अप्रचलित थी। कन्या एवं पति दोनों को ही अपना जीवन साथी चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता थी।

(ई) **वेद में माता**-

पत्नी रूप का चरम सौन्दर्य उसके मातृत्व में होता है। यही नारी जीवन की वह अवस्था है जहां उसकी शक्ति और महत्ता प्रस्फुटित होती है तथा उसका निसर्ग-सिद्ध कोमल स्वरूप प्रत्यक्ष का विषय बनता है। वैदिक साहित्य में उसके इस स्वरूप को ''मातृ'' शब्द से संबोधित किया जाता है। अवश्य ही मातृ शब्द से उसका महत्वद्योतित होता है,क्योंकि यही अकेला शब्द ''मातरा'' के रूप में माता-पिता दोनों का बोध करता है।

(ख) **उतरवैदिक युग**-

ऐसे साक्ष्यों का अभाव नहीं है जिनसे स्त्रियों के आदरपूर्ण स्थान का परिचय प्राप्त होता है, तो भी धीरे-धीरे वर्ण व्यवस्था के नियमों में कड़ाई के साथ स्त्रियों के पद में क्रमिक ह्रास होने लगा था। अन्तवर्ण विवाह प्रचलित तो थे, किन्तु उनसे संतान निकृष्ट मानी जाती थी। तप और विराग की बढ़ती हुई प्रवृत्ति के कारण स्त्री को अनादर की दृष्टि से देखा जाने लगा था। मैत्रायणी-संहिता के समय में स्त्रियों का भाग कम हो गया था। विवाह में आंशिक स्वतंत्रता विद्यमान थी। परिपक्व अवस्था होने पर विवाह होता था। अभिजात वर्ग एवं पुरोहतों में अनेक विवाह करने की प्रथा थी। विधवा-विवाह मान्य था। स्त्रियां वस्त्र रंगने, कढ़ाई अथवा डलिया बनाने आदि के व्यवसायों में सहायता देती थी। कुछ यज्ञ यथ रूद्र-यज्ञ तथा सीता-यज्ञ केवल स्त्रियों द्वारा ही संपादित होते थे। संस्कृत

परिवारों में स्त्रियॉ प्रातः और सायं मन्त्रों की प्रार्थनाओं का पाठ करती थी।

(ग) **सूत्रकाल**–

इस काल में नारी की स्थिति में उत्तरवैदिक युग से भी अधिक अपकर्ष हुआ। राजनीतिक शांति और आर्थिक निश्चिन्तता के इस युग में आर्यो का ध्यान साहित्य के परिष्करण की ओर गया। वैदिक कर्म-काण्डों की जटिलता भी बढ़ गई थी। वैदिक काल में सरल कर्म काण्ड का अध्ययन स्त्रियां 16-17 वर्ष की विवाह अवस्था तक कर लेती थीं। इस युग के विस्तृत कर्मकाण्ड के बृहत् साहित्य का अध्ययन तभी संभव था जब स्त्री 22 या 24 वर्ष की अवस्था तक अविवाहित रहती। देश की समृद्धि और आर्थिक उन्नति के साथ विलासिता की प्रवृत्ति बलवती हो रही थी। अतः स्त्रियों के उपनयन और शिक्षा पर आघात पहुँचा। इस काल में अनुलोम विवाह प्रचलित हो गये थे। इन अनार्य स्त्रियों की विद्यमानता ने नारी के पतन में योग दिया। अनार्य स्त्री संस्कृत भाषा के ज्ञान के अभाव में धार्मिक प्रक्रियाओं में भाग लेने में असमर्थ थी। उसे धार्मिक प्रथाओं के लिए अवैधानिक घोषित कर दिया गया था। सूत्रकाल तक आते-आते गणराज्यों का सरल युग समाप्त हो चुका था।

(घ) **महाकाव्य काल**–

इस काल में नारी के अधिकार पहले की अपेक्षा कम हो गये थे और अब वह पुरूष की संपत्ति मानी जाने लगी थी तथा यज्ञादि में उसकी उपस्थिति अनिवार्य नहीं मानी जाती थी, किन्तु जननी की प्रतिष्ठा इस काल में भी बनी हुई थी। राजदरबारों का अनुकरण करते हुए अभिजात वर्ग के लोग भी बहुविवाह करने लगे थे, जिससे नारियों की दशा और अधिक बुरी बन गई थी। कश्यप ऋषि की आठ स्त्रियों व दशरथ की तीन पत्नियों से भी यही ज्ञात होता है कि बहु-विवाह का प्रचलन हो चुका था।

(ञ) **मुस्लिम काल**–

वस्तुतः इस्लाम काल ने नारी के जीवन को पूर्णतः तिमिराच्छादित कर दिया था। मोहम्मद बिन कासिम के आक्रमण से लेकर मुगल साम्राज्य के पतन तक का इतिहास नारी ने अपने ऑसुओं से ही नहीं, अपितु रक्त से लिखा है। मुगल काल के इन 400 वर्षों में होने वाली पराजयों का सामना भारतीय नारी को जौहर की अग्नि में स्वयं को भष्म करके करना पड़ा है।

मध्यकाल के प्रारंभ से ही विधवा विवाह की प्रथा समाप्त हो चुकी थी तथा विधवा जीवन अभिशाप बन चुका था। सती प्रथा के लिए भी अब दारूण उपायों का प्रयोग होने लगा था। तथा दासियों का क्रय-विक्रय साधारण बात हो गई थी यद्यपि मोहम्मद तुगलग तथा अकबर ने सती प्रथा को समाप्त करने के प्रयत्न भी

किये थे, किन्तु वे सफल नही हो सके यद्यपि मुस्लिम शासकों ने रजिया बेगम के अतिरिक्त किसी भी नारी के पॉव राजनीतिक देहली पर नहीं टिकने दिये किन्तु मुगल बादशाह अपनी मॉ बहनों से सलाह अवश्य लिया करते थे। माता के प्रति आदर भावना का पूर्ण अभाव इनमें भी न था क्योंकि मोहम्मद साहब ने तो यहॉ तक कहा कि स्वर्ग माता के पॉवों तले ही रहता है। चॉदबीबी द्वारा अपने पति आदिलशाह को दिया गया सहयोग तथा नूरजहॉ का राज्य संचालन उन नारियों के समर्थ अस्तित्व का परिचायक है। नूरजहॉ के चित्र के तो सिक्के भी चले थे।

हिन्दू महिलाओं में भी शिवाजी की जननी जीजाबाई की कुशाग्र राजनीतिज्ञता शिवाजी के पुत्र, राजाराम की पत्नी ताराबाई के द्वारा औरंगजेब का विरोध, दुर्गावती द्वारा आशफखॉन के आक्रमण का प्रतिरोध कर्णवती का बहादुरशाह से मुकाबला तथा अहिल्याबाई का प्रशासन आदि तात्कालीन नारियों के प्रशासन कौशल एवं वीरता के प्रमाण है। जहॉ तक शिक्षा का प्रश्न है, इस्लाम नारी के पक्ष में नहीं रहा, किन्तु अपवाद स्वरूप गुलबदनबानू, सलीमाबेगम, जेबुन्निसा आदि नारियों द्वारा काव्य रचने का उल्लेख भी मिलता है।

कला एवं ऐश्वर्य का काल होने के कारण मुस्लिम काल में युद्ध से थके बादशाहों के दरबारों मे विलासिता का वातावरण व्याप्त था और उस विलासिता का शिकार बनी भोली-भाली असहाय नारी। उर्दू के शायरों ने मुगलबादशाहों की इस विलासिता की वृद्धि में सहयोग दिया। मुगल बादशाहों की विलासिता की प्रवृत्ति के कारण वैश्यावृत्ति को भी बढ़ावा मिला। अकबर द्वारा बसाई गई शैतानपुरी इसका ज्वलंत प्रमाण है। इस प्रकार ऋगवेद काल यदि नारी के उत्कर्ष की चरम सीमा थी तो इस्लाम काल उसके पतन की

(इ) **आधुनिक काल**-

19वीं शताब्दी से पूर्व ही भारतीय नारी के दुर्बलता अपनी चरम अवस्था तक पहुॅच चुकी थी। इस शताब्दी से पूर्व भारतीय नारी गृह-कार्य की बन्दनी बन चुकी थी।यद्यपि प्राचीन आर्य नारी अपने पति की सहधर्मिणी तो रही, किन्तु वह कभी भी पति की छाया नहीं बनी थी। इस काल तक आते आते भारतीय नारी के जीवन का इतिहास की करूणतम कहानी बनकर रह गया था।

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्यभाग में हमारे राष्ट के महान सुधारकों के अथक प्रयत्नों के फलस्वरूप नारी कल्यांण संबंधी कार्यों का श्रीगणेश हुआ। इस काल में नारी शिक्षा के प्रसारक ईश्वरचन्द्र विद्यासागर एवं नारी सुधाकर आंदोलन के अग्रदूत राजा राम मोहन राय ने निरक्षर नारी के लिए शिक्षण की व्यवस्था करने का महत् कार्य अपने हांथों में लिया। सन् 1847 में सर्वप्रथम महिला महाविद्यालय की स्थापना कलकत्ते में हुई।जहॉ से सर्वप्रथम भारत की दो स्नातिकाएं निकलीं।

इस कालेज के द्वारा ही महिलाओं के लिए आधुनिक शिक्षा के द्वारा खुले, जिसके प्रभावस्वरूप 1847 में स्थापित गुजरात वर्नाक्यूलर सोसायटी ने 1849 में सर्वप्रथम सहशिक्षा प्रारंभ कर दी।

नारी के अस्तित्व को नगण्य सिद्ध करने वाली सतीप्रथा इस काल तक प्रचलित रही, किन्तु यह इसका संध्याकाल था।भारतीय जीवन के कलंक को धोने की प्रेरणा राजा राममोहनराय को 1818 में अपने ज्येष्ठ भ्राता जगमोहन के मृत्यु के पश्चात् उनकी भाभी को चिता की ज्वाला में बलात् ढकेलते हुए देखकर प्राप्त हुई थी।

1818 से ही राजा राममोहनराय ने अपने पत्र ''सम्बन्ध कौमुदी'' में सती प्रथा के विरोध में लिखे तथा सती-प्रथा का सम्बन्ध स्त्री जीवन की आर्थिक विषमता के साथ जोड़ा। मुख्यतःराजा राममोहनराय के अथक प्रयत्नों के फलस्वरूप ही 1829 में सतीप्रथा पर प्रतिबन्ध लगाया गया।

यद्यपि ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल के प्रारंभिक वर्षों में नारी की दशा में विशेष सुधार नहीं हो सका फिर भी 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उसकी दुर्दशा-निवारण के सरकारी एवं गैर सरकारी प्रयास अधिक संख्या में किये जाने लगे। ब्रम्ह समाज (1828) प्रार्थना समाज (1867)आर्य समाज (1875) आदि संस्थाओं ने नारी कल्याण हेतु अनेक प्रयत्न किये तथा रामकृष्ण मिशन तथा थियोसीफिकल सोसायटी आदि संस्थाओं ने भी इस पावन अनुष्ठान में पर्याप्त योग दिया।

1885 में राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हो गई थी, जिससे अपने राजनीतिक कार्यक्रम के साथ साथ नारी उत्थान का कार्य भी करना प्रारंभ कर दिया था। महादेव गोविन्द रानाडे के प्रयास के फलस्वरूप समाज सुधार के लिए कई अधिवेशन आयोजित होने लगे, जिनमें परदा विरोध, विधवा -दशा, बालविवाह तथा अन्य कुरीतियों के उन्मूलन के प्रस्ताव पारित किये जाने लगे।

19वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में समाज-सुधार में संलग्न विविध शक्तियों ने भारतीय स्त्री की दशा को सुधारने के लिए बहुत अधिक प्रयत्न किया था। 20वीं शताब्दी में प्रयत्न अधिक व्यापक और शक्तिशाली हो गया। अब देशी राज्य भी इस क्षेत्र में अपना सहयोग देने लगे। बाल-विवाह के शाप को दूर करने के लिए बड़ौदा के संस्कृत-बुद्धि महाराज सयाजीराव गायकवाड़ ने 1902 में शिशु-विवाह -निषेध के लिए एक एक्ट पास किया, जिसके द्वारा विवाह की लघुतम आयु लड़कियों के लिए 12 वर्ष तथा लड़को के लिए 16 वर्ष निश्चित की गयी। 1928 मे ''एज आव कंसेट कमेटी'' की बैठक विवाह-सुधार के प्रश्न पर विचार करने के लिए शिमला में हुई। इसकी रिपोर्ट निकलने के पश्चात् रायसाहब

हरविलास शारदा के प्रयत्नों और लड़कों की आयु18 वर्ष निश्चित कर दिया। इस एक्ट के विरूद्ध प्रचुर आन्दोलन हुआ, किन्तु व्यावहारिक क्षेत्र में इसे अधिक सफलता मिली।

प्राचीन काल से चली आती हुई देवदासी प्रथा को दूर करना 20वीं शताब्दी की विशेषता है। 1906 में बम्बई सरकार ने एक विधान बनाया जिसके अनुसार मंदिर के वे अधिकारी जो देवताओं के लिए स्त्रियों के समर्पण में योग दे, कानूनी रीति से दण्ड के भागी बना दिये। 1909 में मैसूर सरकार ने मन्दिरों में नृत्य की प्रथा को बन्द कर दिया। 1925 में डॉ मुथ्थलक्ष्मी रेड्डी आदि के भगीरथ प्रयत्न के फलस्वरूप पीनल कोड के वह नियम जो नाबालिग व्यवसाय को अपराध निश्चित करते हैं, देवदासियों पर भी लागू किये गये। विवाह सम्बन्ध विच्छेद किये बिना ही दूसरा विवाह करने के अधिकार पर रोक लगाने के संबंध में 1942 में बड़ौदा सरकार ने कानून बनाया। 1946 में बंबई सरकार ने भी इसी प्रकार का हिन्दू बहु-विवाह निरोधक कानून लागू किया। 1949 में हिन्दू-विवाह मान्यता कानून के अर्न्तगत हमारी सरकार ने अन्तरजातीय विवाहों को भी मान्यता प्रदान कर दी तथा 1945 में विशेष विवाह कानून के अर्न्तगत 18 वर्ष की स्त्री और 29 वर्ष का पुरूष विवाह योग्य माना गया। विवाह संम्बन्ध के विच्छेद हो जाने पर या अपने जीवन साथी की मृत्यु हो जाने पर ही दूसरा विवाह कर सकते है, यह विधान भी पारित हुआ।

20वीं शती की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि नारी शिक्षा को प्राथमिक स्तर पर महत्व दिया जाने लगा। सरकार के साथ साथ सामाजिक संस्थाओं ने भी इसमें भरपूर सहयोग दिया। इसके परिणाम अत्यंत उत्साह जनक निकले हैं। आज शिक्षा के क्षेत्र में नारी पुरूषों के समान ही नही अपितु आगे निकल रही है। शिक्षित होने के कारण आज उसे जीवन के सभी कार्य क्षेत्रों में महत्वपूर्ण अवसर मिल रहे हैं। अन्य क्षेत्रों मे भी वह स्वावलम्बी बन रही है। वैधानिक दृष्टि से आज नारी को सभी अधिकार प्राप्त हैं। किन्तु इन वैधानिक अधिकारों एवं समानताओं का लाभ केवल नगरीय और शिक्षित नारियों को ही मिल पाया है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिति अभी परंपरागत ही हैं।

आज भी छोटी जातियों और गांव में बाल-विवाह द्वारा उसके जीवन का सूत्र किसी अनजान के साथ बांध दिया जाता है और दुर्भाग्यवश यदि वह बालिका विधवा हो गई तो उसे जीवन भर वैधव्य का ''कफन'' ओढ़े रहना पड़ता है। कानून द्वारा विधवा विवाह या पुर्नविवाह की अनुमति उसे अवश्य दे दी गयी है किन्तु आज के घुटन भरे सामाजिक वातावरण में ऐसा कदम उठाने का साहस बहुत कम नारियॉ कर पाती है। शिक्षा की दृष्टि से भी भारत की अधिकांश

नारियॉ आज भी निरक्षर हैं। कन्यादान की ''मंगलबेला'' में आज भी उसका होने वाला ''देवता'' उसके जनक से प्राप्त होने वाली धनराशि से ही उसका मूल्यांकन करता है। सम्पत्ति संबंधी अधिकार उसे अवश्य मिल गये हैं, किन्तु आज ही अन्य धन की प्राप्ति तो दूर रही अपनी अर्जित धनराशि को भी उसे अपने ''स्वामी'' के चरणों में अर्पित करना होता है। हमारे संविधान में नारी की स्थिति जितनी सुधरी-संवरी एव उत्कर्षमय प्रतीत होती है व्यावहारिक जीवन में उतनी अच्छी नहीं हैं।

इस प्रकार भारतीय नारी कभी पुरूष के हृदय की देवी रही है तो कभी चरणों की दासी, कभी गृहस्वामिनी तो कभी बंदिनी। आधुनिक युग में नारी को ऋग्वैदिक काल जितनी स्वतंत्रता प्राप्त है, अवसर प्राप्त है, किन्तु उसके सम्मान स्तर में वह उच्चता नहीं है। इसका कारण जहॉ आधुनिक नारी मे आदर्शों का अभाव है, वहॉ साथ ही भौतिकवादी प्रभाव भी प्रमुख कारण है। भौतिकवादी वातावरण में स्वयं नारी आकण्ठ डूबने को व्याकुल है, यही कारण कि इस वातावरण के प्रभाव से उसके प्रति भोगमयी दृष्टि को तीव्रता मिली है, श्रद्धेय दृष्टि को नहीं।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. http://literature.awgp.org/akhandjyoti/1964/February/v2.20
2. https://www.linkedin.com
3. ऋग्वेद में नारी- डॉ श्रीमती कमला
4. भारतीय महिलाएँ एक सामाजिक अध्ययन-निशांत सिंह ओमेगा पब्लिकेशन्स-दिल्ली 110002
5. आधुनिक समाज में कार्यशील महिलाएँ-श्रीमती प्रमीला दाधीच मार्क पब्लिसर्स जयपुर 302021(राजस्थान)
6. प्रतियोगिता दर्पण-हिन्दी मासिक अप्रैल 2010
7. कुरूक्षेत्र अक्टूबर 2010
8. योजना-अक्टूबर 2006

भारतीय नारी : अतीत और वर्तमान

* डॉ. (श्रीमती) काकोली गोराई

सृष्टि के आरम्भिक काल से ही समाज के विकास में पुरुष के समान ही महिलाओं का भी विशेष महत्व रहा है। महिला सृजन और निर्माण शक्ति की विभूति है। वह समाज और संस्कृति की जन्मदात्री तथा पोषककत्री है। जीवन के हर क्षेत्र में महिलाओं के योगदान को स्वीकार किया गया है, क्योंकि महिला एवं पुरुष विकास रूपी गाड़ी के दो पहिए है। राष्ट्र के विकास में महिलाओं का उतना ही महत्व है, जितना कि पुरूषों का। महिलाओं के विकास के बिना राष्ट्र के विकास के बात करना एक कोरी कल्पना प्रतीत होती है। किसी भी राष्ट्र या समाज के जनसंख्या का आधा हिस्सा महिलाओं का होता है अर्थात सामाजिक संरचना में महिलाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। परंतु भारतीय समाज में अधिकतर परम्परायें, रीति-रिवाज, मान्यताएँ, मूल्य एवं नियम, लिंग-भेद पर आधारित है। समाज में पुरूष एवं स्त्री दोनों के लिए अलग-अलग मानदण्ड है। पुरूष इच्छानुसार कार्य करने, शिक्षा प्राप्त करने, व्यवसाय चुनने, जीवन साथी चुनने के लिए स्वतंत्र है परन्तु अधिकतर महिलाएँ इन अधिकारों का इच्छानुसार चयन नहीं कर सकती। वर्तमान समय में महिलाओं की मनोवृत्ति में परिवर्तन देखने को मिलता है। आज की स्त्री की स्थिति परम्परागत नारी की स्थिति से भिन्न है। वह अपनी सीमा व सामर्थ्य को पहचान कर अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संघर्षरत है। आज महिलाएँ घर की चारदीवारी से निकलकर हर क्षेत्र में पुरूषों का वर्चस्व तोड़ रही है। अतः बदलते वक्त में महिलाएँ आर्थिक, शैक्षिक और सामाजिक रूप से सशक्त हुई है और उनकी हैसियत एवं सम्मान में वृद्धि हुई है। अतः इस शोध-पत्र में स्त्रियों के जीवन के इन उतार-चढ़ाव भरे समय और समस्याओं का उल्लेख करूँगी।

प्रकृति के विधान के अनुसार सृष्टि को चलाने के लिए स्त्री और पुरूष दोनों की समान महत्ता है। स्त्री के बिना संसार की कल्पना नहीं की जा सकती अर्थात नारी एक सर्जन हैं, रचनाकार हैं। भारतीय समाज में नारी शक्ति का बहुत

---

* सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जामताड़ा कॉलेज,जामताड़ा, झारखंड

महत्व है। शास्त्रों में नारी को कामधेनु कहा गया है जो एक मां, बहन, बेटी, पत्नी आदि के विभिन्न रुपों में समाज में अपने सभी दायित्वों को सम्पूर्णता से निभाती हैं। यदि महिलाओं की स्थिति को भारतीय संदर्भ में देखा जाये तो हम कह सकते हैं कि प्राचीनकाल में उनकी स्थिति काफी अच्छी और प्रतिष्ठापूर्ण रही है। वैदिक समाज में महिलाओं को पर्याप्त स्वतन्त्रता थी और मनु ने मनु स्मृति में नारी का विवेचन करते हुए स्पष्ट लिखा है कि- ''यत्र नार्यस्तु पुज्यंते रमन्ते तत्र देवता'' अर्थात् जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं। प्राचीनकाल में भारत के ऋषि-मुनियों ने नारी के महत्व को भली-भांति समझा था। इस संसार में यदि नारी न होती तो सभ्यता और संस्कृति भी न होती। किसी समाज के सांस्कृतिक विकास का मानदण्ड नारी की मर्यादा है। महिलाएं हमारे देश की जनसंख्या का लगभग आधा भाग हैं तथा विकास कार्यो में उनकी भागीदारी बहुत महत्वपूर्ण मानी जाती है। आर्थिक तथा सामाजिक विकास की योजनाएं बिना महिलाओं के योगदान के सम्पूर्ण नहीं हो सकती। इसमें कोई सन्देह नहीं कि नारी ही निर्माता शक्ति है। नारी विधाता की अनुपम एवं सर्वोत्कृष्ट रचना मानी जाती है। इसमें कल्याण, ममता, स्नेह आदि गुण स्वाभाविक रूप में ही विद्यमान रहते हैं। नर तथा नारी जीवन रूपी गाड़ी के दो पहिये हैं एक के बिना दूसरा अपूर्ण है। प्रत्येक मनुष्य की सफलता के पीछे किसी न किसी नारी का हाथ अवश्य होता है इसमें कोई संदेह नहीं हैं। तुलसी को तुलसीदास बनाने का श्रेय उनकी पत्नी रत्नावली को है। भारत का अतीत इस प्रकार के असंख्य उदाहरणों से भरा पड़ा है। भारत में सैद्धान्तिक रूप से हमेशा से ही नारी की मर्यादा रही है अर्थात् अर्द्धनारीश्वर की कल्पना स्त्री और पुरुष के समान अधिकारों तथा उनके संतुलित संबंधों का परिचायक है। इसी कारण हमारा देश सोने की चिड़िया माना जाता था जहां हर समृद्धि थी सुखी समाज और सुखी परिवार था। नारी की जीवन-यात्रा संगीतमय,रागमय और खुशियों भरी होती थी। वह सपनों से वंचित नहीं थी। सपनों में आकाश के नए-नए इन्द्रधनुष, चाँद-सूरज होते थे। उन दिनों परिवार मातृ-सत्तात्मक था। वेदों में अनेक स्थलों पर रोमाला, घोषाल, सूर्या, अपाला, विलोमी, सावित्री, यमी, श्रद्धा, कामयनी, विश्वम्भरा,देवयानी आदि विदुषियों के नाम प्राप्त होते हैं। उत्तर वैदिक काल में भी स्त्रियों की प्रतिष्ठा बनी रही।गार्गी, मेंत्रेयी, उद्दालिका, विदग्धा आदि विदुषियों दार्शनिक एवं आध्यात्मिक चर्चाओं तक में सफलता के साथ भाग लेती थी। इसके अलावा शासन, सेना, राज्य-व्यवस्था में स्त्रियों के योगदान के प्रमाण मिलते हैं।

रामायण-महाभारत काल में नारी के अधिकार पहले जैसे नहीं रहे। वर्ण-व्यवस्था में भी कठोरता आई तथा नारी घर-गृहस्थी तक सीमित रहने लगी।

बहुपत्नी व्यवस्था और अनुलोम विवाह के कारण नारी उपभोग की वस्तु बनने लगी। तप, त्याग, नम्रता, धैर्य, आदि पतिव्रत धर्म का पालन करना उनके प्रमुख लक्ष्य माने गये। पतिव्रत धर्म सर्वोच्च बन जाने के कारण विधवा का जीवन नरक हो गया, परिणामस्वरुप सती-प्रथा का जन्म हुआ। किशोरियों और युवतियाँ मंदिरों में बलपूर्वक देवदासियाँ बना दी गई और धर्म के नाम पर वेश्यावृत्ति पनपी। इस काल में नारी को पिता, पति और पुत्र के अधीन रखने काविधान प्रस्तुत किया गया। इससे नारी पुरुष की सहभागिनी न होकर मात्र अनुगामिनी भोग्य पदार्थ बनकर रह गई और उसे सम्पत्ति में भी कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। महाभारत में पांडवों द्वारा द्रौपदी को जुए के दांव में लगाना, भरी सभा में कौरवों द्वारा उसे नंगा किया जाना, रामचरितमानस में पुरुषोत्तम राम द्वारा सीता की सुचिता की परीक्षा लेना नारी के नारकीय स्थिति को बयां करती है।

समय के परिवर्तन के साथ-साथ स्त्रियों की स्थिति में भी परिवर्तन होता गया। मध्यकाल में जब भारत पर मुसलमानों के आक्रमण और मुगलों के राज्य के बाद, नारियों को जबरदस्ती उठा कर उनकी इच्छा के विरूद्ध तत्कालीन सत्ताधारियों ने उनका धर्मपरिवर्तन किया तथा नारी को कुदृष्टि से देखा जाने लगा तब से समाज में नारी की स्थिति का अत्यधिक पतन प्रारंभ हो गया, फलतः भारतीय नारी दयनीय स्थिति में पहुँच गई। कुल के रक्त की शुद्धता, नारी के सतीत्व की रक्षा और हिन्दु धर्म की रक्षा के नाम पर नारी को ऐसे-ऐसे सामाजिक-धार्मिक बंधनों में जकड़ दिया गया कि वह पुरुष की छायामात्र होकर रह गई और उसका स्वतंत्र अस्तित्व लुप्त हो गया। इस काल में स्त्री शिक्षा समाप्त हो गई और पर्दा-प्रथा और सती-प्रथा यहाँ तक की मादा-शिशु की हत्या बढ़ गई। समाज में घृणित विचारधारा ने उसका क्षेत्र केवल घर की चारदीवारी तक ही सीमित कर दिया और धीरे-धीरे सभी समाजों में सामाजिक व्यवस्था मातृ-सत्तात्मक से पितृ-सत्तात्मक होती गई। समाज में महिलाओं की भूमिका परिवार का पालन- पोषण, परिवार की वृद्धि या घरेलू काम-काज तक सीमित मानी जाती रही है। यह कुल जनसंख्या का लगभग आधा भाग होती हैं फिर भी इस पितृ-सत्तात्मक समाज में उसे हीन दृष्टि से देखा जाता हैं। पुत्र जन्म पर हर्ष तथा पुत्री जन्म पर संवेदना व्यक्त की जाती हैं। भारतीय समाज में आज भी पुत्रों को पुत्रियों से अधिक महत्व दिया जाता हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने नारी की इस स्थिति का चित्रण इन शब्दों में किया-

कत बिधि सृजी नारी जग माही।
पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं।।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने नारी की इस सोचनीय दशा का वर्णन अपनी कविता की पंक्तियों में किया -

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी,
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।''

मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात् इस देश में अंग्रेजों का शासन हो गया। 18वीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों से लेकर स्वतंत्रता से पूर्व का समय ब्रिटिश काल कहलाता है। ब्रिटिश सरकार ने भारतीय समाज में परिवर्तन लाने के लिए अनेक प्रयत्न किया जिनमें सबसे महत्वपूर्ण था आधुनिक शिक्षा नीति का प्रसार एवं प्रचार। इसी के परिणाम स्वरुप राजा राम मोहन राय और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जैसे महान् समाज सुधारक का जन्म हुआ,जिन्होने सती प्रथा की समाप्त करने का प्रयास किया। उनके प्रयासों के परिणामस्वरुप ब्रिटिश सरकार द्वारा इसे निषिद्ध किया गया। उनके प्रयासों से बाल विवाह का विरोध तथा विधवाओं के पुनर्विवाह एवं स्त्री शिक्षा पर काफी जोर दिया। स्वामी विवेकान्द ने भी नारी के पुनरुद्धार पर जोर देते हुए कहा - ''जिस देश या राष्ट्र में नारी पूजा नहीं होती, वह देश या राष्ट्र कभी महान् या उन्नत नहीं हो सकता। नारी रूपी शक्ति की अवमानना करने से ही आज अध:पतन हुआ है।" ब्रिटिश काल में नारी पुनर्जागरण के लिये कई उपाय किये गये, तथापि उनमें जागृति की गति बहुत धीमी थी किन्तु फिर भी रानी लक्ष्मीबाई व सरोजिनी नायडू जैसी महिलाओं ने अपने हौसलों से न केवल आजादी में योगदान दिया बल्कि विश्व में नारी शक्ति को एक नई पहचान भी दिलाई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नारियों में स्वचेतना जाग्रत करने के लिये कई उपाय किये गये। सर्वप्रथम उन्हें संविधान में समान दर्जा दिया गया। अनुच्छेद 14 एवं 15 में पुरुषों एवं स्त्रियों में कोई अंतर न करते हुये समानता का प्रावधान मिला। वैवाहिक जीवन की समरसता के लिये हिन्दू विवाह अधिनियम 1952 तथा विवाह अधिनियम 1956 पारित किया गया। हिन्दू अल्प वयस्कता तथा अभिभावकता अधिनियम, 1956 में भी नारियों के सामाजिक उन्नयन हेतु कई प्रावधानों का समावेश किया गया। दहेज निवारक अधिनियम 1961 तथा बाल विवाह (संशोधन) अधिनियम 1983 के साथ-साथ महिला का अश्लील प्रस्तुतीकरण विरोधी कानून 1986 ने नारियों को कई प्रकार के कानूनी संरक्षण प्रदान किये हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय दण्ड संहिता (1860) तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता (1973) में भी नारियों के प्रति किये गये अपराधों हेतु दण्ड की व्यवस्था हैं। भारतीय दण्ड संहिता में धारा-312 के तहत किसी गर्भवती स्त्री का गर्भपात बिना उसकी सहमति के कराने वाले को तीन वर्ष की सजा अथवा जुर्माना दोनों से दण्डित किया जाता है। इसी प्रकार दण्ड संहिता की धारा- 354 के अनुसार यदि कोई व्यक्ति स्त्री की लज्जा भंग करता है तो उसे दो वर्ष की सजा अथवा जुर्माना अथवा दोनों से दण्डित किये जाने का प्रावधान है। धारा-375 के तहत बलात्कार को परिभाषित

किया गया है, यदि कोई पुरूष स्त्री की सहमति के विरूद्ध उसके साथ शारीरिक संबंध बनाता है तो ऐसे व्यक्ति को दस वर्ष की कठोर कारावास तथा जुर्माना दोनो से दण्डित किया जायेगा। धारा 292 से 294-के अनुसार विशिष्टता एवं सदाचार को प्रभावित करने वाले मामलो पर रोक लगायी गयी है। इसके अनुसार अगर कोई स्त्रियों की नंग्न तस्वीरें प्रदर्शित करता है अथवा क्रय-विक्रय करता है तो ऐसे अपराध के लिए दो वर्ष की सजा एवं जुर्माना अथवा दोनों दण्ड दिये जा सकेंगे। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 47(2) तथा धारा-51(2) तथा धारा 53(2) के अन्तर्गत महिलाओं की सुविधा को ध्यान में रखा गया है। यदि किसी अपराध में पुलिस तलाशी लेती है तो महिला के लिए महिला पुलिस ही तलाशी लेंगी। इसी कारण धारा 304 के तहत अभियुक्त को न्यायालय ही वकील उपलब्ध करेगा तथा राज्य इसका व्यय वहन करेगा। इस प्रकार इन सब अधिनियमों के प्रावधानों से समाज में स्त्री सुरक्षा को बढ़ावा मिला है तथा काफी हद तक सुरक्षित होकर सशक्त हो रही है। इसके अतिरिक्त शोषण की शिकार नारियों को न्याय दिलाने के लिए स्थान-स्थान पर स्वयं सेवी संस्थायें खुल रही हैं। उनके समुचित विकास के लिये बैकों से विभिन्न प्रकार के ऋण दिये जा रहे हैं।

आज नारी जीवन के हर मोड़ पर और समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी अदम्य क्षमता एवं मानसिक परिपक्वता का परिचय दे रही हैं। 1947 एवं 1948 की नारी में और आज की नारी में बहुत अंतर है। आज नारी पढ़-लिख कर स्वतंत्र है और इस माया-दर्पण की भूल-भुलैया के खेल से बाहर आ गई है। आज उसकी सोच, उसके विचारों में इतना गहरा परिवर्तन आया है कि वह भी घर की दीवारों को तोड़ कर एवं उसकी चुनौती को सहजता से स्वीकार करके आगे बढ़ती जा रही है। पहले उसके असमंजस के कारण बहुत थे, पर आज की नारी के पास नए मूल्य,नई नैतिकता,शिक्षा,जागृति,अपने स्व की पहचान और स्वतंत्र कमाई है। आज नारी स्वयं अपने निर्णय लेती है और अपनी आत्म-समीक्षा भी करती है। पुरुष के साथ कोई प्रतिद्वंद्विता नहीं बस समान अधिकार की कामना है। स्त्री-पुरूष एक-दूसरे के पूरक है। नारी को तो बस स्वामी-दासी जैसे बन्धनों से मुक्त होना है। दोनों के एक होते हुए भी, अपने-अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व होंगे और उनके बीच बेहतर स्वस्थ, उन्मुक्त, स्वैच्छिक, सम्मानित, मानवीय सम्बन्ध होंगे। दोनों अर्थों में परस्पर सहयोगी और सहधर्मी होंगे।

आज हिन्दू महिलाओं का सामाजिक जीवन स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले के समय से बिल्कुल भिन्न है। जिन परिवारों में कुछ वर्ष पहले तक महिलाओं के लिये पर्दे में रहना अनिवार्य था, उन्हीं परिवारों की महिलाऐं आज खुली हवा में श्वास ले रही हें। मुस्लिम महिलाऐं इक्कीसवीं सदी में पदार्पण करने के बावजूद

भी धार्मिक कानूनों, रुढियों एवं परम्पराओं के बंधनों में जकड़ी हुई हैं। भारत में हिन्दू और मुस्लिम स्त्रियों की अपेक्षा ईसाई स्त्रियों की स्थिति अच्छी है। धार्मिक दृष्टि से भी ईसाई धर्म में स्त्रियों को पुरुषों के समान माना जाता है। ईसाईयों का समूचा सामाजिक वातावरण स्त्रियों के अनुकूल है। इसके अतिरिक्त उनके मार्ग में परम्परागत रुप से ऐसी बाधाएँ भी नहीं हैं जो उनकी योग्यता को कुण्ठित करके आगे बढ़ने से रोक सकें। भारतीय शिक्षित महिलाओं में ईसाई महिलाओं का प्रतिशत अधिक है। ईसाई समाज में विवाह की परम्पराऐं एवं प्रक्रिया महिलाओं के व्यक्तित्व का पूरा सम्मान करती हैं। अन्य धर्म और समाज की महिलाऐं घर की चार दीवारी से निकलने की प्रेरणा ईसाई महिलाओं से ही प्राप्त करती हैं। जिस प्रकार रीति-रिवाज, धर्म एवं नैतिकता हिन्दू समाज की महिलाओं को रूढ़िगत बेड़ियों में जकड़ा है, ईसाई समाज में महिलाओं को उनके अधिकार पूर्ण रुप से मिलते है। ईसाई समाज में कम उम्र में शादिया नहीं होती इसलिये बाल-विवाह के अभिशाप से बच जाती है, विवाह के समय लड़कियों की सहमति माँगी जाती है और यदि लड़की सहमत नहीं हो तो विवाह नहीं किया जाता। चर्च द्वारा भी महिलाओं की सहायता एवं समर्थन किया जाता है। शिक्षा तथा मेडिकल व्यवसायों में ईसाई स्त्रियां बहुतायत में पाई जाती है।

भारतीय संस्कृति में नारी को माता के पद पर प्रतिष्ठित किया गया है। वेद मन्त्रों के माध्यम से इसका यशगान किया गया है। नवरात्रों के दिनों में हम नारी शक्ति के रुप में, देवी के विभिन्न रुपों और उनकी विभिन्न और विशेष शक्तियों की पूजा-अर्चना करते है। इस प्रकार स्वयं को नारी शक्ति के संरक्षण में भी पाते हैं। भारत माता हमारी राष्ट्रीयता का प्रतीक है इसलिए हम भारत माता को महान कहकर नारी के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं।

वर्तमान में विश्व भर में महिलाओं के समुचित विकास एवं सशक्तिकरण के लिए अनुकूल वातावरण बनने लगा है। इसी आधार पर 21वीं सदी को "महिलाओं की सदी" की संज्ञा से विभूषित करने लगे हैं। अब महिलाएं हर क्षेत्र में पुरुषों के साथ बराबरी कर अपनी अन्तर्निहित क्षमता के बल पर आत्मविश्वास और साहस के साथ पुरुष प्रधान समाज में अपने वर्चस्व का अहसास कराने का सफल प्रयास कर रहीं हैं। लेकिन आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में उनकी सहभागिता तथा अन्य क्षेत्रों में भी उनकी भागीदारी बढ़ानें के लिए किए गए प्रयासों को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। यह गहराई से महसूस किया जा रहा है कि देश की आधी आबादी का यदि समुचित विकास नहीं हुआ तो प्रगति नहीं हो सकती। स्त्री- पुरुष की विकास कार्य में सहभागिता ही देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर करती है। इस दृष्टि से स्त्री और पुरुष के मध्य शक्ति का संतुलन होना

अत्यंत आवश्यक है। अब एक साधारण सा सवाल यह उठता है कि किसी भी महिला के लिए विकास अधिक महत्वपूर्ण है या सशक्तिकरण ज्यादा जरूरी है। जवाब है कि दोनो ही जरूरी हैं और दोनो ही एक दूसरे के पूरक हैं। भारत ही नहीं समूची दुनिया में महिला सशक्तिकरण का दौर चल रहा है। महिला सशक्तिकरण अर्थात महिलाओं को सशक्त बनाना। इसी दिशा में कदम आगे बढ़ाते हुए भारत सरकार द्वारा वर्ष 2001 को "महिला सशक्तिकरण वर्ष" के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया। "महिला सशक्तिकरण वर्ष" में केन्द्र सरकार द्वारा देश में पहली बार राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति बनाई गई ताकि देश में महिलाओं का विभिन्न क्षेत्रों में उत्थान, समुचित विकास और समानता के लिए आधारभूत व्यवस्थाएं निर्धारित किया जाना संभव हो सके। 31 जनवरी 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई और इसी वर्ष से ही देश में अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाने लगा।

महिला सशक्तिकरण हेतु सरकार द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में अनेकों कदम उठाए गए है जिनमें से कुछ प्रयासों के सार्थक परिणाम दिखाई देने लगे हैं। समय के साथ महिलाओं ने भी स्वयं को काफी बदला है और आज महिलाएं कैरियर के हर क्षेत्र में पहचान को लेकर काफी जागरूक हो चुकी है। अपने ही नाम से जानी जाए इसके लिए वे काफी मेहनत भी कर रही है। इस प्रकार महिला सशक्तिकरण रूपी औजार द्वारा महिलाएं सशक्त होकर एक सशक्त राष्ट्र का आधार बनती जा रही हैं। इन सशक्त महिलाओं के अनेकों उदाहरण हमारे सामने है। ये महिलाएं हैं, नैना लाल किदवई, लीना नैयर, शांताबाई, माधवी पुरी, अमृता पटेल, यशोदा देवी। ऐसे ही खेल जगत में भी महिलाओं ने राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना प्रदर्शन करते हुए सशक्त होने का परिचय दिया। साक्षी मलिक, पी0 वी0 सिंधु, दीपा मलिक, साइना नेहवाल, कृष्णा पूनिया और सानिया मिर्जा आदि महिलाओं ने अपनी सफलता का परचम लहराया है। अनेकों सशक्त महिलाओं ने राजनीतिक गलियारों से लेकर निगम क्षेत्र तक हर क्षेत्र में अपना वर्चस्व कायम किया है तथा सशक्त राष्ट्र की आधार बनी। श्रीमती सोनिया गांधी, सुषमा स्वराज, ममता बनर्जी, शीला दीक्षित, लता मंगेशकर, किरण बेदी, निरुपमा राव, मीरा कुमार, श्रीमती प्रतिभा पाटिल, ऐश्वर्या राय, दीपिका पादुकोण, सावित्री जिंदल, चंदा कोचर, अरुंधति भट्टाचार्य आदि सफल महिलाएं समाज की अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा स्त्रोत बन रही हैं। आज वह अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर चुकी हैं फिर चाहे सामाजिक, आर्थिक या राजनैतिक क्षेत्र हो। इनकी सफलता दूसरों के लिए प्रेरक हैं, यानि भविष्य में भारत को रचने की जिम्मेदारी महिलाएं बखूबी सम्भाल रही हैं।

किसी भी समाज का विकास वहाँ की नारी की स्थिति पर निर्भर करता हैं। यदि समाज में नारी की स्थिति सुदृढ़ एवं सम्मानजनक है तो निस्संदेह वह समाज मजबूत होगा और देश भी समृद्ध होगा। आज नारी ने समाज को यह दिखा दिया है कि वह न केवल पुरूष के कंधे से कंधा मिलाकर चल सकती है वरन् अपनी समस्त प्राकृतिक सहजता, कोमल भावनाओं और ममतामयी छवि के साथ शौर्य, पराक्रम एवं साहस से दुनिया के नये आयाम छूने की क्षमता भी रखती है। नारी सशक्तिकरण तभी संभव हो सकता है जब महिलाओं को सम्मान देते हुए उन्हें शैक्षिक, बौद्धिक, मानसिक, आर्थिक और वैचारिक संपन्नता देने की पहल करें, सहयोग दें और नागरिकता के सभी अधिकार उन्हें वास्तव में मिलें जो पुरुष को प्राप्त है। किसी भी समाज के विकास का सबसे पहला पायदान बेहतर शिक्षा स्तर को माना जाता है। शिक्षा के बिना न तो विकास संभव है और न ही सशक्तिकरण। महिला सशक्तिकरण की दिशा में सबसे बड़ा रोड़ा महिलाओं में शिक्षा और जागरूकता की कमी है। यदि महिलाओं को शिक्षित बना दिया जाएं तो वे अपने सामाजिक और राजनैतिक अधिकारों के प्रति जागरूक हो जाएँगी और फिर जागरूक महिलाओं को दबाना संभव नही होगा। शहरी महिलाएँ शिक्षा के प्रति संवेदनशील हुई है और वे रोजगार एवं आर्थिक स्वावलंबन की ओर उन्मुख है। ग्रामीण महिलाएँ इस दिशा में पिछडी हुई है। लेकिन सरकारी प्रयासों और संवैधानिक अधिकारों के द्वारा उन्हें विकास की मुख्य धारा में शामिल करने का काम किया जा रहा है। सरकार द्वारा बनाई गई विकास योजनाओं की भाँति यदि नारी सशक्तिकरण के सभी कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में सफल हो जाएं तो देश की अधिकांश महिलाएं स्वयं सशक्त होकर आगे बढने में समर्थ हो जाएँगी।

आज के युग की महिला निर्बलता के परिवेश से निकलकर सशक्त महिला के रूप में प्रतिबिंबित होती है व होने की कामना करती है। जब देश की अधिकांश महिलाएं स्वयं को सशक्त महसूस करेंगी तभी वह देश निर्माण में अपना योगदान दे पायेगी। महिला सशक्तिकरण में पुरुषवादी मानसिकता को सबसे अहम बाधक माना जाता है और यह काफी हद तक वास्तविक सच्चाई भी है। हमारे देश में विभिन्न क्षेत्रों में पुरुषों को महिलाओं से ज्यादा प्राथमिकता व अवसर प्राप्त होते हैं। इसी दोयम दर्जे के कारण ही महिलाओं की स्थिति आज के समय में दयनीय व चिंतनीय है।

भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने स्त्री के अस्तित्व को एक द्वन्द्वात्मक आयाम प्रदान किया है। एक ओर जहाँ औद्योगिक विकास के लिए स्त्री को सस्ते श्रम के रूप में उपयोग किया गया है, वहीं दूसरी ओर कारपोरेट जगत में विज्ञापन के माध्यम से स्त्री को उत्पाद बेचने के लिए उसका भोगपरक और परंपरावादी

दृष्टिकोण बाजार ने अपनाया है, जिसके फलस्वरूप बाजारीकरण के प्रभाव में स्त्री को ऐसी स्वतंत्रता भेंट की गयी जिसकी कीमत उसे चुकानी पड़ी और प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से शोषण, भोगवादी छवि तथा अस्वैच्छिक कार्यों का निष्पादन करना पड़ा। भूमंडलीकरण की इस नीति में स्त्रियों का शोषण प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में हो रहा है। आज के युग में समाज पहले की अपेक्षा अधिक आधुनिक होने का दावा कर रहा है, पहले की अपेक्षा अधिक जन चेतना एवं जागरण का प्रचार प्रसार पत्र पत्रिकाओं एवं मीडिया के द्वारा हो रहा है। फिर भी यह कटु सत्य है कि तथाकथित मानव समाज में अनपढ़ समाज की तुलना में नारी का शोषण अधिक हो रहा है, क्यों? विख्यात दार्शनिक डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने इस विडम्बना पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि -''मनुष्य ने आकाश में उड़ना सीख लिया है, वह समुद्र की गहराई में तैरने भी लगा है लेकिन अभी धरती पर ठीक से चलना नहीं सीख पाया है।''

आजादी के इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी महिलाओं के विरूद्ध हो रहे जघन्य अपराध व शोषण कम होने के स्थान पर लगातार बढ़ते ही जा रहे हैं। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएं यदि उन्नति के पथ पर अग्रसर हुई हैं तो दूसरी ओर एक भयावह तस्वीर भी उजागर होती है जो उनकी प्रति हो रहे अन्याय, शोषण, अत्याचार, यौनाचार, उत्पीड़न एवं भेदभाव को दर्शाती है। इसका मूल कारण महिला विरोधी मानसिकता और इसी मानसिकता के कारण स्त्रियाँ युगों-युगों से शोषित होती चली आ रही है। भूमंडलीकरण के दौर में आज भी पुरूष पुरानी परम्परागत मान्यताओं के गुलाम हैं और स्त्री इन गुलामों की गुलाम है।

वर्तमानकाल के लगभग सभी साहित्यकारों की रचनाओं में समाज द्वारा स्त्री का निरन्तर हो रहे शोषण एवं उत्पीड़न पर गहरी चिंता व्यक्त हुई है। इस दिशा में विचार-क्रान्ति के कारण महिला जागृति-आंदोलन की भूमिका में साहित्य का योगदान महत्त्वपूर्ण है। नारी लेखन ने आज नई सोच दी है। आज ऐसी सामाजिक संरचना की परिकल्पना की जा रही है जहां नारी और पुरूष का महत्त्व समान हो। सब को एक जैसी सुविधाएं मिलें। अस्सी के दशक में यह आवाज हर तरफ उठने लगी और ग्लोबलाइजेशन के कारण इसकी अनुगूँज दूर-दूर तक सुनाई भी दी। अनेक पारंपरिक प्रथाएं मान्यताएं टूटीं तथा इस दशक में नारी ने अपने क्षेत्रीय स्तर से उठ कर वैश्विक स्तर पर सुदृढ़ता से कदम रखा। आज संभावनाएं बड़ी स्पष्ट हैं और साहित्य लगातार अपना योगदान दे रहा है, खुला और स्पष्ट विश्लेषण कर रहा है। इस संदर्भ में आंकड़े भी मुखर हैं जो बताते हैं कि नारी आज सारे विश्व में, हर क्षेत्र में आगे बढ़ी है, लगातार बढ़ रही है। पंत नारी स्वतंत्रता का नारा अपनी कविता से बुलंद करते दिखाई दे रहे हैं .

मुक्त करो नारी को मानव चिर बंदिनी नारी को,
युग युग की निर्मल कारा में जननि सखी प्यारी को।

यह आश्चर्यजनक है कि आज की पढी लिखी महिलाऐं स्वतंत्रता को स्वच्छन्दता समझने की भूल कर रही है। परम्परागत संस्कारित मूल्य उन्हें अपने पाँवों की बेड़ी प्रतीत हो रहे हैं जिन्हें तोड़कर वे पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण करने का प्रयास कर रही हैं। स्वैच्छिक संगठन एक ओर तो नारी की गरिमा को समाज में पुनः प्रतिष्ठा करने के लिए कोशिश कर रहे हैं, वहीं दूसरी ओर नारी व्यक्तिगत जीवन के लक्ष्य व मूल्य को स्वयं निर्धारित करने के प्रयास में खुद को ही छल रही है। टी.वी. के छोटे पर्दा पर अथवा सिनेमा के बड़े पर्दा पर नारी को जिस रंग-रुप और अश्लील चित्रों में दर्शाया जा रहा है उससे हमारे देश की युवा पीढ़ी दिशा भ्रमित होकर गलत रास्ते अपनाने पर मजबूर हो रही है। इस सामाजिक प्रदूषण से वह अपना संयम और नैतिक स्तर भी खो रही है, इसलिये दिन-ब-दिन अपराध, अपहरण, बलात्कार, सैक्स-स्केण्डल आदि की घटनाएं हो रही है।

मूल बात है मानसिकता की, जिसमें प्रत्येक देश की हावी पुरूषवादी मानसिकता अपने चरित्र को भूमंडलीकरण और बाजार के माध्यम से प्रकट कर रही है, जिससे कई कुप्रभाव समाज में फैल रहे हैं। हजारों वर्षों से पुरुषवादी मानसिकता के अधीन स्त्री जाति उन्हीं पुरूषवादी अवधारणाओं और संस्कृति की संवाहिका बन जाती है, जिसका फायदा बाजार उठाता है। ''द सेकेंड सेक्स'' की लेखिका सिमोन द बोउवार ने कहा है कि - "स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि उसे बना दिया जाता है।'' भूमंडलीकरण में स्त्री बनाने की प्रक्रिया तेज हुई है। महिलाओं की स्थिति में सुधार तभी आ सकता है जब पुरूष अपनी मानसिकता में बदलाव लायें। इस उद्देश्य के लिए महिलाओं में शिक्षा के प्रसार की बहुत आवश्यकता है। महिलाओं में जैसे शिक्षा बढ़ेगी, उर्वरता, जनसंख्या, विकास, शिशु मृत्युदर में गिरावट और परिवार के स्वास्थ्य में सुधार होगा। शिक्षित महिला ज्यादा राजनैतिक तत्पर और अपने संवैधानिक हक के बारे में सजग रहती है और उसको पाने हेतु कार्यरत भी रहती है। सरकार ने मई 2009 में शैक्षणिक अवसरों को समान रूप से प्रदान करने एवं महिला सशक्तिकरण हेतु कुंजी कार्यक्रम घोषित की। सरकार ने स्कूली शिक्षा, स्वास्थ्य, पौष्टिक आहार, कौशल विकास और महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए महिला शिक्षा पर जोर दिया। एक नारी को शिक्षित करने का अर्थ है एक परिवार को शिक्षित करना। नारी संतान को जन्म देती है, उनका पालन-पोषण कर बड़ा करती है। माता के रूप में नारी प्रथम गुरू होती है। जार्ज हर्बर्ट के मतानुसार - "एक अच्छी माता सौ शिक्षकों के बराबर होती है, इसलिए उसका हर हालत में सम्मान करना चाहिए।" नारी के सम्मानजनक स्थान से ही

समाज प्रगतिशील और विकसित होता है। परिवार और समाज के निर्माण में नारी का स्थान महत्वपूर्ण होता है। जब समाज सशक्त और विकसित होता है, तब राष्ट्र भी मजबूत होता है। इस तरह राष्ट्र निर्माण में भी नारी केन्द्रीय भूमिका निभाती है। नेपोलियन बोनापार्ट ने नारी की महत्ता को बताते हुए कहा था कि -"मुझे एक योग्य माता दे दो मैं तुमको एक योग्य राष्ट्र दूंगा"। वहीं महाकवि जयशंकर प्रसाद ने उसे उच्चतम स्थान दिया है -

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में,
पीयूष स्त्रोत सी बहा करों, जीवन के सुन्दर समतल में।

अतः समाज के लिये स्त्री का स्वरूप,खुशहाल,शिक्षित,समझदार,व्यवहार कुशल व बुद्धिमान आदि होना अनेक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नारी पुरातन मूल्यों का त्याग कर नवीन मूल्यों को अपनाती हुई दिखाई देती है। वर्तमान में नारी को कानूनी अधिकार तो प्राप्त हुए किंतु समाज में उसे मानव का स्थान नहीं मिल सका है। यह सत्य है कि केवल कानूनों के निर्माण से महिलाओं को घर में सुरक्षा एवं शांति प्राप्त नहीं होगी अपितु स्त्रियों के सन्दर्भ में पुरुषों को अपनी मानसिकता बदलनी होगी तथा स्त्रियों के प्रति सम्मान व आदर का भाव जागृत करना होगा, तभी हम एक प्रगतिशील व नैतिक-मूल्यों से ओत-प्रोत समृद्धशाली देश के निर्माण की कामना कर सकते हैं। कालानुसार नई-नई समस्याँ आज के नारी के सामने है। आज भी यह समाज का चिंता एवं चिंतन का विषय बन गया है। महिलाओं की सुरक्षा की चिंता सम्पूर्ण मानव समाज के लिए सर्वोपरि होनी चाहिए। इस विषय पर देश ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसकी चर्चा सर्वोपरि होनी चाहिए ताकि एक समतामूलक एवं स्वच्छ समाज की स्थापना हो सके। महिलाओं को भी अपनी स्थिति में सुधार करने के लिए कदम उठाने होगें, जैसे कि वह अपनी क्षमता का बोध करें, स्वाभिमान को जागृत करें, युगीन समस्याओं को समझे, समस्याओं को समाज के समक्ष रखें, उन्हें दूर करने के लिए सामूहिक आवाज उठाएं और आगे बढ़ने के लिए स्वयं अपना रास्ता बनाएं। अतः नारी अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करें, पुरुष को दबाकर नहीं, अस्मिता की रक्षा करें, नारीत्व को दांव पर लगाकर नहीं।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1 हिन्दी अनुशीलन, भारतीय हिन्दी परिषद, इलाहाबाद।
2 हिन्दी उपन्यासों में नारी संघर्ष , डॉ. (श्रीमती) काकोली गोराई, अरूण पब्लिशिंग हाऊस प्राइवेट लिमिटेड, चण्डीगढ़।
3 स्त्री विमर्श बनाम नारी अस्मिता, डॉ. अशोक सभ्रवाल, अरूण पब्लिशिंग हाऊस प्राइवेट लिमिटेड, चण्डीगढ़।

4 शोध प्रबन्ध,भूमण्डलीकरण के दौर में महिला सशक्तिकरण, डॉ.नरेश कुमार, हिंदी जर्नल- 'IJARD' (खंड-2, अंक-3, मई 2017 ISSN 2455 . 4030)।
5 शोध प्रबन्ध, भारतीय नारी, शीला य. भंडारी, हिंदी जर्नल- 'साहित्य की समीक्षा' (खंड-1, अंक-9, अप्रैल 2014 ISSN 2347 . 2723)।
6 शोध प्रबन्ध,सशक्त महिला:सशक्त राष्ट्र का आधार,सुदेश,डॉ.सत्यवान दलाल,हिंदी जर्नल- 'IERJ' (खंड-3, अंक-5, मई 2017 E&ISSN 2454 . 9916)।
7 सप्तसिन्धु, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला-134113।
8 वागर्थ, भारतीय भाषा परिषद, कोलकाता-700017।
9 हरिगंधा, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकुला 134113।

भारतीय समाज में महिलाओं की बदलती स्थिति

* डॉ. मधुलिका श्रीवास्तव
** उमेश सिंह

भारत में महिलाओं की स्थिति सदैव एक समान नही रही है। इसमें युगानुरूप परिवर्तन होते रहे हैं। उनकी स्थिति में वैदिक युग से लेकर आधुनिक काल तक अनेक उतार-चढ़ाव आते रहे हैं तथा उनके अधिकारों में तदनरूप बदलाव भी होते रहे हैं। वैदिकयुग में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी, परिवार तथा समाज में उन्हे सम्मान प्राप्त था। उनको शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। सम्पत्ति में उनको बराबरी का हक था। सभा व समितियों में से स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेती थी। हिन्दू जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वह समान रूप से आदर और प्रतिष्ठित थीं। शिक्षा, धर्म, व्यक्तित्व और सामाजिक विकास में उसका महान योगदान था। संस्थानिक रूप से स्त्रियों की अवनति उत्तर वैदिककाल से शुरू हुई। उन पर अनेक प्रकार के निर्योग्यताओं का आरोपण कर दिया गया। उनके लिए निन्दनीय शब्दों का प्रयोग होने लगा। उनकी स्वतंत्रता और उन्मुक्तता पर अनेक प्रकार के अंकुश लगाये जाने लगे। मध्यकाल में इनकी स्थिति और भी दयनीय हो गयी। पर्दा प्रथा इस सीमा तक बढ़ गई कि स्त्रियों के लिए कठोर एकान्त नियम बना दिए गये। शिक्षण की सुविधा पूर्णरूपेण समाप्त हो गई।

नारी के सम्बन्ध में मनु का कथन ''पितारक्षति कौमारे.....न स्त्री स्वातंन्यम् अर्हति।'' वहीं पर उनका कथन ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'', भी दृष्टव्य है वस्तुतः यह समस्या प्राचीनकाल से रही है। इसमें धर्म, संस्कृति, साहित्य, परम्परा, रीतिरिवाज और शास्त्र को कारण माना गया है। भारतीय दृष्टि से इस पर विचार करने की भी जरूरत है। पश्चिम की दृष्टि विचारणीय नहीं। भारतीय सन्दर्भो में समस्या के समाधान के लिए प्रयास तो अच्छे हुए हैं। भारतीय मनीषा समानाधिकार, समानता, प्रतियोगिता की बात नहीं करती, वह सहयोगिता, सहधर्मिती, सहचारिता की बात करती है। इसी से परस्पर सन्तुलन स्थापित हो सकता है।

==========

* प्राध्यापक, समाजशास्त्र, ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
** शोध छात्र, समाजशास्त्र, ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

वैदिक एवं उत्तर वैदिक काल में महिलाओं को गरिमामय स्थान प्राप्त था। उसे देवी, सहधर्मिणी अर्द्धांगिनी, सहचरी माना जाता था। स्मृतिकाल में भी ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'' कहकर उसे सम्मानित स्थान प्रदान किया गया है। पौराणिक काल में शक्ति का स्वरूप मानकर उसकी आराधना की जाती रही है। किन्तु 11 वीं शताब्दी से 19 वीं शताब्दी के बीच भारत में महिलाओं की स्थिति दयनीय होती गई। एक तरह से यह महिलाओं के सम्मान, विकास, और सशक्तिकरण का अंधकार युग था। मुगल शासन, सामन्ती व्यवस्था, केन्द्रीय सत्ता का विनष्ट होना, विदेशी आक्रमण और शासकों की विलासितापूर्ण प्रवृत्ति ने महिलाओं को उपभोग की वस्तु बना दिया था और उसके कारण बाल विवाह, पर्दा प्रथा, अशिक्षा आदि विभिन्न सामाजिक कुरीतियों का समाज में प्रवेश हुआ, जिसने महिलाओं की स्थिति को हीन बना दिया तथा उनके निजी व सामाजिक जीवन को कलुषित कर दिया।

धर्मशास्त्र का यह कथन नारी स्वतन्त्रता का अपहरण नहीं है अपितु नारी के निर्बाध रूप से स्वधर्म पालन कर सकने के लिए बाह्य आपत्तियों से उसकी रक्षा हेतु पुरूष समाज पर डाला गया उत्तरदायित्व है। इसलिए धर्मनिष्ठ पुरूष इसे भार न मानकर, धर्मरूप में स्वीकार करना अपना कल्याणकारी कर्त्तव्य समझता है। पौराणिक युग में नारी वैदिक युग के देवी पद से उतरकर सहधर्मिणी के स्थान पर आ गई थी। धार्मिक अनुष्ठानों और याज्ञिक कर्मो में उसकी स्थिति पुरूष के बराबर थी। कोई भी धार्मिक कार्य बिना पत्नी नहीं किया जाता था। श्रीरामचन्द्र ने अश्वमेध के समय सीता की हिरण्यमयी प्रतिमा बनाकर यज्ञ किया था। यद्यपि उस समय भी अरून्धती (महर्षि वशिष्ठ की पत्नी), लोपामुद्रा, (महर्षि अगस्त्य की पत्नी), अनुसूया (महर्षि अत्रि की पत्नी) आदि नारियाँ देवी रूप की प्रतिष्ठा के अनुरूप थी तथापि ये सभी अपने पतियों की सहधर्मिणी ही थीं।

मध्यकाल– मध्यकाल में विदेशियों के आगमन से स्त्रियों की स्थिति में जबर्दस्त गिरावट आयी। अशिक्षा और रूढ़ियाँ जकड़ती गई, घर की चार दीवारी में नारी कैद होती गई और वह एक अबला, रमणी और भोग्या बनकर रह गई। आर्य समाज आदि समाज-सेवी संस्थाओं ने नारी शिक्षा आदि के लिए प्रयास आरम्भ किये। उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में भारत के कुछ समाजसेवियों जैसे राजा राम मोहन राय, दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द विद्यासागर तथा केशवचन्द्र सेन ने अत्याचारी सामाजिक व्यवस्था के विरूद्ध आवाज उठायी। इन्होंने तत्कालीन अंग्रेजी शासकों के समक्ष स्त्री पुरूष समानता, स्त्री शिक्षा, सती प्रथा पर रोक तथा बहु विवाह पर रोक की आवाज उठायी। इसी का परिणाम था 1829 में सती प्रथा निषेध अधिनियम, 1856 में हिन्दू विधवा पुर्नविवाह अधिनियम, 1891 में

एज आफ कन्सटेन्ट बिल, 1891 में बहु विवाह रोकने के लिये वेटिव मैरिज एक्ट पास कराया। इन सभी कानूनों का समाज पर दूरगामी परिणाम हुआ। वर्षों के नारी स्थिति में आयी गिरावट में रोंक लगी। आने वाले समय में स्त्री जागरूकता में वृद्धि हुई और नये नारी संगठनों का सूत्रपात हुआ जिनकी मुख्य मांग स्त्री शिक्षा, दहेज, बाल विवाह जैसी कुरीतियों पर रोक, महिला अधिकार, महिला शिक्षा की माँग की गई।

ब्रिटिशकाल– महिलाओं के पुनरोत्थान का काल ब्रिटिश काल से शुरू होता है। ब्रिटिश शासन की अवधि में हमारे समाज की सामाजिक व आर्थिक संरचनाओं में अनेक परिवर्तन किए गए। ब्रिटिश शासन के 200 वर्षों की अवधि में स्त्रियों के जीवन में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष अनेक सुधार आये। औद्योगीकरण, शिक्षा का विस्तार, सामाजिक आन्दोलन व महिला संगठनों का उदय व सामाजिक विद्वानों ने स्त्रियों की दशा में बड़ी सीमा तक सुधार की ठोस शुरूआत की।

स्वतंत्र भारत– स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तक स्त्रियों की निम्न दशा के प्रमुख कारण अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता, धार्मिक निषेध, जाति बन्धन, स्त्री नेतृत्व का अभाव तथा पुरूषों का उनके प्रति अनुचित दृष्टिकोण आदि थे। मेटसन ने हिन्दू संस्कृति में स्त्रियों की एकान्तता तथा उनके निम्न स्तर के लिए पांच कारकों को उत्तरदायी ठहराया है, यह है- हिन्दू धर्म, जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार, इस्लामी शासन तथा ब्रिटिश उपनिवेशवाद। हिन्दूवाद के आदर्शों के अनुसार पुरूष स्त्रियों से श्रेष्ठ होते हैं और स्त्रियों व पुरूषों को भिन्न-भिन्न भूमिकायें निभानी चाहिए। स्त्रियों से माता व गृहणी की भूमिकाओं की और पुरूषों से राजनीतिक व आर्थिक भूमिकाओं की आशा की जाती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से सरकार द्वारा उनकी आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक और राजनीतिक स्थिति में सुधार लाने तथा उन्हे विकास की मुख्य धारा में समाहित करने हेतु अनेक कल्याणकारी योजनाओं और विकासात्मक कार्यक्रमों का संचालन किया गया है। महिलाओं को विकास की अखिल धारा में प्रवाहित करने, शिक्षा के समुचित अवसर उपलब्ध कराकर उन्हे अपने अधिकारों और दायित्वों के प्रति सजग करते हुए उनकी सोच में मूलभूत परिवर्तन लाने, आर्थिक गतिविधियों में उनकी अभिरूचि उत्पन्न कर उन्हे आर्थिक-सामाजिक दृष्टि से आत्मनिर्भरता और स्वावलम्बन की ओर अग्रसित करने जैसे अहम उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पिछले कुछ दशकों में विशेष प्रयास किये गए हैं।

उन्नीसवीं सदी के मध्यकाल से लेकर इक्कीसवीं सदी तक आते-आते पुनः महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ और महिलाओं ने शैक्षिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, प्रशासनिक, खेलकूद आदि विविध क्षेत्रों में उपलब्धियों

के नए आयाम तय किये। आज महिलाएँ आत्मनिर्भर, स्वनिर्मित, आत्मविश्वासी हैं, जिसने पुरूष प्रधान चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की है। वह केवल शिक्षिका, नर्स, स्त्री रोग की डाक्टर न बनकर, इंजीनियर, पायलट, वैज्ञानिक, तकनीशियन, सेना, पत्रकारिता जैसे नए क्षेत्रों को अपना रही है। राजनीति के क्षेत्रों में महिलाओं ने नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। देश के सर्वोच्च राष्ट्रपति पद पर श्रीमती प्रतिभा पाटिल, लोकसभा स्पीकर के पद पर मीरा कुमार, कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी, उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री मायावती, वसुन्धरा राजे, सुषमा स्वराज, जयललिता, ममता बनर्जी, शीला दीक्षित आदि महिलाएँ राजनीति के क्षेत्र में शीर्ष पर हैं। सामाजिक क्षेत्र में भी मेधा पाटनकर, श्रीमती किरण मजूमदार, इला भट्ट, सुधा मूर्ति आदि महिलाएँ ख्यातिलब्ध हैं। खेल जगत में पी. टी. ऊषा, अंजू बाबी जार्ज, सुनीता जैन, सानिया मिर्जा, अंजू चोपड़ा आदि ने नए कीर्तिमान स्थापित किये हैं। आई.पी.एस. किरण बेदी, अंतरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्स आदि ने उच्च शिक्षा प्राप्त करके विविध क्षेत्रों में अपने बुद्धि कौशल का परिचय दिया है।

20 वीं सदी के उत्तरार्द्ध और अब 21 वीं सदी के प्रारम्भ में बराबरी व्यवहार वाले जोड़े बनने लगे हैं। नौकरी वाली नारी के साथ पुरूष की मानसिकता में बदलाव आया है। पहले नौकरी वाली औरत के पति को ''औरत की कमाई खाने वाला'' कह कर चिढ़ाया जाता था। आज यह सोच बदल चुकी है। स्त्री स्वातंत्र्य में अर्थ का योगदान अद्‌भुत है। स्त्रियां धन कमाने लगी हैं तो पुरूष की मानसिकता में भी परिवर्तन आया है। आर्थिक दृष्टि से नारी अर्थचक्र के केन्द्र की ओर बढ़ रही है। विज्ञापन की दुनियां में नारियां बहुत आगे हैं। बहुत कम ही ऐसे विज्ञापन होंगे जिनमें नारी न हो, लेकिन विज्ञापन में अश्लीलता चिन्तन का विषय है। इससे समाज में विकृतियाँ भी बढ़ रही हैं।

आज की नारी राजनीति, कारोबार, कला तथा नौकरियों में पहुंचकर नये आयाम गढ़ रही हैं। भूमण्डलीकृत दुनियां में भारत की नारी ने अपनी एक नितांत सम्मानजनक जगह कायम कर लिया है। आंकड़े दर्शाते हैं कि प्रतिवर्ष कुल परीक्षार्थियों में 50 प्रतिशत महिलाऐं डाक्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण करती हैं। आजादी के बाद लगभग 12 महिलाएं विभिन्न राज्यों की मुख्यमंत्री बन चुकी हैं। भारत के अग्रणी साफ्टवेयर उद्योग में 21 प्रतिशत पेशेवर महिलाऐं हैं। फौज, राजनीति, खेल, पायलट तथा उद्यमी सभी क्षेत्रों में जहां वर्षों पहले तक महिलाओं के होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, वहां सिर्फ नारी स्वयं को स्थापित ही नहीं कर पायी है बल्कि वहां सफल भी हो रही हैं। जवाहर लाल नेहरू ने कहा था, यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का

विकास होने पर समाज का विकास स्वतः हो जायेगा।

महिलाओं को शिक्षा देने तथा सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिये जो सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हुआ उससे समाज में एक नयी जागरूकता उत्पन्न हुई है। बाल-विवाह, भ्रूण-हत्या पर सरकार द्वारा रोक लगाने का अथक प्रयास हुआ है। शैक्षणिक गतिशीलता से पारिवारिक जीवन में परिवर्तन हुआ है। गांधीजी ने कहा था कि एक लड़की की शिक्षा एक लड़के की शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है किन्तु एक लड़की की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है। शिक्षा ही वह कुंजी है जो जीवन के सभी द्वार खोल देती है, जो कि आवश्यक रूप से सामाजिक है। शिक्षित महिलाओं को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय होने में बहुत मदद मिली। महिलाएं अपनी स्थिति व अपने अधिकारों के विषय में सचेत होने लगी। शिक्षा ने उन्हें आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक न्याय तथा पुरूष के साथ समानता के अधिकारों की माँग करने को प्रेरित किया।

संवैधानिक प्रावधान– संवैधानिक अधिकारों में विभिन्न प्रावधानों के द्वारा महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार मिलने से उनकी स्थिति में परिवर्तन हुआ। महिलाओं की विवाह विच्छेद, परिवार की सम्पत्ति में पुरूषों के समान अधिकार दिये गये। दहेज पर कानूनी प्रतिबन्ध लगा तथा उन व्यक्तियों के लिये कठोर दण्ड की व्यवस्था की गयी जो दहेज की मांग को लेकर महिलाओं का उत्पीड़न करते हैं। अब सरकार लिव इन पर विचार कर रही है। संयुक्त परिवारों के विघटन होने से जैसे-जैसे एकाकी परिवार की संख्या बढ़ी इनमें न केवल महिलाओं को सम्मानित स्थान मिलने लगा बल्कि लड़कियों की शिक्षा को भी एक प्रमुख आवश्यकता के रूप में देखा जाने लगा। वातावरण अधिक समताकारी होने से महिलाओं को अपने व्यक्तित्व का विकास करने के अवसर मिलने लगे।

महिला शिक्षा समाज का आधार है। समाज द्वारा पुरूष को शिक्षित करने का लाभ केवल मात्र पुरूष को होता है जबकि महिला शिक्षा का स्पष्ट लाभ परिवार, समाज एवं सम्पूर्ण राष्ट्र को होता है। चूंकि महिला ही माता के रूप में बच्चे की प्रथम अध्यापक बनती है। महिला शिक्षा एवं संस्कृति को सभी क्षेत्रों में पर्याप्त समर्थन मिला। यद्यपि कुछ समय तक महिला शिक्षा के समर्थक कम किन्तु आज समय एवं परिस्थितियों ने महिला शिक्षा को अनिवार्य बना दिया है।

स्त्री और मुक्ति आज भी नदी के दो किनारे की तरह है जो कभी मिल नहीं पाती, सतही तौर पर देखा जाये तो लगता है कि भारत ही नहीं, विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाती हुई स्त्रियों ने अपनी पुरानी मान्यतायें बदली हैं। आज की स्त्री की अस्मिता का प्रश्न मुखर होता जा रहा है। अपने अस्तित्व को बचाये रखने

के लिये संघर्ष करती हुई स्त्रियों ने लम्बा रास्ता तय कर लिया है, परन्तु आज भी एक बड़ा हिस्सा सदियों से सामाजिक अन्याय का शिकार है। ''जब-जब स्त्री अपनी उपस्थिति दर्ज कराना चाहती है तब तब जाने कितने रीति-रिवाजों, परम्पराओं पौराणिक आख्यानों की दुहाई देकर उसे गुमनाम जीवन जीने पर विवश कर दिया जाता है।''

वस्तुतः इक्कीसवीं सदी महिला सदी है। वर्ष 2001 महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया। इसमें महिलाओं की क्षमताओं और कौशल का विकास करके उन्हें अधिक सशक्त बनाने तथा समग्र समाज को महिलाओं की स्थिति और भूमिका के संबंध में जागरूक बनाने के प्रयास किये गए। महिला सशक्तिकरण हेतु वर्ष 2001 में प्रथम बार ''राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति'' बनाई गई जिससे देश में महिलाओं के लिये विभिन्न क्षेत्रों में उत्थान और समुचित विकास की आधारभूत विशेषताए निर्धारित किया जाना संभव हो सके। इसमें आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में पुरूषों के साथ समान आधार पर महिलाओं द्वारा समस्त मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं का सैद्धान्तिक तथा वस्तुतः उपभोग पर तथा इन क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी व निर्णय स्तर तक समान पहुँच पर बल दिया गया है।

आज देखने में आया है कि महिलाओं ने स्वयं के अनुभव के आधार पर, अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के आधार पर अपने लिए नई मंजिलें, नये रास्तों का निर्माण किया है। क्या मात्र इस आधार पर उस सफलता के पीछे क्षणांश भी किसी पुरुष के हाथ होने की सम्भावना को नकार दिया जायेगा? यदि नहीं तो फिर समस्या कहाँ है? मैं कौन हूँ का प्रश्न अभी भी उत्तर की आस में क्यों खड़ा है?

जवाब हमारे सभी के अन्दर ही है पर उसको सामने लाने में हम घबराते हुए दिखते हैं। स्त्री को एक देह से अलग एक स्त्री के रूप में देखने की आदत को डालना होगा। स्त्री के कपड़ों के भीतर से नग्नता को खींच-खींच कर बाहर लाने की परम्परा से निजात पानी होगी। कोड ऑफ कंडक्ट किसी भी समाज में व्यवस्था के संचालन में तो सहयोगी हो सकते हैं किन्तु इसके अपरिहार्य रूप से किसी भी व्यक्ति पर लागू किये जाने से इसके विरोध की सम्भावना उतनी ही प्रबल हो जाती है जितनी कि इसको लागू करवाने की। क्या बिकाऊ है और किसे बिकना है, अब इसका निर्धारण स्वयं बाजार करता है, हमें तो किसी को बिकने और किसी को जोर जबरदस्ती से बिकने के बीच में आकर खड़े होना है। किसी की मजबूरी किसी के लिए व्यवसाय न बने यह समाज को ध्यान देना होगा।

नग्नता और शालीनता के मध्य की बारीक रेखा समाज स्वयं बनाता और

स्वयं बिगाड़ता है। एक नजर में उसका निर्धारक पुरुष होता है तो दूसरी निगाह उसका निर्धारक स्त्री को मानती है। उचित और अनुचित, न्याय और अन्याय, विवेकपूर्ण और अविवेकपूर्ण, स्वाधीनता और उच्छृंखलता, दायित्व और दायित्वहीनता, शीलता और अश्लीलता के मध्य के धुँधलके को साफ करना होगा। समाज में सरोकारों का रहना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि किसी भी स्त्री-पुरुष का। सामाजिकता के निर्वहन में स्त्री-पुरुष को समान रूप से सहभागी बनना होगा और इसके लिए स्त्री पुरुष को अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं समझे और पुरुष भी स्त्री को एक देह नहीं, स्त्री रूप में एक इंसान स्वीकार करे। स्त्री की आज़ादी और खुले आकाश में उड़ान की शर्त उत्पादन में उसकी भूमिका हो। स्त्री की असली आज़ादी तभी होगी जब उसके दिमाग की स्वीकार्यता हो, न कि केवल उसकी देह की। अन्ततः कहीं ऐसा न हो कि स्त्री स्वतन्त्रता और स्वाधीनता का पर्व सशक्तिकरण की अवधारणा पर खड़ा होने के पूर्व ही विनष्ट होने लगे और आने वाली पीढ़ी फिर वही सदियों पुराना प्रश्न दोहरा दे कि 'मैं कौन हूँ?'

वर्तमान समय में भारतीय सरकार द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन किया जा रहा है, लेकिन इन योजनाओं का क्रियान्वयन निचले स्तर तक उचित ढंग से न पहुँच सकने के कारण स्त्रियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। यह सत्य है कि वर्तमान समय में स्त्रियों की स्थिति में काफी बदलाव आए हैं, लेकिन फिर भी वह अनेक स्थानों पर पुरुष-प्रधान मानसिकता से पीड़ित हो रही है। इस सन्दर्भ में युगनायक एवं राष्ट्रनिर्माता स्वामी विवेकानन्द का यह कथन उल्लेखनीय है- ''किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर है, वहाँ की महिलाओं की स्थिति। हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए, जहाँ वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सकें। हमें नारीशक्ति के उद्धारक नहीं, वरन् उनके सेवक और सहायक बनना चाहिए। भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भाँति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। आवश्यकता है उन्हें उपयुक्त अवसर देने की। इसी आधार पर भारत के उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएँ सन्निहित हैं।''

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. दोशी एस.एल. एवं जैन पी.सी.- (2002) भारतीय समाज संरचना और परिवर्तन, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, जयपुर
2. डॉ. विमलचन्द्र पाण्डेय- भारतवर्ष का सामाजिक इतिहास पृ. 100
3. डॉ. एम.एस. लावानियाँ- भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर
4. राजकुमार डॉ0 (2005) नारी के बदले आयाम, अर्जुन पब्लि शग हाउस

5. भारतीय संविधान, अनु0 14,15,16,19,21,23,39
6. गुप्ता कमलेश कुमार, महिला सशक्तिकरण,बुक एनक्लेव, जयपुर
7. सह करण बहादुर, महिला अधिकार व सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र, मार्च 2006
8. सुरेश लाल श्रीवास्तव, राष्ट्रीय महिला आयोग, कुरूक्षेत्र, मार्च 2007
9. गौतम हरेन्द्र राज, महिला अधिकार संरक्षण, कुरूक्षेत्र मार्च 2006
10. व्यास, जय प्रकाश, (2003) नारी शोषण, ज्ञानदा प्रकाशन, 2003

नारी की स्थिति वैदिक काल से वर्तमान तक

* प्रो. मंजरी अवस्थी

भारत में महिलाओं की स्थिति सदैव एक समान नहीं रही है। इसमें युगानुरूप परिवर्तन होते रहे हैं। उनकी स्थिति में वैदिक युगानुरूप परिवर्तन होते रहे हैं। उनकी स्थिति में वैदिक युग से लेकर आधुनिक काल तक अनेक उतार-चढ़ाव आते रहे हैं तथा उनके अधिकारों में तदनरूप बदलाव भी होते रहें हैं। वैदिक युग में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी, परिवार तथा समाज में उन्हे सम्मान प्राप्त था। उनकों शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। सम्पत्ति में उनको बराबरी का हक था। सभा व समितियों में से स्वतंत्रतापूर्वक भाग लेती थी तथापि ऋगवेद में कुछ ऐसी उक्तियां भी हैं जो महिलाओं के विरोध में दिखाई पड़ती हैं। वैदिक काल में भी कहीं न कहीं स्त्रियां नीचली दृष्टि से देखी जाती थीं। फिर भी हिन्दू जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वह समान रूप से आदरणीय और प्रतिष्ठित थीं। शिक्षा, धर्म, व्यक्तित्व और सामाजिक विकास में उसका महान योगदान था। संस्थानिक रूप से स्त्रियों की अवनति उत्तर वैदिककाल से शुरू हुई उन पर अनेक प्रकार के निर्योग्यताओं का आरोपण कर दिया गया। उनके लिए निन्दनीय शब्दों का प्रयोग होने लगा। उनकी स्वतंत्रता और उन्मुक्तता पर अनेक प्रकार के अंकुश लगाये जाने लगे। मध्यकाल में इनकी स्थिति और भी दयनीय हो गयी। पर्दा प्रथा इस सीमा तक बढ़ गई कि स्त्रियों के लिए कठोर एकान्त नियम बना दिए गये। शिक्षण की सुविधा पूर्णरूपेण समाप्त हो गई।

नारी के सम्बन्ध में मनु का कथन पितारक्षति कोमारे ..... न स्त्री स्वातंन्यम् अर्हति। वहीं पर उनका कथन ष्यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते यत्र देवताष, भी दृष्टव्य है वस्तुतः यह समस्या प्राचीनकाल से रही है। इसमें धर्म, संस्कृति साहित्य, परम्परा, रीतिरिवाज और शास्त्र को कारण माना गया है। भारतीय दृष्टि से इस पर विचार करने की जरूरत है। भारतीय सन्दर्भो में समस्या के समाधान के लिए प्रयास हो तो अच्छे हुए हैं। भारतीय मनीषी समानाधिकार, समानता, प्रतियोगिता की बात नहीं करती वह सहयोगिता, सहधर्मिणी, सहचारिता की बात करती है। इसी से परस्पर सन्तुलन स्थापित हो सकता है। वैदिक एवं उत्तर

==========

* सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी (म.प्र.)

वैदिक काल में महिलाओं को गरिमामय स्थान प्राप्त था। उसे देवी, सहधर्मिणी, अर्ध्दांगिनी, सहचरी माना जाता था। स्मृतिकाल में थी यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता कहकर उसे सम्मानित स्थान प्रदान किया गया है। पौराणिक काल में शक्ति का स्वरूप मानकर उसकी आराधना की जाती रही है। किन्तु 11वीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी के बीच भारत में महिलाओं की स्थिति दयनीय होती गई। एक तरह से यह महिलाओं के सम्मान, विकास और सशक्तिकरण का अंधकार युग था। मुगल शासन, सामन्ती व्यवस्था, केन्द्रीय सत्ता का विनष्ट होना, विदेशी आक्रमण और उसके कारण बाल विवाह, पर्दा प्रथा, अशिक्षा आदि विभिन्न सामाजिक कुरीतियों का समाज में प्रवेश हुआ, जिसने महिलाओं की स्थिति को हीन बना दिया तथा उनके निजी व सामाजिक जीवन को कलुषित कर दिया। धर्मशास्त्र का यह कथन नारी स्वतन्त्रता का अपहरण नहीं है अपितु नारी के निर्बाध रूप से स्वधर्म पालन कर सकने के लिए बाह्य आपत्तियों से उसकी रक्षा हेतु पुरूष इसे भार न मानकर, धर्मरूप में स्वीकार अपना कल्याणकारी कर्तव्य समझता है। पौराणिक युग में नारी वैदिक युग के दैवी पद से उतरकर सहधर्मिणी के स्थान पर आ गई थी। धार्मिक अनुष्ठानों ओर याज्ञिक कर्मो में उसकी स्थिति पुरूष के बराबर थी। श्रीरामचन्द्र ने अश्वमेध के समय सीता की हिरण्यमयी प्रतिमा बनाकर यज्ञ किया था। यद्यपि उस समय भी अरून्धती (महर्षि वशिष्ठ की पत्नी) लोपामुद्रा (महर्षि अगस्त्य की पत्नी) अनुसूइया (महर्षि अत्रि की पत्नी) आदि नारियॉ दैवी रूप की प्रतिष्ठा के अनुरूप थी तथापि ये सभी अपने पतियों की सहधर्मिणी ही थीं।

मध्यकाल में विदेशियों के आगमन से स्त्रियों की स्थिति में जबर्दस्त गिरावट आयी। अशिक्षा और रूढियां जकड़ती गई घर की चहार दीवारी में कैद होती गई और नारी एक अबला, रमणी और भोग्या बनकर रह गई। आर्य समाज आदि समाज सेवी संस्थाओं ने नारी शिक्षा आदि के लिए प्रयास आरम्भ किया। उन्नीसवी सदीं के पूर्वार्द्ध में भारत के कुछ समाजसेवियों जैसे राजाराम मोहन राय, दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द विद्यासागर तथा केशवचन्द्र सेन ने अत्याचारी सामाजिक व्यवस्था के विरूध्द आवाज उठायी। इन्होनें तत्कालीन अंग्रेजी शासकों के समक्ष स्त्री पुरूष समानता, स्त्री शिक्षा, सती प्रथा पर रोंक तथा बहु विवाह पर रोंक की आवाज उठायी। इस का परिणाम था सती प्रथा निषेध अधिनियम,1891, एज आफ कन्सटेन्ट बिल,1891, बहु विवाह रोकने के लिये वेटिव मैरिज एक्ट पास कराया। इन सभी कानूनों का समाज पर दूरगामी परिणाम हुआ। वर्षो के नारी स्थिति में आयी गिरावट में रोक लगी। आने वाले समय में स्त्री जागरूकता में वृद्धि हुई और नये नारी संगठनों का सूत्रपात हुआ जिनकी मुख्य मांग स्त्री शिक्षा, दहेज,बाल विवाह जैसी प्रथाओं पर रोंक की मॉग की गई। महिलाओं के

पुनरोत्थान का काल ब्रिटिश काल से शुरू होता है। ब्रिटिश शासन की अवधि में हमारे समाज की सामाजिक व आर्थिक संरचनाओं में अनेक परिवर्तन किए गए। ब्रिटिश शासन के 200 वर्षों की अवधि में स्त्रियों के जीवन में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष अनेक सुधार आये। औद्योगीकरण, शिक्षा का विस्तार, सामाजिक आन्दोलन व महिला संगठनों का उदय व स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व तक स्त्रियों की निम्न दशा के प्रमुख कारण अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता, धार्मिक निषेध, जाति बन्धन, स्त्री नेतृत्व का अभाव तथा पुरूषों का उनके प्रति अनुचित दृष्टिकोण आदि थे। मेटसन ने हिन्दू संस्कृति में स्त्रियों की एकान्तता तथा उनके निम्न स्तर के लिए पांच कारकों को उत्तरदायी ठहराया है, यह है - हिन्दू धर्म, जाति व्यवस्था, संयुक्त परिवार, इस्लामी शासन तथा ब्रिटिश उपनिवेशवाद। हिन्दूवाद के आदर्शों के अनुसार पुरूष स्त्रियों से श्रेष्ठ होते हैं और स्त्रियों व पुरूषों को भिन्न भिन्न भूमिकाएं निभानी चाहिए। स्त्रियों से माता व गृहणी की भूमिकाओं की और पुरूषों से राजनीतिक व आर्थिक भूमिकाओं की आशा की जाती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से सरकार द्वारा उनकी आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक और राजनीतिक स्थिति में सुधार लाने तथा उन्हे विकास की मुख्य धारा में समाहित करने हेतु अनेक कल्याणकारी योजनाओं और विकासात्मक कार्यक्रमों का संचालन किया गया है। महिलाओं को विकास की अखिल धारा में प्रवाहित करने, शिक्षा के समुचित अवसर उपलब्ध कराकर उन्हे अपने अधिकारों और दायित्वों के प्रति सजग करते हुए उनकी सोच में मूलभूत परिवर्तन लाने, आर्थिक गतिविधियों में उनकी अभिरूचि उत्पन्न कर उन्हे स्वावलम्बन की ओर अग्रसिति करने जैसे अहम उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पिछले कुछ दशकों में विशेष प्रयास किये गए है।

उन्नीसवी सदी के मध्यकाल से लेकर इक्कीसवीं सदी तक आते आते पुनः महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ और महिलाओं ने शैक्षिक, राजनीतिक सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, प्रशासनिक, खेलकूद आदि विविध क्षेत्रों में उपलब्धियों के नए आयाम तय किये। आज महिलाएँ आत्मनिर्भर, स्वनिर्मित, आत्मविश्वासी हैं, जिसने पुरूष प्रधान चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की है। वह केवल शिक्षिका, नर्स, स्त्री रोग की डाक्टर न बनकर, इंजीनियर, पायलट, वैज्ञानिक, तकनीशियन, सेना, पत्रकारिता जैसे नए क्षेत्रों को अपना रही है। राजनीति के क्षेत्रों में महिलाओं ने नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं।

देश के सर्वोच्च राष्ट्रपति पद पर श्रीमती प्रतिभा पाटिल, लोकसभा स्पीकर के पद पर मीरा कुमार, कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी, उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री मायावती, वसुन्धरा राजे, सुषमा स्वराज, जयललिता, ममता बनर्जी, शीला दीक्षित

आदि महिलाएँ राजनीति के क्षेत्र मं शीर्ष पर हैं। सामाजिक क्षेत्र में भी मेधा पाटकर, श्रीमती किरण मजूमदार, इलाभट्ट, सुधा मूर्ति आदि महिलाएँ ख्यातिलब्ध हैं। खेल जगत में पी.टी. उषा, अंजू बाबी जॉर्ज, सुनीता जैन, सानिया मिर्जा, अंजू चोपड़ा आदि ने नए कीर्तिमान स्थापित किये हैं। आई.पी.एस. किरण बेदी, अंतरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्य आदि ने उच्च शिक्षा प्राप्त करके विविध क्षेत्रों मे अपने बुध्दि कौशल का परिचय दिया है।

20 वीं सदी के उत्तरार्ध्द और अब 21 वीं सदी के प्रारम्भ में बराबरी व्यवहार वाले जोड़े बनने लगे हैं। नौकरी वाली नारी के साथ पुरूष की मानसिकता में बदलाव आया है। पहले नौकरी वाली औरत के पति को औरत की कमाई खाने वाला कह कर चिढ़ाया जाता था। अब यह सोच बदल चुकी है। स्त्री स्वातंत्र्य में अर्थशास्त्र का योगदान अद्‌भुत है। स्त्रियां धन कमाने लगीं हैं तो पुरूष की मानसिकता में भी परिवर्तन आया है। आर्थिक दृष्टि से नारी अर्थचक्र के केन्द्र की ओर बढ़ रही है। विज्ञापन की दुनियां में नारियां बहुत आगे हैं। बहुत कम ही ऐसे विज्ञापन होंगे जिनमें नारी न हो लेकिन विज्ञापन में अश्लीलता चिन्तन का विषय है। इससे समाज में विकृतियां भी बढ़ रही हैं। अर्थ ने समाजशास्त्र को बौना बना दिया है।

आज की नारी राजनीति, कारोबार, कला तथा नौकरियों में पहुंचकर नये आयाम गढ़ रही है भूमण्डलीकृत दुनियां में भारत और यहां की नारी ने अपनी एक नितांत सम्मानजनक जगह कायम कर ली है। आंकडे दर्शाते हैं कि प्रतिवर्ष कुल परीक्षार्थियों में 52 प्रतिशत महिलाएं डाक्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण करती हैं। आजादी के बाद लगभग 12 महिलाएं विभिन्न राज्यों की मुख्यमंत्री बन चुकी हैं। भारत के अग्रणी साफ्टवेयर उद्योग में 21 प्रतिशत पेशेवर महिलाऐं हैं। फौज ,राजनीति, खेल, पालयट तथा उद्यमी सभी क्षेत्रों में जहां वर्षो पहले तक महिलाओं के होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, वहां सिर्फ नारी स्वयं को स्थापित ही नहीं कर पायी है बल्कि वहां सफल भी हो रही हैं।

यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वत: हो जायेगा। जवाहर लाल नेहरू ने महिलाओं को शिक्षा देने तथा सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिये जो सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हुआ उससे समाज में एक जागरूकता उत्पन्न हुई है। बाल विवाह भ्रूण हत्या पर सरकार द्वारा रोक लगाने का अथक प्रयास हुआ है। शैक्षणिक गतिशीलता से पारिवारिक जीवन में परिवर्तन हुआ है। गांधीजी ने कहा था कि एक लड़की की शिक्षा एक लड़के की शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है क्यों लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है किन्तु एक लड़की

की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाता है। शिक्षा ही वह कुंजी है जो जीवन के वह सभी द्वार खोल देती है जो कि आवश्यक रूप से सामाजिक है। शिक्षित महिलाओं को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय होने में बहुत मदद मिली। महिलाएं अपनी स्थिति व अपने अधिकारों के विषय में सचेत होने लगी। शिक्षा ने उन्हें आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक न्याय तथा पुरूष के साथ समानता के अधिकारों की मांग करने को प्रेरित किया।

संवैधानिक अधिकारों में विभिन्न कानूनों के द्वारा महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार मिलने से उनकी स्थिति में परिवर्तन हुआ। महिलाओं को विवाह विच्छेदन, परिवार की सम्पत्ति में पुरूषों के समान अधिकार दिये गये । दहेज पर कानूनी प्रतिबन्ध लगा तथा उन व्यक्तियों के लिये कठोर दण्ड की व्यवस्था की गयी जो दहेज की मांग को लेकर महिलाओं का उत्पीड़न करते हैं। अब सरकार 'लिव इन' पर विचार कर रही है। संयुक्त परिवारों के विघटन होने से जेसे जैसे एकाकी परिवार की संख्या बढ़ी इनमें न केवल महिलाओं को सम्मानित स्थान मिलने लगा बल्कि लड़कियों की शिक्षा को भी एक प्रमुख आवश्यकता के रूप में देखा जाने लगा। वातावरण अधिक समताकारी होने से महिलाओं को अपने व्यक्तित्व का विकास करने के अवसर मिलने लगे।

महिला शिक्षा समाज का आधार है। समाज द्वारा पुरूष को शिक्षित करने का लाभ केवल मात्र पुरूष होता है जबकि महिला शिक्षा का स्पष्ट लाभ परिवार, समाज एवं सम्पूर्ण राष्ट्र को होता है चूंकि महिला ही माता के रूप में बच्चे की प्रथम अध्यापक बनती है। महिला शिक्षा एवं संस्कृति को सभी क्षेत्रों में पर्याप्त समर्थन मिला। यद्यपि कुछ समय तक महिला शिक्षा के समर्थक कम किन्तु आज समय एवं परिस्थितियों ने महिला शिक्षा को अनिवार्य बना दिया है।

स्त्री और मुक्ति आज भी नदी के दो किनारे की तरह है जो कभी मिल नहीं पाती सतही तौर पर देखा जाये तो लगता है कि भारत ही नहीं, विश्व पटल पर अपनी पहचान बनाती हुई स्त्रियों ने अपनी पुरानी मान्यतायें बदली हैं। आज की स्त्री की अस्मिता का प्रश्न मुखर होता जा रहा है। अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिये संघर्ष करती हुई स्त्रियों ने लम्बा रास्ता तय कर लिया है, परन्तु आज भी एक बड़ा हिस्सा सदियों से सामाजिक अन्याय का शिकार है। जब जब स्त्री अपनी उपस्थिति दर्ज कराना चाहती है तब तब जाने कितने रीति रिवाजों, परम्पराओं और पौराणिक आख्यानों की दुहाई देकर उसे गुमनाम जीवन जीने पर विवश कर दिया जाता है।

वस्तुतः इक्कीसवीं सदी महिला सदी है। वर्ष 2001 महिला सशाक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गाया। इसमें महिलाओं की क्षमताओं और कौशल का

विकास करके उन्हें अधिक सशक्त बनाने तथा समग्र समाज को महिलाओं की स्थिति और भूमिका के संबंध में जागरूक बनाने के प्रयास किये गए। महिला सशक्तिकरण हेतु वर्ष 2001 में प्रथम बार प्रथम बार राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति बनाई गई जिससे देश में महिलाओं के लिये विभिन्न क्षेत्रों में उत्थान और समुचित विकास की आधारभूत विशेषताए निर्धारित किया जाना संभव हो सके। इसमें आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में पुरूषों के साथ समान आधार पर महिलाओं द्वारा समस्त मानवाधिकार तथा मौलिक स्वतंत्रताओं का सैद्धान्तिक तथा वस्तुतः उपभोग पर तथा इन क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी व निर्णय स्तर तक समान पहुँच पर बल दिया गया है।

आज देखने में आया है कि महिलाओं ने स्वयं के अनुभव के आधार पर, अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के आधार पर अपने लिए नई मंजिलें, नये रास्तों का निर्माण किया है। क्या मात्र इस आधार पर उस सफलता के पीछे क्षणांश भी किसी पुरूष के हाथ होने की सम्भावना को नकार दिया जायेगा ? यदि नही तो फिर समस्या कहाँ है? मैं कौन हूँ का प्रश्न अभी भी उत्तर की आस में क्यों खड़ा है?

जवाब हमारे सभी के अन्दर ही है पर उसको सामने लाने में हम घबराते भी हैं। स्त्री को एक देह से अलग एक स्त्री के रूप में देखने की आदत को डालना होगा। स्त्री के कपडों के भीतर से नग्नता को खींच खींच कर बाहर लाने की परम्परा से निजात पानी होगी। कोड ऑफ कंडक्ट किसी भी समाज में व्यवस्था के संचालन में तो सहयोगी हो सकते हैं किन्तु इसके अपरिहार्य रूप से किसी भी व्यक्ति पर लागू किये जाने से इसके विरोध की सम्भावना उतनी ही प्रबल हो जाती है जितनी कि इसको लागू करवाने की। क्या बिकाऊ है और किसे बिकना है, अब इसका निर्धारण स्वयं बाजार करता हैं, किसी की मजबूरी किसी के लिए व्यवसाय न बने यह समाज को ध्यान देना होगा।

नग्नता और शालीनता के मध्य की बारीक रेखा समाज स्वयं बनाता और स्वयं बिगाडता है। एक नजर में उसका निर्धारण पुरूष होता है तो दूसरी निगाह उसका निर्धारक स्त्री को मानती है। उचित अविवेकपूर्ण, स्वाधीनता और उच्चश्रृंखला, दायित्व और दायित्वहीनता अश्लीलता और अश्लीलता मे मध्य धुँध को साफ करना होगा। समाज में सरोकारों का रहना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि किसी भी स्त्री-पुरूष का। सामाजिकता के निर्वहन में स्त्री पुरूष को समान रूप से सहभागी बनना होगा और इसके लिये स्त्री पुरूष को अपना प्रतिद्वंद्वी नही समझे और पुरूष भी स्त्री को देह नही, स्त्री रूप में एक इंसान स्वीकार करे स्त्री की आजादी और खुले आकाश में उडान की शर्त उत्पादन में उसकी भूमिका हो स्त्री

की असली आजादी तभी होगी जब उसके दिमाग की स्वीकार्यता हो, न कि केवल उसकी देह की। अंततः कही ऐसा हो कि स्त्री स्वतंत्रता और स्वाधीनता का पर्व सशक्तिकरण की अवधारणा पर खडा होने के पूर्व विनिष्ट होने लगे और आने वाली पीढी फिर वही सदियों पुराना प्रश्न दोहरा दे कि मैं कौन हूँ ?

वर्तमान समय में भारत सरकार के द्वारा महिलाओं के उत्थान के लिये अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन तो किया जा रहा है लेकिन इन योजनाओं का क्रियान्वयन निचले स्तर तक उचित ढंग से न पहुँच सकने के कारण स्त्रियों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। यह सत्य है कि वर्तमान समय में स्त्रियों की स्थितियों में काफी बदलाव आये है लेकिन फिर भी वह अनेक स्थानों पर पुरूष प्रधान मानसिकता से पीड़ित हो रही है। इस संदर्भ में युग नायक एवं राष्ट्रनिर्माता स्वामीविवेकानंद यह कथन उल्लेखनीय है किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर है वहां कि महिलाओं की स्थिति हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिये जहां वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सके।

हमें नारीशक्ति के उद्धारक नहीं वरन्
उनके सेवक और सहायक बनना चाहिये
भारतीय नारियां संसार कि अन्य किन्हीं
भी नारियों की भाति अपनी समस्याओं को
सुलझाने की क्षमता रखती है, आवश्यकता है
उन्हें उपयुक्त अवसर देने की इसी आधार
पर भारत के उज्ज्वल भविष्य की संभावनायें
सन्निहित है।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. श्रीजेकुमार डा. नारी के बदले आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस 2005
2. भारतीय संविधान, अनु. 14, 15, 16, 19, 21, 23, 39
3. गुप्ता कमलेश कुमार, महिला सशक्तिकरण,बुक एनक्लेव, जयपुर
4. सिंह करण बहादुर, महिला अधिकार व सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र, मार्च 2006
5. सुरेश लाल, श्रीवास्तव, राष्ट्रीय महिला आयोग, कुरूक्षेत्र, मार्च 2007
6. गौतम हरेन्द्र राज, महिला अधिकार संरक्षण, कुरूक्षेत्र मार्च 2006
7. व्यास, जय प्रकाश, नारी शोषण ज्ञानदा प्रकाशन, 2003
8. शैलजा नागेन्द्र, वोमेन्स राइट्स, ए डी वी पब्लिशर्स जयपुर, 2006

भारतीय समाज और महिलायें- एक सामाजिक मूल्यांकन (प्राचीन काल से वर्तमान तक)

* डॉ. मधु

''गंगासमः तीर्थनास्ति, नास्ति विष्णुसमः प्रभुः।
नास्ति शम्भूसमः पूज्यो, नास्ति मातृसमो गुरूः।।''

अर्थात् गंगा के समान कोई तीर्थ नहीं है विष्णु के समान कोई भगवान नहीं है और शिव के समान कोई पूजनीय नहीं तथा वात्सल्य स्रोतस्विनी मातृहृदय नारी के बराबर कोई गुरू नहीं है, जो इस लोक और परलोक के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती है इसीलिए सर्वव्यापी ईश्वर ने नारी को जगत्जननी के नाम से भी सुशोभित किया है।

किसी भी समाज की संरचना की श्रेष्ठता या हीनता का निर्णय इस बात से होता है कि उस समाज में महिलाओं की स्थिति कैसी है? यहाँ स्थिति से तात्पर्य समूह में व्यक्ति के स्थान के परिचय से है। स्थिति किसी व्यक्ति की समूह में पद या प्रतिष्ठा से है। स्थिति शब्द के इसी अर्थ के संदर्भ में हम कह सकते हैं कि ''महिलाओं की स्थिति से तात्पर्य समाज में महिलाओं के स्थान, उनकी प्रतिष्ठा, उनके सम्मान एवं उनके गौरव से है।'' उस समाज में पुरूषों की तुलना में उनकी दशा कैसी है? भारत में महिलाओं की स्थिति इतिहास के पृष्ठ यदि हम पलटकर देखते हैं तो हमें विदित होता है कि उनकी स्थिति, में समय-समय पर कई उतार चढ़ाव आये हैं।

1. **वैदिक युग और नारी**- वैदिक युग में स्त्रियों की स्थिति बहुत उच्च थी। भारतीयों के सभी आदर्श स्त्री रूप में पाये जाते थे अर्थात् नारी में विद्या, श्रद्धा, पवित्रता तथा कला वो सभी कुछ हैं जो इस संसार में दृष्टिगोचर होता है। इसके अतिरिक्त नारी के मूर्ति-मान, कामधेनु, अन्नपूर्णा और वो सब कुछ है जो मानव प्रणाली के समस्त अभावों, कष्टों और संकटों के निवारण करने

---

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, श्री रामेश्वर दास अग्रवाल कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हाथरस, उत्तरप्रदेश

में समर्थ है। वैदिक युग में महिलाओं की स्थिति अत्यन्त उन्नत थी। पिता का परिवार हो या पति का परिवार दोनों ही स्थानों पर उन्हें वांछित सम्मान प्राप्त था। यद्यपि पितृ-प्रधान पारिवारिक प्रणाली के कारण पुत्र की उत्पत्ति को महत्वपूर्ण व अनिवार्य माना जाता था, लेकिन पुत्री के जन्म को भी अशुभ नहीं माना जाता था।

विवाह के पश्चात स्त्रियों की स्थिति और भी अच्छी हो जाती थी। इस युग में महिलाओं को समृद्धि की देवी माना जाता था। धार्मिक कार्यों में भी महिलाओं का उतना ही महत्व था, जितना कि पुरूषों का, इसीलिए पत्नी को सहधर्मिणी कहा जाता था। यहॉ तक कि वैवाहिक अधिकारों का प्रश्न है तो स्वयंवर प्रथा के वर्णन से ये स्पष्ट होता है कि लड़की को स्वयं अपने जीवन साथी का चुनाव करने का अधिकार प्राप्त था। विधवाओं के पुर्नविवाह का उल्लेख यद्यपि नहीं मिलता लेकिन विधवाओं के साथ सम्मानजनक, मानवीय व्यवहार किया जाता था। उन्हें अपने पति की सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त था।

2. **उत्तर वैदिक-काल और नारी**- ईसा के 600 वर्ष पूर्व से लेकर ईसा के 300 वर्ष बाद तक का युग उत्तर वैदिक-काल कहा जाता है। इस काल में महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन हुआ। इस काल में यह भावना विकसित होने लगी कि बौद्धिक दृष्टि से स्त्री पुरूष से भिन्न है।

उत्तर वैदिक काल महाभारत की रचना का काल था। महाभारत में उल्लेखित उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि यद्यपि महिलाओं के प्रति वैचारिक मान्यताओं में परिवर्तन होने लगा था परन्तु सामाजिक-धार्मिक क्षेत्रों में अभी भी महिलाओं के अधिकारों को कम नहीं किया गया।

उत्तर वैदिक कालीन व्यावहारिक शिक्षा में स्त्री नृत्य, संगीत, गान, चित्रकला आदि की भी शिक्षा ग्रहण करती थी। नारी शिक्षा की गौरवमयी परम्परा विद्यमान थी। पाणिनी ने भी अष्टाध्यायी में उपाध्याय एवं आचार्या स्त्रियों पर प्रकाश डालते हुए महिला शिक्षण शाला का उल्लेख किया है- ''छात्र्यादयः शालायाम्''

3. **मध्यकालीन स्त्रियॉ**- ग्यारहवीं शताब्दी से अठारहवीं शताब्दी के काल को मध्यकाल कहा जाता है। ये काल स्मृतिकारों का काल भी कहा जाता है। इस काल में महिलाओं की स्त्रियों की स्थिति का जितना ह्रास हुआ उसे हमारा इतिहास कलंक के रूप में कभी भी नहीं भूल पायेगा। स्मृतिकारों ने वैदिक काल के सम्पूर्ण नियमों और मान्यताओं को पलट कर रख दिया। मनुस्मृति में यह स्पष्ट प्रावधान किया गया कि-

पिता रक्षति कॉमारि भर्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थिविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र रूपमहर्ति''

मनु ने स्त्री के स्वतन्त्र न होने की बात कही है कि स्त्रियों को पुरूष से कभी भी स्वतंत्र न रखा जाये। उसे हमेशा अपने संरक्षण में रखें। विवाह के पूर्व पिता के संरक्षण में यौवनावस्था में पति के संरक्षण में तथा वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण रखा जाये।

इस काल में ब्राह्मणों का प्रभुत्व समाज में बढ़ता गया। इस काल में अपने को शक्तिशाली एवं कठोर प्रदर्शित करने की प्रबल भावना से प्रभावित पुरूषों ने स्त्रियों के अधिकारों पर कठोराघात करना प्रारम्भ कर दिया था। ब्राह्मणों ने वैवाहिक नियमों तथा स्त्री सम्बन्धी प्रथाओं को और भी अधिक कठोर बना दिया था। महिलाओं को घर से बाहर नहीं निकलने दिया जाता था, पर्दा प्रथा को इतना अधिक प्रोत्साहित किया गया कि घर के अन्य पुरूष सदस्य तो क्या पति भी पत्नी का चेहरा न देख सके। विधवा विवाह के बारे में सोचना इस काल का अक्षम्य अपराध माना जाता था। इस काल में सती प्रथा चरम पर थी।

लड़कियों को सभी प्रकार के सम्पत्ति के अधिकारों से वंचित कर दिया गया था। इस प्रकार ''नारी अपनी आर्थिक और पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूर्ण रूपेण पुरूषों पर ही निर्भर हो गई थी।''

महिलाओं की इस स्थिति को महिलाऐं ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज भारतीय संस्कृति का अंग समझने लगा था और यही कुरीतियां सांस्कृतिक विरासत के रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होने लगी। इस प्रकार वैदिक काल में अपनी विद्वता शक्ति और शौर्य के कारण समाज को प्रभावित करने वाली नारी इस काल में निर्बलताओं का प्रतीक बन गई।

4. **उन्नीसवीं शदी में महिलाऐं**– मध्यकाल में स्त्रियों की जो दयनीय दशा हो गई थी उसको इस युग में सुधारने के लिए काफी प्रयास किये गये। देश के अनेक समाज सुधारकों स्वामी दयानन्द सरस्वती, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, राजा राममोहन राय, श्रीमती एनी बेसेन्ट, गोपाल कृष्ण गोखले, सर सैयद अहमद खान, ईसाई मिशनरियों, ब्रिटिश सरकार के कानून तथा पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव द्वारा अनेक प्रयास किये गये। समाज सुधारकों ने महिलाओं की शिक्षा के लिए विद्यालय खोलने, कुरीतियों को समाप्त करने, महिलाओं में सामाजिक चेतना उत्पन्न करने एवं कुप्रथाओं के विरूद्ध सरकार के अधिनियम बनाने से सम्बन्धित महत्वपूर्ण कार्य किये।

5. **इक्कीसवीं सदी और महिलायें**– स्वतंत्रता प्राप्ति के 71 वर्षों में महिलाओं की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया। आज महिलायें आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक दासता से निकलकर स्वतंत्र जीवन का विकास करने की सभी सुविधाऐं प्राप्त कर रही हैं। महिलाओं की स्थिति में

परिवर्तन के लिये स्त्री शिक्षा में प्रगति, सुधार आन्दोलन, राजनैतिक आन्दोलन, संयुक्त परिवार का विघटन, पाश्चात्य संस्कृति एवं साहित्य, औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण, कानूनी अधिकार, यातायात के साधनों का विकास, सामाजिक संचार माध्यम, सह शिक्षा, अंतर्जातीय विवाह तथा वर-मूल्य प्रथा आदि कारण उत्तरदायी हैं।

डॉ0 श्रीनिवास के अनुसार- पश्चिमीकरण, लौकिकीकरण तथा जातीय गतिशीलता में स्त्रियों की सामाजिक आर्थिक स्थिति को उन्नत करने में काफी योगदान दिया है। वर्तमान में शिक्षा का प्रसार उच्चतम स्तर पर हुआ है। आज की महिलायें हर क्षेत्र में पुरूषों के कंधे से कन्धा मिलाकर चल रही हैं। हर वर्ग को स्त्रियॉ अपनी योग्यता के बल पर आसमान छू रहीं हैं।

आज की स्त्रियों ने अपने आप को साबित किया है। आजकल अधिकतर स्त्रियों के विचारों और दृष्टिकोणों में इतना अधिक परिवर्तन आ चुका है कि अब वे अन्तर्जातीय विवाह, प्रेम विवाह और विलम्व विवाह को अच्छा समझने लगी हैं। वे पर्दा प्रथा को निरर्थक समझने लगी हैं। घर की चारदीवारी से निकल कर बाहर की खुली हवा में सॉस ले रहीं है। जातीय नियमों और रूढ़ियों से मुक्त होने के लिए प्रयत्नशील हैं। आज अनेक स्त्रियॉ महिला संगठनों और क्लबों की सदस्य भी हैं। कई स्त्रियॉ तो समाज कल्याण के कार्य में तत्पर हैं।

निष्कर्षत: वैदिक वाड्मय पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि वैदिक युगीन नारी को समाज मे अत्यधिक सम्मानजनक स्थान प्राप्त था जिसका उल्लेख अनेक मंत्रों में प्राप्त होता है। यदि वर्तमान शिक्षा पद्धति में वैदिक संस्कारों को समाहित करें अथवा वैदिक पद्धति का अनुकरण करें तो वास्तव में वर्तमान में नारी अबला न होकर सशक्त रूप में स्थापित होगी। वैदिक वाड्मय में महिला सशक्तीकरण के पर्याप्त पुष्ट प्रमाण उपलब्ध हैं जिनको आदर्श मानकर सम्प्रतिक समाज में स्त्रियों की गौरवपूर्ण स्थति को अक्षुण्य रखा जा सकता है।

समाज का असंतुलित विकास अविश्वास एवं विघटन को बढ़ावा देता है। यदि पतन से बचना है तो नारी को वे सभी अधिकार एवं सुविधायें देनी होंगी जिनकी वह अधिकारिणी है। स्वामी विवेकानन्द जी के शब्दों में - ''स्त्रियों की स्थिति में सुधार लाए बिना विश्व का कल्याण सम्भव नही है।''

एक पंख से समाज रूपी चिड़िया उड़ानें नहीं भर सकती।

अपने अधिकारों के प्रति सचेत स्त्री आज यह कहने का साहस करने लगी-

''तुम भूल चुके, पुरूषत्व- मोह में कुछ सत्ता है नारी की,
समरसता है संबंध बनी अधिकार और अधिकारी की।''

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. समकालीन भारतीय समाज और संस्कृति- डॉ0 एस0 अखिलेश, डॉ0 संध्या शुक्ल
2. भूण परीक्षण एवं कन्या भूण हत्या- डॉ0 सुभाष चन्द्र गुप्ता, डॉ0 अनीता सिंह
3. नारी उत्पीड़न और कानून- डॉ0 एम0एल0वर्मा, डॉ0 मीनाक्षी पवार
4. स्त्रियों का घटता अनुपात-कारण एवं निवारण- डॉ0 मृदुला शुक्ला
5. संस्कृत वाड्मयी- प्रो0 बृजेश कुमार शुक्ल
6. भारतीय इतिहास में नारी- डॉ0 एस0एल0 वरे
7. नारी और समाज- इति तिवारी

महिला सशक्तीकरण : एक ऐतिहासिक परिदृश्य

* प्रो. अलका सक्सेना

भूमिका– भारतीय सभ्यता अत्यन्त प्राचीन है। भारत की सबसे प्राचीन सभ्यता सिन्धु घाटी की सभ्यता समझी जाती है। 1922-23 से पहले वैदिक सभ्यता को ही भारत की प्राचीनतम सभ्यता माना जाता था। 1922 में राखलदास बनर्जी के नेतृत्व में मोहन जोदड़ो की खुदाई हुई और एक भव्य नगर के अवशेष प्राप्त हुए तथा इससे 400 मील की दूरी पर हड़प्पा की खुदाई हुई, इस सभ्यता के अधिकांश भग्नावशेष सिन्धु तथा उसकी सहायक नदियों की घाटी मे मिले हैं। अतः इस सभ्यता को सिन्धु घाटी की सभ्यता कहा गया है, इस सभ्यता की पूरी अवधि 500 वर्ष (3250 से 2750ई0पू0) निर्धारित की गयी है। सिन्धु घाटी की सभ्यता नारी प्रधान अथवा मातृ सत्तात्मक सभ्यता थी। खुदाई में मिट्टी की बनी हुई बहुत सी खड़ी एवं अर्ध नग्न नारी की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। यह मूर्तियाँ सम्भवतः मातृदेवी या प्रकृति देवी की हैं। जिससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय नारियों को समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त था।

वैदिक काल में भी नारी की स्थिति सन्तोषजनक थी। वैदिक समाज भारतीय इतिहास का आदर्श समाज रहा है जिसमें नारियों ने समस्त अधिकारों का पूर्णतः के साथ उपभोग किया था तथा जनतंत्रीय सभाओं की शासन सम्बन्धी बहसों में भाग लेती थी। पर्दा प्रथा का पूर्णतः अभाव था। इस समय कन्यायें निर्मुक्त होकर युवकों के साथ अध्ययन करती थी। ऋग्वेद की अनेक ऋचायें, विश्ववारा, सिकता, निवावरी घोषा, लोपामुद्रा और अपाला आदि विदुषी नारियों की रची हुई हैं। ऋषि याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी दार्शनिक वाद-विवादों में भाग लेती थी। पूर्ण युवती होकर वे स्वयंवर द्वारा अपने पति का वरण करती थी और परिवार में साम्राज्ञी बनकर रहती थी। उन्हें पुरूष की सहधर्मणी व अर्धांगनी माना जाता था। वेद के एक मंत्र के अनुसार वे अपने श्वसुर, सास, ननद और देवर आदि पर साम्राज्ञी के रूप में शासन करती थी। सामाजिक तथा धार्मिक कार्यों में उसकी स्थिति पति के समकक्ष थी।

उत्तर वैदिक काल में सामान्यतः ईसा से 600 वर्ष पूर्व से लेकर ईसा के

---

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, डी.बी.एस. कालेज, कानपुर (उ.प्र.)

300 वर्ष बाद तक माना जाता है। इस काल में नारी की स्थिति में कुछ विशेष परिवर्तन नहीं हुए थे। नारियों को शिक्षा का पूर्ण अधिकार था। विवाह संस्कार के समय वर वधू सम्मिलित रूप से मंत्रोच्चारण करते थे। पति की सन्तानोत्पत्ति की अक्षमता या दुश्चरित्रता के कारण पत्नी पति का त्याग कर सकती थी, इसके साथ ही पति के दीर्घ काल तक परदेश रहने पर पत्नी सम्बन्ध विच्छेद कर सकती थी। महाकाव्य कालीन समाज में नारी का स्थान धीरे-धीरे परिवर्तित होने लगा। कन्या जन्म को अशुभ मानने के संकेत भी मिलते हैं। यद्यपि तद्युगीन समय में कन्या को लक्ष्मी माना जाता था। कन्या की पवित्रता के कारण ही सिंहासनारोहण व राजतिलक जैसे शुभ कार्यों में कन्या की उपस्थिति अनिवार्य मानी जाती थी। उसे पुत्र के समान सभी अधिकार प्राप्त थे। केवल पिता की सम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं था। फिर भी वह दहेज के रूप में पितृ सम्पत्ति प्राप्त कर लेती थी। महाभारत के एक प्रकरण में लिखा है कि पुत्र पर ही परिवार की आशायें निर्भर हैं, पुत्री तो कष्टों का कारण हैं। तथापि महाकाव्य काल में कुछ नारियाँ राजनीति में भी प्रमुख भाग लेती थी। राजनारियाँ एवं महारानियाँ राज सभाओं में बैठती थी। कैकेयी जैसी प्रतिभावान रानियाँ समय आने पर राजा को उचित मंत्रणा भी देती थी, वे विवाह संस्कार तथा यज्ञ में भी भाग लेती थी। वाद-विवाद एवं विचार विनिमय में सम्मिलित होती थी। गार्गी ने जनक की सभा में दर्शनशास्त्र के वाद-विवाद में भाग लेकर याज्ञवल्क्य को चौका दिया था।

छठी शताब्दी ई0पू0 के बाद से समाज में स्त्रियों की स्थिति अधिक खराब होने लगी। पंचतंत्र के अनुसार पुत्री के जन्म पर पिता को बहुत चिन्ता होती थी कि मैं इसका विवाह किस योग्य वर के साथ करूँ। विवाह करने पर भी उसकी चिन्ता समाप्त नहीं होती। वह यह जाने को उत्सुक रहता था कि उसकी पुत्री विवाहित अवस्था में सुखी रहेगी या नहीं।

मनुस्मृति में मनु ने ''योभर्ता या स्मूतांगना'' लिखकर समाज में नर नारी को बराबर का दर्जा दिया है। बल्कि यहाँ तक लिखा है कि - ''यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता'' किन्तु यह भी कहा गया कि बचपन में पिता, युवा अवस्था में पति, वृद्धा अवस्था में पुत्र नारी का संरक्षक होता है। नारी की इस सतत् दासता को पुरूषों ने अविवेकपूर्ण ढंग से न केवल स्वीकारा वरन् पूरी शक्ति के साथ लागू कर दिया।

मौर्य युग तथा उसके पश्चात के काल में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति हीन होने लग गयी थी। उनका मुख्य कार्य विवाह करके पति की सेवा तथा सन्तानोत्पत्ति करना माना जाने लगा था। कौटिल्य ने लिखा है कि नारियाँ सन्तान उत्पन्न करने के लिए होती हैं। मौयोत्तर युग के शास्त्रकारों की दृष्टि में ''नारी के लिए पतिव्रत्य

ही परम धर्म है, जिसका पालन करने से वह उस स्वर्गलोक को प्राप्त करने में समर्थ होता है, जिसे महर्षि तथा पवित्र आत्माएँ ही प्राप्त कर सकती हैं।

गौतम बुद्ध के काल में समाज में नारियों की स्थिति सराहनीय नही ंथी। बुद्ध नारियों को संघ में प्रवेश देने के विरूद्ध थे। इस काल में स्त्रियों की स्वतंत्रता पर कुछ प्रतिबन्ध लगा और पर्दा-प्रथा का प्रचलन हो गया। जातकों से पता चलता है कि कुछ रानियाँ पर्दे वाले रथों में यात्रा करती थी। 600 ई0 से 1200 ई0 तक का समय भारतीय इतिहास में अस्थिरता का समय था। हर्षवर्धन (664 ई0 से 647 ई0) भारत का अन्तिम हिन्दू सम्राट था। हर्ष वर्धन की मृत्यु के बाद भारत में अनेक छोटे-बड़े राज्य स्थापित हुए। इन राज्यों के राजवंश राजपूत थे। छठी सदी के बाद समाज में नारियों की स्थिति पतन की ओर जाने लगी थी। पुत्री की स्थिति पुत्र की तुलना में गिर गई थी।

भारतीय इतिहास के मध्य युग में नारियों की स्थिति अत्यन्त शोचनीय हो गयी किसी वर्ग की महिला को मौलिक रूप से स्वतंत्र रहने का अधिकार नहीं था। उच्च वर्ग में नारियाँ शिक्षा प्राप्त कर सकती थी। लेकिन अधिकतर नारियाँ शिक्षा से वंचित रहती थी। अनमेल विवाह का संताप भी मध्यवर्गीय महिलाओं को झेलना पड़ता था। उच्च वर्ग में सती प्रथा का प्रचलन हो गया था। उच्च वर्ग की मुस्लिम महिलाओं का जीवन स्तर अच्छा था। परन्तु स्थायी रूप से उनके पास कोई आर्थिक सुरक्षा नहीं थी।

मध्य युग में समाज में दास प्रथा ने विकराल रूप धारण कर लिया। मध्य युग में बड़ी संख्या में दासियों व चेलियों को विवाह के समय साथ भेजा जाता था। इसके कारण समाज में बहुत अनाचार फैला। इन परिस्थितियों में भी राजशेखर की पत्नी अवन्ती सुन्दरी, देवल रानी, रूपमती, पद्मावती और मीराबाई जैसी महिलाओं के व्यक्तित्व और कृतित्व से भारतीय नारी गौरव प्राप्त करने में सफल रही, लेकिन पर्दा प्रथा, जौहर प्रथा, सती प्रथा ने महिलाओं की स्थिति को और अधिक कष्टप्रद बना दिया था।

मुगल शासक परिवारों की कन्याओ ंका विवाह नहीं किया जाता था। आजन्म कुंवारी रहने का उन्हें दण्ड क्यों भोगना पड़ता था। विपरीत परिस्थितियों में भी मध्य युग की कुछ आदर्श महिलाओं ने यथा रजिया, दुर्गाबाई, चांदबीबी, नूरजहाँ, जहाँआरा, मुमताज महल, आदि ने मुस्लिम महिलाओं को सम्मानजनक जीवन का मार्ग दिखाया। अकबर जैसे उदार शासक तक ने यह आदेश निकाल दिया था कि यदि कोई युवती सड़कों पर या बाजारों में बिना पर्दे के दिख जाती थी तो उसे वैश्याओं के कोठे में भेज दिया जाये। हिन्दुओं ने नारियों के सम्मान की रक्षा के लिए पर्दा प्रथा को अपनाया। हिन्दू परिवारों में पर्दा प्रथा जारी करना

चाहते थे। इस तरह मध्य कालीन भारत में हिन्दू और मुसलमानों दोनों परिवारों में पर्दा प्रथा पायी जाती थी और इसे सामाजिक प्रतिष्ठा का एक अंग समझा जाने लगा था। राजाओं और सरदारों के घरों में पुरूषों और स्त्रियों के बीच संवाद भेजने के लिए हिजड़ों को नौकरी पर रखा जाता था।

इस युग में यदि कोई स्त्री यदि एक से अधिक कन्याओं को जन्म देती थी तो उसे घृणा से देखा जाता था और कभी कभी तो तलाक दे दिया जाता था। कुछ राजपूत परिवार में लड़कियों को जन्म लेते ही मार दिया जाता था।

मुगल नारी का सामाजिक जीवन विभिन्न प्रतिबन्धों के आधीन था, परन्तु प्रतिबन्धों के बाद भी कुछ मुस्लिम महिलाओं ने विद्वता के क्षेत्र में नाम कमाया था। हुमायूँ की बहन गुलबदन बेगम ने हुमायूँनामा नाम से हुमायूँ की जीवनी लिखी। शाहजहां की पुत्री जहाँआरा कवियत्री थी। सलीमा सुल्ताना, नूरजहाँ और जैबुन्निसा ने श्रेष्ठ काव्य रचना की थी। हिन्दुओं में मीरा बाई, रानी दुर्गावती और ताराबाई अपने समय की विख्यात हिन्दू महिलायें थे। मीराबाई ने भक्ति के क्षेत्र में और रानी दुर्गावती तथा ताराबाई ने प्रशासनिक और सैनिक क्षेत्रों में स्थान प्राप्त किया।

भारतीय इतिहास में 18वीं सदी का समय घोर अवनति और अधोगति का समय है। देश अनेक रजवाड़ों में विभक्त था जो आपस में लडते रहते थे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी धीरे-धीरे अपनी सत्ता बढ़ाती चली जा रही थी। भारत का संकट सिर्फ राजनीति तक सीमित न था। भारत अपने प्राचीन वैभव को भूल चुका था। उपनिषदों और वेदान्त की शिक्षाएं लोंगों की समझ से बाहर थी। धर्म, शिक्षा, प्रशासन, कृषि उद्योग सभी क्षेत्रों में जड़ता व्याप्त थी।

18वीं शताब्दी में बाल विवाह, अनमेल विवाह और बहु विवाह के बीच तड़पती हिन्दू, मुस्लिम महिलायें देश के विभिन्न भागों में अत्यन्त दुखद दृश्य प्रस्तुत करती थी। सती प्रथा, विधवा विवाह वर्जन और कन्या शिशु की हत्या ऐसी वैदिक काल से आधुनिक काल तक महिलाओं की स्थिति ऐतिहासिक अनुशीलन कुरीतियाँ प्रचलित थी, जिनका कोई समाधान नहीं दिखाई पड़ता था। अशिक्षा और अज्ञान में जकड़ी भारतीय नारी का जीवन धार्मिक अन्धविश्वास एवं बाह्य आडम्बर से परिपूर्ण था।

सर्वप्रथम 19वीं शताब्दी में लार्ड वेलजली ने प्रख्यात मिशनरी ''कैरे'' के साथ छोटी बच्चियों को जन्म के साथ ही गंगा या समुद्र के पानी में डुबाकर मार दिये जाने की कुप्रथा को समाप्त करने हेतु अगस्त 1802 ई0 में ब्रिटिश सरकार कानून ले आयी।

बंगाल में राजाराम मोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना कर महिलाओं के

वैधानिक एवं सामाजिक अधिकारों में अवरोध खड़ी करने वाली परम्पराओं का विरोध किया।

सती प्रथा का उन्होंने पुरजोर विरोध किया तथा अपनी सोच के लोगों के छोटे-छाटे संगठन बनाये जिन्हें यह दायित्व सौंपा गया कि वे किसी भी स्त्री को जबरन सती होने से रोके एवं लोगों को इस कुरीति के विषय में समझायें। स्त्री को जलाने की घृणित परम्परा को रोकने में उन्होंने विदेशी शासन की निःसंकोच मदद की।

इस प्रकार 4 दिसम्बर 1829 ई0 को प्रस्ताव संख्या XVII सती प्रथा का कानून द्वारा असंवैधानिक एवं दण्डनीय अपराध घोषित किया गया है। इससे समाज की महिलाओं में भी एक नयी सोच को जन्म दिया और स्त्रियों को सती किये जाने के मामलों में धीरे-धीरे कमी आने लगी। राजाराम मोहन राय ने 20 अगस्त 1828 को ब्रह्म समाज की स्थापना की। ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन, आर्य समाज, थियोसोफिकल और अलीगढ़ आन्दोलनों ने नारियों की समस्याओं की ओर भी ध्यान दिया और उन्हें समाज की मुख्य धारा में लाने की कोशिश की। भारतीय नारी जागरण के सन्दर्भ में राजा राममोहन राय, स्वामी दायानन्द सरस्वती और स्वामी विवेकानन्द के कार्यो का ऐतिहासिक महत्व है।

स्वामी विवेकानन्द ने नारियों को आत्मनिर्भर बनाने पर अधिक बल दिया। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार नारियों में इतनी शक्ति होनी चाहिए कि वे अपनी सुरक्षा स्वयं कर सके। स्वामीजी लड़कियों के बाल विवाह तथा अन्तर्जातीय विवाह के पक्ष में नहीं थे। स्वामी जी का कहना है कि ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिससे चरित्र निर्माण हो, मानसिक शक्ति बढ़े, बुद्धि विकसित हो। इस प्रकार की शिक्षा प्राप्त होने पर नारियाँ अपनी समस्यायें स्वयं ही हल कर सकेंगी। स्वामी जी ने आधुनिक युग में नारियों को आत्म रक्षा के भी उपाय सीख लेने पर जोर दिया। झांसी की रानी के समान भारत वर्ष में इस कार्य के लिए संघमित्रा, निर्भयता और ईश्वर के पादस्पर्श द्वारा प्राप्त शक्ति के कारण वीरमाता बनने योग्य महान, निर्भय, नारियों को सामने लाने का प्रयास किया। शिक्षित और धार्मिक माताओं के ही घर में महापुरूष जन्म लेते हैं। यदि नारियाँ उन्नत हो जाये तो उनके बालक अपने उदार कार्यों के द्वारा देश का नाम उज्ज्वल करेंगे, तब तो संस्कृति, ज्ञान शक्ति और भक्ति देश में जागृत हो जायेंगे।

19वीं शताब्दी के अर्ध में बाल विवाह के स्थान पर विवाह योग्य युवतियों की उम्र का निर्धारण और विधवा विवाह को प्रोत्साहन के लिए ईश्वर चन्द्र विद्या सागर द्वारा किये गये कार्यों से महिलाओ की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार आया जिसने 26 जुलाई 1856 में कानून का रूप धारण कर विधवा विवाह को

संवैधानिक रूप प्रदान किया। ईश्वर चन्द्र विद्यासागर स्त्री शिक्षा के प्रबल समर्थक थे उन्होंने अपने पैसों से बालिकाओं के 35 स्कूल खोले। 19वीं शताब्दी के पुर्नजागरण में महिलाओं में आत्म-विश्वास, शिक्षा, बाल विवाह एवं सती प्रथा पर प्रतिबन्ध, विधवा विवाह को प्रोत्साहन के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

भारत ने 20वीं शताब्दी में प्रवेश नये प्रतिरोध और नये जागरण के तेवर के साथ किया। परन्तु तब से लेकर अब तक राज्य ने परिवार नामक इकाई के अन्दर प्राधिकार सम्बन्धों की पुर्नसंरचना का प्रयास नहीं किया। सम्पत्ति तथा अन्य संसाधनों में महिलाओं की सक्षम पैठ करवाने का प्रयास नहीं किया गया। सबसे ऊपर भूमि सम्पत्ति के स्वामित्व तथा प्रौद्योगिकीय नियन्त्रण के प्रकार्य का सर्वेसर्वा परिवार के मुखिया को बना दिया जाता रहा। यही नहीं राज्य ने उन अधिकारों में भी कटौती कर दी जो पारस्परिक रूप से नारी को प्राप्त थे।

ऐतिहासिक रूप से कहे तो गांधी के नेतृत्व में राष्ट्रवादी आन्दोलनों की अवधि में महिलाओं की समाज में भूमिका के प्रति छिन्न-भिन्न दृष्टिकोण उभर कर आये। नेतृत्व ने यह महसूस किया कि स्त्रियों की घरेलू दासता को समाप्त किया जाना चाहिए और आवाज उठाई कि नारी गतिविधियों को सार्वजनिक जीवन में प्रवेश दिया जाये ताकि देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में नई धार लाई जा सके। गांधी जी की नजर में नारी उत्थान में बाधा एक ऐतिहासिक एवं वैश्विक परिघटना है। उनकी सामाजिक तथा राजनीतिक गतिविधियों में असहभागिता एवं वैश्विक परिघटना है। उनकी सामाजिक तथा राजनीतिक गतिविधियों में असहभागिता तथा लैंगिक अधीनीकरण के पुरूषों के खिलौने के रूप में इस्तेमाल किये जाने पर गांधी पश्चाताप व्यक्त करते हैं। गांधी के अनुसार स्त्रियों में सहनशीलता, साहस तथा उच्चनैतिक बल आदि गुण उन्हें अहिंसात्मक आन्दोलनों का स्वाभाविक नेता बना रहे हैं ताकि सामाजिक-राजनीतिक शक्ति संरचना को वे तेज धक्का दे सके, एक न्यायोचित और शोषण विहीन व्यवस्था को निर्मित किया जा सके। अतः गांधी जी की लहर में महिलायें अंहिसात्मक संघर्ष की अगुवा दस्ता थी।

आर्य समाज के अस्तित्व में आने के समय अधिसंख्य हिन्दू नारियों की दशा शोचनीय थी। दयानन्द सरस्वती के अनुसार आर्य भारत में बहुपत्नीत्व, बाल विवाह तथा नारी बहिष्कार जैसे प्रथा विद्यमान थी। अपनी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश में जैसा कि तत्व बोधिनी सभा का भी मत है कहा जाता है कि वैदिक भारत में शिक्षित स्त्री तथा पुरूष एक समान है तथा उनका भी यज्ञोपवीत संस्कार किया जा सकता है।

नारियों की दशा में सुधार के लिए प्रयत्नशील सुधारक ज्योतिषा फूले ने कहा कि काफी परिपक्व सोच-विचार के पश्चात मैं इस नतीजे पर पहुंची कि

कन्या पाठशालाओं की स्थापना बाल विद्यालयों से अधिक महत्वपूर्ण तथा आवश्यक है। क्योंकि शिक्षा की जड़ें सामान्यता स्त्रियों में अधिक गहरी होती हैं। इसलिए वे अपने बच्चों को दूसरे या तीसरे वर्ष से ही शिक्षित करना शुरू कर देती हैं।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में शिक्षा की उन्नति के साथ-साथ नारी की स्थिति में भी सुधार हुआ। भारतीय माताओं की शक्ति तथा सामर्थ्य को पहचाना गया। माना गया कि शिक्षा उनकी कमजोरी नहीं बल्कि उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। 1903 में इण्डियन नेशनल सोशल कान्फ्रेन्स, 1909 में एक स्त्री सम्मेलन का आयोजन किया गया। 1910 में इलाहाबाद में दूसरा स्त्री सम्मेलन हुआ। श्रीमती सरला देवी चौधरानी इस सम्मेलन की सचिव थी। इन सभा सम्मेलनों के कारण जनमत में परिवर्तन हुआ और नारियों की दशा सुधारने के लिए प्रयत्न किये जाने लगे। सबसे पहले ध्यान लड़कों और लड़कियों की विवाह योग्य आयु को बढ़ाने की ओर किया गया। 1918 तक लड़कियों की विवाह योग्य आयु को बढ़ाने की ओर किया गया। 1918 तक लड़कियों की विवाह योग्य आयु कम से कम 12 वर्ष और लड़कों की आयु 18 वर्ष निर्धारित करने का आग्रह किया जाता था। 1927 में हरिबिलास शारदा के प्रयत्नों से लड़कियों की विवाह योग्य न्यूनतम आयु 14 वर्ष और लड़कों की 18 वर्ष तय कर दी गयी। 1937 में केन्द्रीय विधान मण्डल ने हिन्दू नारियों का सम्पत्ति अधिकार अधिनियम पास किया। इस अधिनियम के अनुसार हिन्दू स्त्रियों को अपने पति की सम्पत्ति में कुछ अंश मिलने लगा।

वर्तमान में धारणा है कि स्त्रियों ने आधा आकाश थाम रखा है। भारत में महिलायें जनसंख्या का 48 प्रतिशत हैं। प्राचीन से लेकर आधुनिक विश्व में नारी अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती रही और कर रही है। 8 मार्च को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है लेकिन यूनेस्को की रिपोर्ट के अनुसार ''संज्ञेय'' अपराध होने के बाद भी भारत में ही प्रतिवर्ष 1 करोड़ 30 लाख बालिका भ्रूणों की हत्या कर दी जाती है। शिक्षा का प्रतिशत भी अत्यधिक कम है।

भारत अपनी स्वतंत्रता के 7 दशक बिता चुका है किन्तु हजारों वर्षों की वह मान्यता कि स्त्री को पुरूष के संरक्षण की आवश्यकता होती है, परिवर्तित नहीं हुई यद्यपि भारतीय संविधान में प्रदत्त मूल अधिकारों में महिलाओं के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी, एशोचेन की रिपोर्ट के अनुसार भारतीय महिलायें घर और दफ्तर दोनों ही जगह भेदभाव की शिकार हुई। केवल 33 प्रतिशत महिलायें ही शीर्ष पदों पर पहुँच जाती हैं महिला आर्थिक गतिविधि दर केवल 42.5 प्रतिशत है जबकि चीन में 72.44 प्रतिशत है। पारिवारिक चिन्ताओं से मुक्त हो सके। आज

आवश्यकता है महिलायें खुद को एक आधुनिक और वैश्विक मानसिकता के सामने खड़ा करें जिसमें पुरूष समाज की पूर्ण सहभागिता हो।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. डा0 कैलाश चन्द्र जैन, (1995) प्राचीन भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक संस्थायें, म0प्र0 हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ- 17
2. बृहदारण्यक उपनिषद 4, 4, 18
3. ऋग्वेद 10/85/64
4. महाभारत : 5/3/7
5. मनुस्मृति : 5.148
6. कौटिल्य अर्थशास्त्र 3/59/31-41
7. विवेकानन्द - हिन्दू धर्म, पृष्ठ 117
8. सी0एच0 हेमसैथ, (1994) 'इण्डियन नेश्नलिज्म एण्ड हिन्दू सोशल रिफार्म, प्रिसंटन यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ- 14

महिलाओं की भूमिका व महिला सशक्तीकरण

* श्रीमती रीना रानी दास

पितृसत्ता या पुरूषवाद की परंपरागत संरचना विश्व के सभी देशों में किसी न किसी रूप में चली आ रही है। पुरूषवाद या पितृसत्ता जिसके द्वारा संस्थानों के विशेष समूह की पहचान होती थी सामाजिक संरचना और क्रियाओं की व्यवस्था उसी से परिभाषित की जाती थी, पुरूषों का वर्चस्व था, पुरूष वर्ग महिलाओं का शोषक व उत्पीड़क था। पितृसत्ता की मान्यता थी कि पुरूष का अधिकार व कार्य आदेश देना, महिलाओं के लिये यही मान्यता थी कि उनका कार्यक्षेत्र घर, परिवार, बच्चे पैदा करना, उनका पालन पोषण और परिवार के सदस्यों की देखभाल करना था।

पुरूषवाद में पुरूष की श्रेष्ठता व महिलाओं की हीन प्रवृत्ति सांमती संस्कार था। पुरूषों को सत्ता व शक्ति का प्रतीक माना जाता था तो महिलाओं को दया, करूणा, ममता और माधुर्य की मूर्ति। नारीवादी आंदोलन पुरूष की सांमती मानसिकता और पुरूषवाद के विरूद्ध विद्रोह का एक आंदोलन है।

महिलाओं की स्थिति– ऐतिहासिक पृष्ठभूमि-विश्व के विभिन्न देशों में जैसे ग्रेट ब्रिटेन जिसे लोकतंत्र का गढ़ कहा जाता है, महिला के राजनीतिक अधिकार का भी गढ़ कहा जाता है। महिला को राजनीतिक अधिकार 1928 में प्राप्त हुआ। न्यूजीलैण्ड में 1893 से सभी वयस्क महिलाओं को मत देने का अधिकार यद्यपि मानवीय कार्य था, किंतु अपवाद स्वरूप 19वीं सदी के अंत तक वहां महिला विरोधी वातावरण बना रहा है। 20वीं शताब्दी के आरंभ में फिनलैण्ड, जर्मनी एवं प्रथम विश्व युद्ध के बाद कुछ देशों ने महिलाओं को मताधिकार दिया, किंतु पुर्तगाल, बेल्जियम, फ्रांस, इटली, स्पेन में महिलाओं को मताधिकार द्वितीय विश्व युद्ध के बाद प्राप्त हुआ। अमेरिका में महिला मताधिकार वादियों को सामाजिक, आर्थिक शक्तियों, राजनीतिक व वैचारिक संगठनों के विरोधों का सामना करना पड़ा है। अमेरिका में 1920 के 19 वें संवैधानिक संशोधन के द्वारा मत देने का राजनीतिक अधिकार प्राप्त हुआ। स्विजरलैण्ड में बहुत विलंब के बाद

---

* बलौदा बाजार, भाटापारा (छ.ग.)

1971 में संशोधन एवं सार्वजनिक जीवन में प्रवेश के लिये 19 सदीं के प्रारंभ में कानून के समक्ष समानता का अधिकार दिया गया है। चीन में 20 सदी के तीसरे दशक में साम्यवादी आंदोलन के शुरू होने से पूर्व महिलाओं न केवल परिवार व समाज में उत्पीड़ित व शोषित रूप में थी। 1949 में साम्यवादी क्रांति के बाद महिलायें समाज व राजनीतिक कार्यो में सक्रिय हुई। भारत में 19वीं शताब्दी मे भारतीय समाज सुधारकों का मत था कि महिला शिक्षा का उपयोग एक पत्नी व माता के परंपरागत कर्तव्यों के अधिक कुशलतापूर्वक निर्वाह करने योग्य बनाना है।

महिला सशक्तिकरण– लैंगिक विषमता समाज का आधार थी, परंपरागत संस्थाओं व संरचनाओं में होने वाले परिवर्तनों व महिलाओं की समानता सुनिश्चित करना एवं महिला सशक्तिकरण को परिभाषित करना आवश्यक था। इस संबंध में महात्मा गांधी का कथन था कि ''जिस देश में आधी आबादी का सरोकार आंदोलन से नहीं है, वहां स्वतंत्रता की कल्पना नहीं की जा सकती है। नारी शिक्षा, समानता, बाल विवाह, विधवाओं की दयनीय स्थिति, रूढ़ियों, अंधविश्वासों, धार्मिक पाखंड़ों के विरूद्ध एक चेतना प्रवाहित हो रही थी, जिसमें महिलाओं की भागीदारी व समानता के लिये एक मानसिक परिवर्तन की पृष्ठभूमि तैयार हो रही थी, भारत में राजा राममोहन राय, गांधी जी एवं अन्य महापुरूषों ने सतत रूप से संघर्ष व प्रयास किया महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिये। महिला सशक्तिकरण का अर्थ है- अधिकार, सामर्थ्य और निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने की क्षमता।

पिछले कुछ वर्षो में महिला कल्याण कार्यक्रम के बजाय महिला सशक्तिकरण पर जोर दिया जा रहा है। महिला सशक्तिकरण के मानक निम्नानुसार है। :-

1. महिलाओं में आत्म सम्मान व आत्म विश्वास की भावना विकसित करें।
2. महिलाओं की सकारात्मक छवि का निर्माण- यह कार्य सामाजिक-आर्थिक जीवन में उनके योगदान को मान्यता देकर किया जा सकता है।
3. महिलाओं में आलोचनात्मक चिंतन की क्षमता का विकास करना।
4. निर्णय लेने की क्षमता का पोषण व उसे उन्नत करना।
5. विकास प्रक्रिया में समान भागीदारी सुनिश्चित करना।
6. आर्थिक स्वतंत्रता हेतु कानूनी ज्ञान के विकास तथा स्वयं अधिकारों संबंधी सूचनाओं तक उनकी पहुंच को सुनिश्चित करना।
7. सामाजिक-आर्थिक जीवन के सभी क्षेत्रों में समान रूप से उनकी सहभागिता में वृद्धि हेतु प्रयत्न करना।

महिला सशक्तिकरण की दिशा की ओर बढ़ने के लिये सरकार द्वारा

बनायी गयी पंचवर्षीय योजना में कई प्रावधान रखे गये है। छठवीं पंचवर्षीय योजना में एक अध्याय 'महिलायें और विकास' पर केन्द्रित था। सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत महिलाओं के स्वास्थ्य, परिवार कल्याण पर बल दिया गया था। इस योजना द्वारा महिलाओं में शासन के प्रति विश्वास व अधिकारों के प्रति जागरूकता लाने का प्रयास किया गया। महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिये उनके प्रति समाज के रवैया में परिवर्तन आवश्यक है। नवीं योजना के अंतर्गत भारतीय महिला के समग्र विकास के लक्ष्य को निर्धारित किया गया है।

समानता व महिला सशक्तिकरण– समानता लोकतंत्र का आधारभूत सिद्धांत है। समानता का प्रत्यक्ष अर्थ है कि समाज के प्रत्येक वर्ग की सामूहिक सहमति की सशक्त भूमिका है। दूसरे व्यक्ति के विकास हेतु आवश्यक परिस्थितियां के उपभोग हेतु समाज के प्रत्येक वर्ग को अवसर की समानता प्राप्त हो।

जैसे कि संविधान के अनुच्छेद 14 में लिखा है कि ''भारत राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से अथवा विधियों के समान संरक्षण से राज्य द्वारा वंचित नहीं किया जायेगा।''

अनुच्छेद 15 के अनुसार- ''धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर किसी नागरिक के प्रति राज्य भेदभाव नहीं करेगा।''

लिंग संबंधी असमानता को समाप्त करने एवं परंपरागत संस्थाओं एवं संरचनाओं में होने वाला परिवर्तन, जिसमें महिलाओं की समानता सुनिश्चित करना आवश्यक था। 21 वीं सदी में प्रवेश के साथ सामाजिक परिवर्तन व विकास पर बल दिया गया, जिससे महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधार हो। महिलाओं की दयनीय स्थिति है, उन्हें विभिन्न प्रकार की अशक्तताओं व असमर्थताओं से गुजरना पड़ता है। महिलायें शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक दृष्टि से पिछड़ी है। भारतीय संविधान में महिला के हितों की सुरक्षा के लिये कई उपबंध है। मौलिक अधिकार शोषण के विरूद्ध अधिकार अनुच्छेद 23 के अनुसार 'मनुष्यों के अनैतिक व्यापार पर प्रतिबंध है।' राज्य नीति निदेशक तत्व के अनुच्छेद 39 में कहा गया है कि 'राज्य पुरूषों व महिलाओं को समान कार्य के लिये समान वेतन। सरकार इस बात का भी प्रयत्न करेगी कि महिला या पुरूष श्रमिकों के स्वास्थ्य व शक्ति का दुरूपयोग न हो। सभी महिलाओं को जीवनयापन के लिये पुरूषों के समान अवसर मिले।

महिला व महिला सशक्तिकरण– शिक्षा के माध्यम से महिला सशक्तिकरण की दिशा की ओर बढ़ा जा सकता है। साक्षरता व शिक्षा पर चलाये गये अभियानों में महिलाओं में जागरूकता व गत्यात्मकता प्रेरणा उत्पन्न हुई है।

जिसे आंध्रप्रदेश महिलाओं द्वारा अरक (शराब) के विरूद्ध सशक्त रूप से आंदोलन चलाया। महिला समाख्या कार्यक्रम, प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम एवं प्रारंभिक शिक्षा की विषमता को दूर करने के लिये राजस्थान में ''लोकजुम्बिश और शिक्षाकर्मी' आदि कार्यक्रमों का भी महत्व शैक्षिक स्तर पर महिलाओं में शिक्षा के प्रति जागरूकता उत्पन्न कर उनके दृष्टिकोण में परिवर्तन करना है। महिला कार्यक्रमों का फोकस '' महिला सशक्तिकरण'' पर आधारित व केन्द्रित है। निश्चय ही सशक्त होने पर महिलायें स्वयं में समर्थ हो। महिलाओं का शिक्षित होना, साक्षरता के दर में वृद्धि एवं अन्य शैक्षिक स्तरों पर उनकी स्थिति को सुदृढ़ व मजबूत बनाना है। शिक्षा में लिंग संबंधी समानता स्थापित करने के लिये प्रारंभिक शिक्षा पर जोर दिया गया है।

2010 का ''सर्व शिक्षा अभियान'' ऐसे कार्यक्रम का पूर्ण निष्ठा से संचालित करना है। शिक्षा के माध्यम से महिला सशक्तिकरण के लक्ष्य को प्राप्त करना है। महिला समाख्या कार्यक्रम का उद्देश्य महिलाओं के आत्मविश्वास में वृद्धि करना, एक ऐसा वातावरण तैयार करना, जहां महिलायें ज्ञान व सूचनायें प्राप्त कर सके। जिससे महिलाओं की समाज में सकारात्मक भूमिका हो। महिलाओं व किशोरियों को भी शिक्षा के अवसर प्राप्त हो।

राजनीति व महिला सशक्तिकरण– महिलाओं को सशक्त बनाना है, राजनीतिक अधिकार, राजनीतिक क्षेत्र में उनकी भागीदारिता, उनकी योग्यता के विकास एवं आत्मविश्वास में वृद्धि करने के लिये राजनीतिक सहभागिता व राजनीतिक प्रक्रिया में उनकी भूमिका सशक्तिकरण की दिशा है। राजनीतिक क्षेत्र में सक्रियता के लिये एक तिहाई आरक्षण आवश्यक है। शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं की राजनीतिक भागीदारिता प्रारंभिक व संक्रमणकालीन स्थिति में है। जैसे पंचायती राज संस्थाओं में वर्तमान आरक्षण की नीति राष्ट्र के विशाल हितों में ध्यान रखकर निर्मित की गयी। जब सामान्य वर्ग, अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग की महिलायें अपने सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक पिछड़ेपन से त्रस्त है। बिहार एक ऐसा राज्य है जिसमें सबसे पहले महिलाओं को पंचायती राज संस्थाओं में 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की। छत्तीसगढ़ राज्य में भी महिला सशक्तिकरण उत्कृष्ट समाज में निर्माण में महिला की सबसे ज्यादा भूमिका है। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिये 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गयी। वर्तमान समय में 15 वीं लोकसभा में 58 महिलायें सांसद के रूप में है। यह राजनीतिक सशक्तिकरण का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। 1995 में राजनीतिक भागदारिता महिलाओं की 11.3 प्रतिशत थी जो बढ़कर 12 प्रतिशत हो गयी है। महिला सांसद उच्च शिक्षा प्राप्त 34 प्रतिशत है, कुछ

महिला सांसद सामाजिक व राजनीतिक कार्यकर्ता है, जिनका प्रतिशत 10 है। 14 प्रतिशत महिलायें सरकारों के प्रमुख रूप में है। पूरे विश्व में 22 प्रतिशत महिलायें सांसद है। वैश्विक क्षेत्र में 2013-14 में महिलाओं की राजनीतिक क्षेत्र में सक्रियता का प्रतिशत 1.5 बढ़ा है। भारत में राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय नेता वसुंधरा राजे, सुषमा स्वराज, कानिमोली, जयललिता, ममता बनर्जी, सोनिया गांधी, हरसिमरत कौर, डिंपल यादव, सुप्रिया सुले, प्रिया दत्त, अगाका संगमा आदि।

सामाजिक क्षेत्र व महिला सशक्तिकरण- सामाजिक क्षेत्र में महिलाओं को मिलने वाला अधिकार उसके सशक्तिकरण के अहम भूमिका में वृद्धि करता है। सामाजिक न्याय महिला सशक्तिकरण की दिशा में नवीन आयाम हुआ है। जैसे ग्राम कचहरी एक नयी व परिवर्तित व्यवस्था है। महिलाये अपनी प्रत्येक भूमिका को परिवार से जोड़कर देखना नहीं भूलती है। छत्तीसगढ़ सरकार ने पंचायती राज व्यवस्था में विकासखंड में महिलाओं की शिकायत सुनने के लिये अदालत गठन की व्यवस्था की गयी है।

भारतीय समाज में महिलाओं को हर क्षेत्र में संघर्ष करना पड़ता है। अनुच्छेद 15 में कहा गया है कि लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जायेगा। साथ ही कहा गया है कि राज्य महिलाओं एवं बच्चों के लिये विशेष व्यवस्था करता है। 21 सदी में महिला अधिकार व सशक्तिकरण के लिये महिला की सामाजिक स्थिति व दशा में सुधार के लिये आवश्यक है कि सामाजिक कुरीतियों व प्रथायें जैसे- दहेज प्रथा, घरेलू हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह आदि समाप्त कर उनकी स्थिति में परिवर्तन लाया जा सकता है।

आर्थिक क्षेत्र व महिला सशक्तिकरण- महिला सशक्तिकरण के लिये महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वावलंबी व आत्मनिर्भर होना होगा। उनकी आर्थिक क्षमता का विकास एवं काम पाने का अधिकार मिलना चाहिये। जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 42 में लिखा है कि सरकार महिला श्रमिक के लिये प्रसूति सहायता दे अर्थात श्रम करने वाली महिलाओं को विपरीत परिस्थिति अर्थात बीमारी की अवस्था एवं गर्भवती महिलाओं को प्रसूति अवकाश दिया जाना चाहिये। महिलाओं को अवकाश व विश्राम का भी अधिकार मिले। महिलाओं को स्थायी संपत्ति खरीदने की सुविधा, समान कार्य हेतु समान वेतन की पात्रता हो। ग्रामीण क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं के वेतन में वृद्धि, मनरेगा में काम करने वाली महिलाओं को 1 माह का प्रसूति अवकाश दिया जाता है। आर्थिक रूप से भी महिला सशक्त होकर महिला सशक्तिकरण की दिशा की ओर बढ़ रही है। आज महिला राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्री, व्यवसायी, उत्पादक व श्रमिक, एजेन्ट एवं

विभिन्न सेवाओं में काम करने अपनी भूमिका व महत्ता में वृद्धि कर रही है।

कानून व महिला सशक्तिकरण– अस्सी के दशक में नियोजन व विकास की प्रक्रिया में महिला के योगदान में वृद्धि हुई। साथ ही इस दिशा में महिलाओं की चेतना जागृत करने के लिये महिलाओं की स्थिति में सुधार से संबंधित कानून बने। जैसे कि बाल विवाह को रोकने से संबंधी कानून को अधिक प्रभावशाली बनाया गया। कन्या भ्रूण हत्या व शिशु हत्या के साथ लिंग परीक्षण रोकने से संबंधी कानून बना। घरेलु हिंसा रोकने से संबंधी कानून, टोना टोटका रोकने से संबंधी कानून बना। इसे प्रभावी बनाने के लिये अधिकारियों व कर्मचारियों की नियुक्ति की गयी है। महिलाओं की सुरक्षा से संबंधी संगठन जैसे (महिला आयोग) व योजनाओं का निर्माण हो रहा है। कम्प्यूटरीकरण के इस युग में महिला नेटवर्क का भी उदय हो रहा है। महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन के साथ महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया बढ़ रही है। किंतु निरंतर हो रही यौन उत्पीड़न की घटनायें जैसे तेजाब फेंकना, सामूहिक बलात्कार की घटनायें रोकने संबंधी कानून के कियान्वयन के लिये महिलाओं का विरोध प्रदर्शन उनकी जागृति का प्रतीक है। महिलाओं की सशक्त भूमिका को दर्शाता है।

सुझाव– महिला सशक्तिकरण के द्वारा महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिये आवश्यक है कि बालिकाओं को बालकों की तरह समान रूप पालन पोषण व शिक्षा-दीक्षा का अधिकार प्राप्त हो। उनको अपने परिवार में भेदभाव का शिकार न होना पड़े। सामाजिक जीवन में उनका प्रवेश निषेध न हो। महिलाओं को सामाजिक क्षेत्र, आर्थिक क्षेत्र व राजनीतिक क्षेत्र में पर्दापण का अधिकार मिले। महिलाओं की प्रत्येक क्षेत्र में उनकी भूमिका व राजनीतिक प्रक्रिया निर्माण में उनके योगदान को रोका नहीं जा सकता है। इस हेतु महिला की पहल क्षमता विकास हो व सरकार द्वारा महिलाओं की स्थिति में सुधार कानून का कियान्वयन भेदभावपूर्ण व शिथिल न हो।

मूल्यांकन– महिला सशक्तिकरण एक आंदोलन है। यह एक विश्वव्यापी आंदोलन है। महिलाओं के समग्र विकास हेतु अच्छे वातावरण का विकास व स्वतंत्रता व अधिकार आवश्यक है। भारत सरकार द्वारा ''महिला और विकास'' योजना के माध्यम से महिला सशक्तिकरण को कियान्वित किया, इस उद्देश्यों की पूर्ति के लिये विभिन्न राज्यों की सरकारों ने महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम के अंतर्गत कुछ कार्यक्रम व योजनायें बनायी जैसे अलीगढ़ विश्वविद्यालय में 2014 में 50 छात्राओं को एन.सी.सी. कैम्प में भाग लेने का अवसर देकर महिला सशक्तिकरण की दिशा में कार्य किया है। 2016 में 1500 छात्राओं के लिये छात्रावास की सुविधा देकर व ग्रंथालय की सुविधा में छूट देकर शिक्षा व

व्यक्तित्व विकास में योगदान दिया। सरकार का ध्यान भी महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम पर केन्द्रित था किंतु महिलाओं को विभिन्न अशक्तताओं एवं असमर्थताओं का सामना करना पड़ता है जिसके कारण भारतीय संविधान के प्रावधानों के बावजूद शैक्षिक, सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्र में एवं आर्थिक रूप से महिलाये पिछड़ेपन की स्थिति है। लिंग के आधार पर भेदभाव की प्रवृत्ति आज भी समाप्त नहीं हुई है। भारतीय महिलाओं में रोजगार को लेकर भी असुरक्षा की भावना है। कन्या भ्रूण हत्या निरंतर होने, बलात्कार व सामूहिक बलात्कार की घटनायें महिला को सशक्त बनाने में बाधक है। सरकार द्वारा महिला सुरक्षा संबंधी कानून भी बौने साबित होते है। महिलाओं की स्वास्थ्य व शक्ति का उपयोग राज्य की प्रगति के लिये हो। महिलाओं को प्रत्येक क्षेत्र में संघर्ष की स्थिति से गुजरना पड़ता है। महिलाओं को संघर्षरत स्थिति से निकालकर उनकी शक्ति व क्षमता का उपयोग समाज व राज्य के विकास के लिये कर महिला सशक्तिकरण को नई दिशा दी जा सकती है।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. जैन पुखराज, डा. साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, राजनीति विज्ञान, पृष्ठ 293, 294, 295, 297, 298, 299
2. जैन पुखराज, डा. साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, यूनीफाइड राजनीति विज्ञान, पृष्ठ 251, 252, 320
3. कुरूक्षेत्र, सितंबर 2005, पृष्ठ 03, 04, 08
4. योजना अगस्त 2012, पृष्ठ 10, 11
5. योजना जनवरी 2005, पृष्ठ 62, 63
6. कुरूक्षेत्र, अगस्त 2008, पृष्ठ 08, 19, 23, 26
7. योजना जनवरी 2007, पृष्ठ 40, 41, 42
8. इंडिया टुडे 20 नवंबर 2013, पृष्ठ 42
9. इंडिया टुडे 16 जनवरी 2013, पृष्ठ 20, 23
10. इंडिया टुडे 15 जुलाई 2015 2013, पृष्ठ 30, 31
11. रिसर्च लिंक
12. कुमार पुनीत, कैलाश पुस्तक सदन, पृष्ठ 22 मानव अधिकार एवं लोकतंत्र पृष्ठ 132
13. राय पी. एम. डा. कालेज बुक डिपो, भारतीय सरकार एवं राजनीति पृष्ठ 141, 144

समाज में नारी अस्तित्व

* कीर्ति पटेल

''नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत नग पगतल में।
पीयूष स्त्रोत सी बहा करो,
जीवन के सुन्दर समतल में।।'' - जयशंकर

नारी एक कोमल, नमनीय और सरल स्वभाव व्यक्तित्व की धनी मानी जाती है। इस देश में ऐसा नहीं हुआ कि रानी और महारानियों या राजकुमारियों को शासन व सत्ता में आने को नहीं मिला। रजिया सुल्तान, रानी दुर्गावती, झांसी की रानी, अहिल्या रानी तथा कित्तर की रानी चैन्नया कुछ ऐसे नारी चरित्र हुए जिनमें स्त्री जाति को उज्जवल तथा साहसी होने का परिचय दिया। स्वाधीनता संग्राम में की भी जाने कितनी ही नारियों ने भाग लिया और देश का प्रतिनिधित्व किया।

पौराणिक काल में सती होने का अर्थ आग में जलना नहीं था उसका अर्थ था एक पुरूष में निष्ठा रखना। सतियों में सुलोचना, सीता, सावित्री, अनुसूया जैसी एकनिष्ठ नारियों ने ऐसे कर्म किए हैं जिनको इस धरती पर ही क्या तीनों लोकों में कोई नहीं कर सकता, एकनिष्ठता में बड़ा बल है। सती प्रथा का चलन सबसे पहले यूनान में हुआ जो राजाओं एवं सामन्तों तक ही सीमित था फिर ये भारत के बंगाल प्रदेश में आया और ये चलन कालान्तर में संपत्ति के अधिकार के साथ जुड़ गया। पौराणिक काल में राजा दक्ष की कन्या का सती होना बताया गया है जो श्री शिव की पत्नी थी। उसने आत्मदाह दुखी होकर किया था न कि शिव के कारण। सती प्रथा के पीछे मुख्य कारण विदेशी आक्रमण और नारी अस्मिता की रक्षा ही रहा जिसने राजपूत जाति की आन के साथ जुड़कर सामूहिक आत्मदाह जौहर का रूप ले लिया। ये अग्नि स्नान कालान्तर में लोक प्रतिष्ठा बन गया। चित्तौड़ और जैसलमेर के जौहर ऐसी ही घटनायें थी। इन घटनाओं को उन्माद का कारण मानकर कानून बना और सती होना अपराध माना गया।

==========

* अतिथि विद्वान, गृहविज्ञान, शासकीय कन्या (अग्रणी) स्नातकोत्तर महाविद्यालय, विदिशा (म.प्र.)

पुरूष की तरह नारी को भी अपना जीवन जीने का अधिकार है। वह उसका उपयोग अपने पति के जीवित रहने पर करती है तो उसके मरने के बाद क्यों न करे। भारतीय समाज विधवा नारी का सम्मान करना सीखे। ये ही सही अर्थो में सती का सम्मान है। भारतीय समाज पति धर्म निष्ठा जैसे गुणों पर टिका है जो भारतीय समाज की विशेषता है। पश्चिम के देशों में तलाक और बहु विवाह आये दिन की बात है।

परिवर्तन के लिए सामाजिक चेतना जरूरी है। नारी उत्थान के लिए जरूरी है उसे आत्मनिर्भर बनाया जाए। स्वावलम्बी होकर ही वह आत्मगौरव का अनुभव कर सकेगी, उसके भीतर हीनभाव और पुरूष पर निर्भर करने की प्रवृत्ति से भी मुक्ति मिलेगी। आर्थिक सुरक्षा ही नारी को मानसिक सुरक्षा दे सकती है। सामाजिक सम्बन्धों का आधार आर्थिक आधार पर ही टिका है। विधवा का समाज में शोषण न हो, उसकी आवश्यकता के संदर्भ में आज उसका फिर से विवाह हो जाना उचित है, जिससे उसको फिर से जीवने का सम्बल मिल सके और वह भटकन से बच सके। आज का सत्यं शिवं सुन्दरम् में नहीं, रोटी, कपड़ा और मकान में है। आज के आदमी की पहली आवश्यकता रोटी है फिर कपड़ा और मकान। आज के सारे उत्थान अर्थ में निहित है।

आज नारी के भीतरी सौन्दर्य की परख कम होती है, जिसके चलते ही सारे संकट है। चरित्रवान महिला की तरफ आज भी कोई आंख उठाकर नहीं देख सकता, नारी अपराधों में केवल पुरूष ही अकेला दोषी नहीं है। इन सबके लिए नारी भी बराबर की भागीदारी है। प्यार करने वाला केवल मन देखता है। जाति धर्म, रंग, नहीं। जो नारी देह का व्यापार करते हैं, वे नारी का अपहरण काम-क्रीड़ा, विवाह विक्रय के लिए करते हैं या फिर वेश्यावृत्ति तथा भिक्षावृत्ति के लिए करते है। इन सबके पीछे नारी से प्रतिशोध लेने का भाव छिपा हुआ है। नारी की विडम्बना यह है कि इस देश में एक ओर नारी को देवी के रूप में पूजा जाता है तो दूसरी ओर उसके साथ पशुतुल्य व्यवहार किया जाता है। यह देश दोहरी मानसिकता का देश है। यहां पुरूष स्वच्छन्द रहना चाहता है तथा नारी पर सौ बन्धन जड़ना चाहता है। नारी जब पुरूष की बुरी आदतों का विरोध करती है तो उसे पीटा जाता है। घर में कलह होती है। समाज में सारे झगड़े आर्थिक विषमता के, दुर्व्यसनों के तथा स्वच्छन्द जीवन जीने की चाहत को लेकर होते हैं जिसके कारण आदमी का मानसिक संतुलन ही नहीं सामाजिक संतुलन भी बिगड़ता है।

हर औरत चाहती है कि लोग उसकी भावनाओं को समझें और उसके साथ अच्छा व्यवहार करें। किन्तु जब नर नारी की भावनाओं के विपरीत आचरण करता है तो झगड़े होते है और इन झगड़ों में नारी ही शिकार होती है, फिर वह

पुरूष के अनुरूप ढलने का प्रयत्न करती है, उसका ऐसा करना उसकी मजबूरी होती है। उसे समाज परिवार के परिवेश को अपने में समेट कर चलना होता है। ऐसी स्थिति में नारी अपने व्यक्तित्व और अस्तित्व को जिन्दा रखने की जिद्द करती है वहां टकराहट होती है। पुरूष आक्रामक हो जाता है, नारी ऐसा कर नहीं पाती, इस कारण मार नारी को ही खानी होती है।

समाज स्नेह संबंधों का ताना-बाना है। व्यक्ति समाज की इकाई है। व्यक्ति के भाव, विचार जीवन जीने की शैली अपनी है। उसका जीवन दर्शन अपना है। उसके सुख-दुख भी अपने हैं। वह जो कुछ भी महसूस करता है या फिर सहन करता है वह स्वयं के किए का फल है। हर सागर के भीतर एक ज्वालामुखी होता है तथा सबके पास अपने जीवन के खट्टे-मीठे अनुभव होते हैं। हम सामाजिक जीवन को ईश्वर की संरचना में विश्वास करके ही सफल बना सकते हैं जिसमें हमारा सबके साथ स्नेहशील होना आवश्यक है, उतना ही जरूरी है अपना दायित्व निभाना। समाज में रहकर हमारी इच्छापूर्ति के हमारे पास दो मार्ग है एक आत्म तुष्टि का तथा दूसरा प्रदर्शन का। अक्सर नारी स्वभाव से सौम्य और सहनशील होती है। वह रचनात्मक मूल्यों में विश्वास करती है। नारी के लिए जरूरी है आत्मविश्वास, आत्म अनुशासन और आत्म निर्भरता। वह गृहलक्ष्मी है तो उसे सरस्वती भी होना चाहिए। सन्तान को ज्ञानी गुणी बनाने के लिए वह समाज में सहज चेतना ला सकती है। परिवार को प्यार में बांधकर रख सकती है। नारी के लिए चेतना, शिक्षा एवं वैज्ञानिक सोच बहुत जरूरी है क्योंकि उसे ही आदमी का संसार रचना है।

संसार में झगड़े की जड़ सम्पत्ति, भूमि और नारी को माना है। नारी रंगशाला की नायिका भी हो सकती और रणचण्डी भी। नारी पुरूष का सम्बल है। सच्चे प्रेम का मार्ग बड़ा टेढ़ा होता है, जिसमें सुख से ज्यादा पीड़ा होती है। प्रेम जीवन की पूर्णता है जिसने मन से कभी किसी को नहीं चाहा, उसका जीवन व्यर्थ गया। प्रेम स्त्री-पुरूष के बीच एक ऐसा आकर्षण है जो दोनों को बांधकर रखता है।

नारी शक्ति का स्वरूप– हमारे भारतीय समाज में नारी तथा हमारे ग्रंथों में भी नारी को पूज्यनीय बताया गया है। ईश्वर ने भी नारी को एक जननी के रूप में इस धरती पर भेजा नारी शक्ति एक ऐसी शक्ति है जो सारे देश को सारे समाज को कभी एक माँ के रूप में, कभी एक बहन के रूप में कभी एक पत्नी के रूप में तो कभी एक बेटी के रूप में एकता के सूत्र में बांधती है।

समाज में नारी का यथार्थ चित्र– नारी आज अल्पसंख्यक प्रजाति होती जा रही है। उसे जीने नहीं दिया जाता। उसके जीवन की यात्रा लम्बी और यातना

से भरी है। जीवन के प्रथम दस वर्षों में उसे भाइयों जैसा भोजन शिक्षा व अन्य सुविधाएं नहीं मिलती। वह केवल सेविका की भूमिका निभाती है। झाड़ू, चूल्हा चौका से उसकी यात्रा प्रारंभ होती है और घर का छोटा-बड़ा काम उसे ही करना होता है। जैसे उसका सम्पूर्ण जीवन ही सेवा को समर्पित है। वह एक अधिकारविहीन बहन, निस्वार्थ माँ, आज्ञाकारी बेटी, बैल की तरह खटती पत्नी होती है उसका अपना अलग से कोई वजूद नही होता। यौवन आने पर वह कामपूर्ति का साधन बनती है और उसे बच्चे पैदा करने की मशीन बना दिया जाता है। वह जिन्दगी भर बन्धक मजदूर की तरह पिसती रहती है, दुनिया की उपलब्धियों से उसका कोई वास्ता नहीं रहता। भारतीय संस्कृति में नारी को लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा कहा गया है लेकिन उसके साथ व्यवहार की कहानी कुछ ओर ही होती है। पिछले 20 वर्षों में महिलाओं के साथ हुए बलात्कारों में 40 प्रतिशत का इजाफा हुआ है और छेड़खानी में 60 प्रतिशत तथा दहेज को लेकर नारी मारे जाने की वारदातों में 50 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। महिलाओं को पुरूषों ने दुष्चक्रों में फंसा रखा है। नारी के पास उत्तरदायित्व तो है, अधिकार जैसी कोई चीज नहीं है। पुरूष समाज की कुटिल व्यवस्था के कारण बेटी का जन्म माता-पिता के लिए अभिशाप बनता जा रहा है।

हठ योग और नारी– हठ योग में मन्त्र और मैथुन को महत्व देकर नारी के माँ, बहिन, बेटी के रिश्तों को ही नकार दिया और नारी को मैथुनी बना डाला। वज्रयानी सिद्ध वासना के खुले उपासक थे। उन्होंने नारी को इन्द्रियों की अभितृप्ति का साधन बना डाला। ब्राह्मणों ने अपने स्वार्थ के लिए सामाजिक समरसता में बड़ा जहर घोला है, राजपूत जाति पर उनका प्रहार प्रबल रहा। रक्त शुद्धता के नाम पर उन्होंने समाज को बांटा तथा सारे सूत्र अपने हाथ में रखे। कर्ण, आल्हा-उदल, व्यास, विदुर अपने को कुलीन सिद्ध करने के लिए जीवन भर संघर्ष करते रहे। नारी के विशेष गुणों में पतिव्रत धर्म, कुल मर्यादा, लज्जा, विनम्रता, संयम, समता, सेवा, सादगी पर दुख कातरता, मृदुभाषिता, मितव्ययिता थे जिसके कारण नारी का समाज में सम्मान होता था। तो दूसरी ओर नारी देह शोषण भी कम नहीं होता था। इस देह शोषण को संयत करने के लिए ही आदि पुरूष मनु ने समाज को बांधकर रखने की व्यवस्था दी।

भारतीय साहित्य और नारी–

भारतीय साहित्य ने भी नारी के साथ न्याय नहीं किया। नारी की प्रस्तुति एक अबला के रूप में की। उसे भोग की सामग्री, सेविका एवं सम्पत्ति के रूप में चित्रित किया। शेर से सिर्फ लड़का ही लड़ सकता है, लड़की नहीं, बन्दूक केवल लड़का ही चला सकता है, लड़की नहीं, घोड़े की सवारी, युद्ध कला

सीखने में उसे कमजोर ही माना उसे कभी पुरूष जैसा करने का अधिकार दिया ही नहीं। पाठ्यपुस्तकों में भी लड़कों से लड़कियों के चरित्र को कम करके दिखाया गया है। अतः मानसिक तौर से लड़की प्रारंभ में ही अपने को लड़के से कमजोर समझने लगती है। संविधान ने उसे जीवन जीने के लिए बराबर का अधिकार तो दे दिया किन्तु यथार्थ में ये सब किताबी बाते हैं।

हमारी राजनीति से भी सेवा का भाव गायब है। वहां भी गुण्डागर्दी और तस्करी का बोलबाला है तथा अपराधियों को राजनीतिज्ञों द्वारा संरक्षण दिया जाता है, जिसके कारण मनमाने अपराध बढ़े हैं जिसमें सबसे ज्यादा पीड़ादायक स्थिति लड़कियों एवं महिलाओं के साथ जिनकों उठाकर कभी भी कहीं भी ले जाया जा सकता है। महिलाओं के साथ पिछले दशकों में जुल्म बढ़े है। उनके साथ सामूहिक बलात्कार होते हैं और उनकी सुनवाई कहीं नहीं होती। मानवीय मूल्यों का क्षरण हो रहा है और उससे अपराधियों का मनोबल बढ़ रहा है जो देश और समाज के लिए शुभ नहीं है।

आज जरूरत है महिलाओं को स्वयं आगे बढ़ने की। अपने अधिकारों को पहचानने की। सबसे पहले महिलाओं को स्वयं सशक्त और आत्मनिर्भर बनना होगा। उन्हें ये जानना होगा कि उनके अन्दर असीम क्षमतायें हैं, उनका उन्हें उपयोग करना है। उन्हें जानना होगा कि वो हर चुनौती का सामना करने में सक्षम हैं। सबसे ज्यादा उन महिलाओं को जागरूक करना होगा जो पढ़ी-लिखी नहीं है। या जो पढ़ी-लिखी होकर भी घर की चार दीवारों में कैद हैं। आज की नारी पुस्तकों के समान ही सुशिक्षित, सक्षम और सफल है चाहे वह क्षेत्र सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, खेल, कला, साहित्य, इतिहास, भूगोल, खगोल, चिकित्सा सेवा, मीडिया या पत्रकारिता कोई भी हो। नारी की उपस्थिति, योगदान, योग्यता, उपलब्धियां, मार्मिकता और सृजनशीलता स्वयं एक प्रत्यक्ष परिचय देती हैं। परिवार और समाज को संभालते हुए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नारी ने हमेशा से ही विजय-पताका लहराते हुए शब्द-निर्माण और विकास में अपना विशेष और अभूतपूर्व योगदान दिया है। यही कारण है कि वह सृजना, अन्नापूर्णा, देवी, युग दृष्टा और युग सृष्टा होने के साथ ही स्वयं-सिद्धा भी है।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डॉ. श्रीमती मंजू पाटनी, प्रसार एवं संचार।
2. आर.सी. श्रीवास्तव, प्रसार एवं संचार।
3. डॉ. श्रीमती मंजू पाटनी, प्रसार एवं संचार का परिचय।
4. रमा शर्मा, एम.के. मिश्रा, भारतीय समाज में कार्यशील महिलाएं।
5. इंटरनेट

स्त्री की दुनिया और साहित्य

* डॉ. अमित शुक्ल

नारी की स्थिति भले ही स्थानिक प्रभाव व काल प्रवाह मे बदलती रही हो, परन्तु हर युग के निर्माण मे उसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। उसकी अस्मिता को लेकर साहित्य मे हमेशा ही समय सापेक्ष अनेकानेक प्रश्न उठाये जाते रहे हैं। समय बदला, युग बदला, स्त्री बदली, उसकी दुनिया बदली। साहित्य दिशा बोधक एवं दिशा स्तम्भ है, आज हमारा युग बोध, जीवन पद्धतियां बदल गयी हैं। देखा जाए तो घूंघट में रहने वाली भारतीय नारी की आज हर जगह दखल है। वह प्रशासनिक सेवा, खेल, कला, संगीत, शिक्षा, स्वास्थ्य, राजनीति में अपनी महत्वपूर्ण जगह बनाकर देश का नाम रोशन कर रही हैं। अब उनकी दुनिया कुछ और है। कल की दुनिया मे भारतीय स्त्री के लिए यह धारणा बलवती थी कि आगे बढ़कर समाज व परिवार का नेतृत्व करना उनके बस की बात नहीं हैं। उनमें त्वरित निर्णय लेने का अभाव होता है। जबकि सदियों पहले से लेकर आजतक का समय गवाह है जिस भी स्त्री को अवसर मिला है उसने मील का एक नया पत्थर खड़ा कर दिया है, आज वे आत्मविश्वास के साथ घर-परिवार, समाज देश या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के हर मसलों पर त्वरित और बेहतर निर्णयों के साथ अपनी राहें स्वयं तय कर रही हैं। देश और विदेश में अनेक ऐसी स्त्री हैं। जिन्होंने अपने दृढ़ निश्चयी ऊर्जावान कार्यों से समाज की नई पीढ़ी को प्रेरणा प्रदान की है।आरंभिक काल से आधुनिक काल के गद्य और पद्य पर अधिकांश रचनाएं भारतीय नारियों के विभिन्न परिदृश्य पर आधारित हैं। हिन्दी साहित्य के चारों कालों में विभिन्न स्वरूप स्पष्ट होते हैं, इस संबंध में प्रसाद जी ने कहा है कि नारी शासन कर सकती है, परन्तु अपने हृदय पर वह अधिकार प्राप्त नहीं कर सकती है। नारियाँ माँ, बहन, पत्नी सभी रूपों में साहित्य और समाज से जुड़ी रही हैं, जहाँ एक ओर नारियों ने हिन्दी साहित्य का सृजन किया है, वहीं दूसरी ओर हिन्दी साहित्य सृजन में प्रमुख पात्र भी रही हैं। वीरगाथा काल में भी नारियों का योगदान हिन्दी साहित्य की दृष्टि से सर्वोपरि रहा है। भक्तिकाल में कबीर जायसी ने भी नारियों को अपने साहित्य में मुख्य पात्र

==========

* प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्वशासी (उत्कृष्टता) महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

बनाया है। तुलसी भी नारी वर्णन में पीछे नहीं रहे। रीतिकाल में भी नारियों ने हिन्दी साहित्य के विशेषकर पद्य विधा में प्रमुख पात्र रही हैं। आदिकाल में भी नारियाँ हिन्दी साहित्य क्षितिज से अछूती नहीं रही हैं। नारियों के चित्रण में गुप्त और प्रसाद दोनों सिद्धस्थ रहें हैं। गुप्त जी की उर्मिला, यशोधरा, कैकेयी आदि कृतियों में नारियों के मानसिक आवेगों की पीड़ा के स्पष्ट दर्शन होते है। जहाँ एक ओर हिन्दी साहित्य के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में भारतीय नारी साहित्य सृजन में तो सक्रिय रही हैं, वहीं वे साहित्यकारों की कृतियों में कथावस्तु बनने में भी पीछे नहीं है। देखा जाए तो बीसवीं सदीं के उत्तरार्द्ध से जीवन और जगत के विविध क्षेत्रों में भारतीय नारी ने अपनी एक स्वतंत्र पहचान बनाई है। सृष्टि के प्रारंभिक काल से उसने स्वयं पर ममतामयी माँ, स्नेहशील भगिनी और सेवारत पतिव्रता पत्नी के आवरण डाल दिए थे, जिससे वह अपनी दक्षता, बौद्धिक सम्पन्नता और शक्ति को भुलाकर मात्र इन्हीं दायरों में कैद हो गई। डॉ. प्रभा खेतान ने अपने एक प्रसिद्ध उपन्यास आओ पेपे घर चलें में लिखा है- ''औरत कहाँ नहीं रोती और कब नहीं रोती? वह जितनी रोती है, उतनी ही औरत होती है।''लेखन नारियों के आत्मसंघर्ष का सबसे सार्थक और उपयुक्त उपकरण है, सृजनशीलता का सीधा अर्थ है जागृति, जब नारी लिख रही होती है तो जिम्मेदारी उठा रही होती है वह महज बुद्धिविलास नहीं कर रही होती क्यों कि अमूमन वह दृष्ट ही नहीं भोक्ता भी है। इसीलिए नारी की अनुभूति पीड़ा और संवेदनात्मक समझ दूसरों से अधिक तीव्र-सांद्र, और सघन होती है। अभिव्यक्ति के निरूपण का सबसे सहज, सफल और संप्रेषणीय माध्यम है लेखन, आज की भारतीय नारी लिख रही हैं इसका अर्थ है उनकी अभिव्यक्ति अब तेजी से बाहर आ रही है। बज्जिका, शीलाभह्लिका, शशि प्रभा, रेवा, रोहा आदि संस्कृत-प्रकृति की कवियित्रियों से लेकर मीरा आण्डाल, अक्कमहादेवी लल्लद्देद, महदम्बा, मोल्लि, आदि विद्रोहिणी साधिकाएं तथा चन्द्रावली, मधुरावली, लाची, भगवती आदि वे लोकनायिकाएं जिनके कंठों से फूटी स्वर रचनाएं कंठों में ही जीवित रहीं और महादेवी वर्मा सुभद्राकुमारी चौहान, बुन्देलवाला, ऊषा देवी मित्रा आदि के माध्यम से स्त्री लेखन जो एक लंबा सफर तय किया है विगत हजार सालों के इतिहास में नारियों की दशा या दुर्दशा का सभी भारतीय को एहसास है। हिन्दी की पहली कहानी करीब सौ वर्ष पूर्व सन् 1900 में किशोरीलाल गोस्वामी लिखित 'इन्दुमती' थी जो सरस्वती पत्रिका में छपी थी, उसके सात साल बाद 1907 में राजेन्द्र वाला घोष उर्फ 'बंग-महिला' ने हिन्दी साहित्य में किसी महिला ने हिन्दी में एक कहानी लिखी 'दुलाईवाला' आधुनिक हिंदी साहित्य में किसी महिला की यह पहली प्रकाशित कहानी थी और इस तरह से वह पहली हिंदी लेखिका बनीं तब से आज तक शताब्दी से ज्यादा के

सुदीर्घ अंतराल में महिलाएं कागज की नाव पर बैठ कभी लोरी सुनाती तो कभी प्रेम गीत गातीं, कभी विरह वेदना से तड़पतीं तो कभी सामाजिक दुखों से कराहती, आँसू बहाती कदम पर कदम बढ़ाती आ रही हैं। हिन्दी साहित्य के स्वर्णकाल माने जाने वाले भक्तिकाल में मीरा पहली बार विद्रोह करती मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोय-गाती ड्योढ़ी लांघ जाती हैं और मीरा के साथ, शेख, सहजोबाई, दयाबाई, और 19वीं सदी की जुगलप्रिया आदि औरतें महिला रचनाकारों में शुमार हो जाती हैं। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान अनेक नारियां आगे आई परंतु नारी लेखन के क्षेत्र में अतिरिक्त बढ़त देखने को नहीं मिली यहां तक की आजादी मिलने के बाद के कई वर्षों तक लेखन में वो गति नहीं आ पाई जो आनी चाहिए। पर उदारवाद ने नारियों की सौकले ढ़ीली कीं और उनमें शिक्षान्मुखता व आत्मविश्वास भरा, बाजार के नाम पर नौकरी के लिए वह बाहर आई सूचना संचार क्रांति पनपी और नौकरी पेशा नारियाँ बढ़ीं, एक बड़ा मध्यवर्ग तैयार हुआ इस सारी स्थितियों ने नारी लेखन की प्रक्रिया में सहयोग दिया परंतु असली जमीन तैयार की इससे पैदा हुई परिस्थितियों ने जिसमें पहले जो स्त्री भोग्या थी वह जिंस बन गई बाजार आधारित बदलते विधान में रिश्ते नाते नैतिक मूल्य और संवेदनाएं, सब कुछ बाजार पर निर्भर इन सब कारकों ने मिलकर नारी को उद्वेलित किया और रचनाधर्मिता के लिए बेहतर जमीन तैयार की यानी ग्लोबलाइजेशन लिब्रलाइजेशन के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलू नारी लेखन के लिए समान रूप से लाभप्रद रहें, तकनीकि और वैश्वीकरण का लाभ यह हुआ कि महज प्रकाशन में ही नहीं इंटरनेट, ब्लाग, विभिन्न साइटों पर भी लेखिकाओं ने अपनी सार्थक और लोकप्रिय उपस्थिति दर्ज कराई है कुल मिलाकर देखा जाए तो कल की अपेक्षा आज की भारतीय नारियों द्वारा खूब लिखा जा रहा है उनके आज के साहित्य में परिपक्तता आ गई है वो युग के अनुरूप अपनी लेखनी चला रहीं हैं। आज की नारी का साहित्य यथार्थता की मिसाल है। वह अब पहले से सजग और सचेत हो गई है। आज की स्त्री जागृत व सक्रिय है, उनकी सक्रियता देखकर स्वामी विवेकानंद जी का यह कथन स्मरण हो आता है जब उन्होंने कहा था कि- 'नारी जब अपने ऊपर थोपी गई बेड़ियों एवं कड़ियों को तोड़ने लगेगी तो विश्व की कोई शक्ति उसे रोक नहीं सकेगी। आजादी के पूर्व भारतीय स्त्री घर में सिमटी थी परन्तु राष्ट्रीय आंदोलन के कारण बाहर आई जैसे सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा, सरोजनी नायडू आदि अनेकों नाम। आज की भारतीय स्त्री ने अपनी क्षमता और संघर्ष से ऊँचाइयों को छुआ है, वे अंतरिक्ष से लेकर हिन्दीसाहित्य के क्षेत्र में भी अपनी विशिष्ट पहचान बना रही हैं। अपने लेखन से उन्होंने देश और समाज को एक नई दिशा दी है। उनका साहित्य उठाकर देखें तो एक से एक सर्वश्रेष्ठ कृतियां

हम सब के समक्ष आती हैं। घर परिवार, शिक्षा, समाज के साथ-साथ साहित्य में भी स्त्री का विशेष योगदान हैं। हिंदी साहित्य के सृजन में स्त्री का योगदान प्रारंभिक काल से ही परिलक्षित होता रहा है। प्रत्येक साहित्य में अनेक विधाएं होती है। हिंदी साहित्य में यही बात दृष्टिगत है-गद्य साहित्य हो या पद्य साहित्य स्त्री कहीं भी पीछे नजर नहीं आती। वर्तमान समय की स्त्री मे अत्यंत परिवर्तन आया है। स्त्री की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, पारिवारिक, राजनैतिक और सामाजिक क्षमताओं मेबदलाव आ गया है। वह ग्राम पंचायतों, जनपद पंचायतों, विधानसभा औरलोकसभा में अपना महत्व व उपयोगिता सिद्ध कर चुकी है। यही बात उद्योग और नौकरी व अन्य क्षेत्रों में हैं। परिवार या समाज में जहां भी महिलाओं को आजादीमिली है, वे अंतरिक्ष से लेकर हिमालय तक, व्यापार से लेकर राजनैतिक क्षेत्रों में अपने कदम बढ़ा रही हैं। स्त्री की दुनिया सिर्फ यही तक सीमित नही उनकी दखल जहां अनेक क्षेत्रों मे है वहां साहित्य के क्षेत्र मे भी वो बहुत आगे है। देखा जाए तो भारतीय हिन्दी साहित्य में सन् 1960 के आस-पास स्त्रियों की समस्याओं पर खुलकर विचार होने लगा और उनका समाधान भी। मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, मैत्री पुष्पा, मृदुला गर्ग, मृणाल पाण्डेय, सूर्यबाला, चित्रा मृद्गल, उषाप्रियवंदा, अनामिका, कुमकुम शर्मा, आदि अनेक लेखिकाएं हिन्दी साहित्य मे अपनी लेखनी का लोहा मनवाया है। पुरूष के सत्तात्मक समाज में स्त्री गूंगीथी, उसने साहित्य के माध्यम से बोलना सीखा और अपनी भाषा को गढ़ा। अगर आज की स्त्री लेखिकाएँ यह मानकर चलती हैं कि वे इस व्यवस्था कोएक झटके से बदल देंगी तो पूरी सामाजिक बनावट भी चरमरा जाएगी। इसलिए लेखिकाओं के मध्य में चिंतन किया जाना चाहिए उनकी सोच नकारात्मक है या सकारात्मक हैं। असल में चाहे मातृ सत्तात्मक समाज में चाहे पुरूष सत्तात्मक समाज में आखिर स्त्री को यानी औरत को एक समाज में रहकर एक अदद उसे चाहने वाला पुरूष चाहिए और उसकी इज्जत करने वाला कम से कम एक अदद बच्चा भी। समाज में रहकर पारिवारिक व्यवस्था में स्त्री के लिए अजीब सी त्रासदी है कि यदि वह पूरा अधिकार लेती है तो रिश्ता टूटता है और रिश्ता रखती है तो अधिकार छूट जाता है। स्त्री विमर्श के समर्थकों को इस प्राणतत्व को समझना चाहिए। निश्चय ही नारी के हृदयका यह सूत्र हांथ लगने पर ही समाज में रहकर स्त्रीत्व के विमर्श को सार्थक कर सकता है। आज का साहित्य जिनमे चर्चित नाम हैं जिन्होंने वर्तमान समय के साहित्य में अपनी विशेष छवि स्थापित की है उनमें हैं, सुषमा बेदी,ज्योत्सना मिलन, डॉ. कृष्णा अग्निहोत्री, डॉ सरोजनी प्रीतम, नाटकों के क्षेत्र में भारतीय नारियों में लोकप्रिय नाम-गिरीश रस्तोगी, अर्चना, वर्मा, डॉ. कमलकुमार, डॉ. भावना, शैलजा सक्सेना, स्नेह ठकोर, पुष्पिता अवस्थी, अर्चनापैन्यूली, संजीता

वर्मा, डॉ. इंदिरा आनंद, रेणु, राजवंशी गुप्ता, रेखा मित्रा, नीनापाल, सत्यभामा, आडिल, क्षमा शर्मा, रति सक्सेना, दिव्या माथुर, उषा राजे सक्सेना, तोषी अमृता, पूर्णिमा बर्मन, डॉ. सुधा ओम ढींगरा, डॉ. इला प्रसाद,पुष्पा सक्सेना, सुदर्शन प्रियदर्शिनी, विधा बिंदु सिंह, सुधा, अरोड़ा, भी नाटकों के अलावा जो अन्य विधाओं में भी लेखन कार्य कर रहीं हैं, उनमें चर्चित नामहैं-डॉ. सुशीला गुप्ता, अहिल्या मिश्रा, इंदू बाली, लक्ष्मी कुमारी चूड़खल, पद्मा सचदेव, सावित्री डागा, सुभदा पाण्डेय, राज बुद्धिराजा, उषा किरण खान, डॉ.शांति जैन, बुद्धिराजा, ऋता शुक्ला, डॉ. मधु धवन, डॉ. सत्यभामा आडिल, क्षमा शर्मा, रति सक्सेना दिव्या माथुर, उषा राजे सक्सेना, नीना पाल, शैल अग्रवाल, अचला शर्मा, कादंबरी मेहरा, पुष्पी भार्गव, डॉ. योगेश्वरी शास्त्री, इलाकुमारी, मीनाक्षी जोशी, सुधा अरोड़ा, डॉ. राजम नटराजन, तेजी ग्रोवर, सुलभा कोरे, शील निगम, मिथिलेश कुमारी मिश्र, मृदुला सिन्हा, सुखदा पांडेय,उर्मिला कोल, किरण घई, उषा ओझा, डॉ. शरद सिंह, डॉ. सुनीता खत्री वीणा सिन्हा, डॉ. अनुसुइया अग्रवाल, लतिका भावे, शकुंतला शर्मा, डॉ. स्वाति तिवारी नलिनी शर्मा, शकुंतला तरार, सुधा वर्मा, अलका पाठक, डॉ. उर्मिला शिरीष, मधु कांकरिया, शर्मिला बोहरा जालान, अरूणा कपूर, उषा जायसवाल, उलका सिन्हा, गीता श्री, इंदिरा मोहन, गीतांजलि श्री, बंदना राग, जयंतीरंगनाथ, कानन, भींगन कमला। रश्मि रमानी, डॉ. आशा पाण्डेय, डॉ. दीप्तिगुप्ता, डॉ. मधु बरूआ, डॉ. स्मिता मिश्र, कुसुम अंसल, मनीषा, मृदुला हालन, डॉ. प्रेमलता नीलम, पैमिली मानसी, प्रभा शर्मा, डॉ. सरिता शर्मा, डॉ. पूनमशर्मा, रीतारानी पालीवाल, सविता सिंह, उषा महाजन, सुजाता चौधरी, वर्तिका नंदा, अंजु दुआ जैमिनी, धोरा खंडेलवाल, गीतिका गोयल, मधु संधू, मधुरकपिला, रेखा राजवंशी, बूलाकार, सीमा गुप्ता, नमिता राकेश, पद्मा शर्मा, डॉ. कामिनी, नीलेश रघुवंशी, निर्मल मुराड़िया, रंजना जायसवाल, रमा सिंह,नीरजा माधव, इरा सक्सेना, डॉ. मीना अग्रवाल, नमिता सिंह, मधु चतुर्वेदी, कात्यायनी, नीरजा द्विवेदी, आभा गुप्ता ठाकुर, अलका प्रमोद, डॉ. मुक्ता, डॉ अंजना सुधीर, प्रिया अग्रवाल, जोहरा अफजल, स्वर्ण ज्योति डॉ. सुप्रिया, आदि भारतीय नारियों ने हिंदी साहित्य के लेखन में अपनी महत्वपूर्ण जगह बनाली है। इस प्रकार स्त्री लेखन की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है।

निष्कर्ष यह है कि स्त्री की दुनिया निराली है, आज की दुनिया में स्त्री पुरूषों से भी आगे निकल गयी है। आज की स्त्रीसाहित्यकार बड़े बेबाकी से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहीं हैं। कहानी, उपन्यास, कविता, आत्मकथा, संस्मरण, तथ्य परक रिपोर्टों के माध्यम से स्त्री लेखन के जागरूक और संवेदनशील सार्थक हस्तक्षेप करने वाले विविध आयाम आज दिखाई दे रहे हैं। वरिष्ठ पीढ़ी की

लेखिकाओं में जहाँ उनके लेखन में मध्यमवर्गीय निम्नमध्यवर्गीय समाज के जिन सरोकारों को सीमित स्थान दिया था वहीं आज की लेखिकाओं में विस्तार पा रहा है उनके लेखन में आत्मविश्वास की पैनी धार और शिल्प में भी परिपक्तता आई है। आज की लेखिकाओं में जो बात सामने आ रही है वह है खुलापन, समाज व्यवहार बदल रहा है, औरत बदल रही है स्त्री के खुलेपन का आकाश और बोल्ड होने की अकुलाहट की इबारत स्त्री लेखन की नई बिसात और चाहत में तब्दील है, आंचल में है दूध और आंखों में है पानी की तस्वीर अब उलट गई है,, यह तस्वीर अपने नए तेवर में उपस्थित है। भारतीय स्त्री की तेज लेखनी की धार से सब्जियों की तरह कटते जा रहे हैं, तमाम पारिवारिक, सामाजिक और मानसिक बंधन नारी मुक्त हो गई है। दिल से दिमाग से और देह से भी चाहे जो भी हो पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि हिंदी साहित्य स्त्री लेखन के माध्यम से अत्यन्त समृद्ध हुआ है, ये हर क्षेत्र की तरह साहित्य में भी अपनी उपस्थिति सशक्त ढंग से दर्ज करा रही हैं, वे निरन्तर साहित्य सृजन में आगे आरही हैं। स्त्री लेखन की नई पीढ़ी अच्छा काम कर रही है। स्त्री शक्ति, स्त्री साहित्य, स्त्री चेतना को सामाजिक परिवेश में उभारा जा रहा है सवाल जन्मजात रचनात्मकता का है, एक संवेदनशील परिवेश का है जिसमें स्त्री पुरूष से एक कदम आगे है।आधुनिक साहित्य में स्त्री का रचनात्मक योगदान बहुत अधिक है। राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय फलक पर अपनी लेखनी से आज की भारतीय स्त्री धूम मचा रही है। वही उन स्त्री रचनाकारों की भी संख्या अधिक है जो किसी राज्य के सुदूर कस्बे या छोटे शहरों में रहकर हिन्दी की सेवा में रत हैं। साहित्य ही नहीं अकादमिक, और साहित्येत्तर विधाओं में भी उन्होंने अपनी कलम का लोहा मनवाया है। आज से 50वर्ष पूर्व सबसे पहले दो लेखिकाओं सीमा वीरा और सुनीता जैन ने अमेरिका के साहित्य से विश्व को परिचित करवाया था, पर आज भारतीय स्त्री में हिंदी लेखन के प्रति रूझान बढ़ रहा है। भारतीय स्त्री चाहे देश में रहें या विदेश में इन लेखिकाओं ने भारत को गौरवान्वित किया है। प्रवासी भारतीय स्त्री लेखिकाओं में पहला नाम उषा प्रियवंदा का है जिसका विदेश में पहला कहानी संग्रह एक कोई दूसरा किसी प्रवासी हिंदी स्त्री रचनाकार की पहली रचना बनी। आज ये स्त्री अपनी लेखनी से हिंदी साहित्य को समृद्ध करने के साथ ही साथ हिंदी के प्रचार-प्रसार का भी स्तुत्यप्रयास कर रही हैं। देखा जाए तो साहित्य में स्त्री उत्थान की वकालत लंबे अरसे से की जा रही है अब उसे और घार देने की जरूरत है। इतना सब कुछ होते हुए भी आज भी भारतीय स्त्री को समाज में हाशिए पर ही जगह दी जाती है। ऐसी सामाजिक मानसिकता में बदलाव जरूरी है। सामाजिक बंधनों से मुक्ति दिलाने में शिक्षा स्वयं सेवी संस्थाओं, रचनाकारों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कुल मिलाकर

शिक्षाने भारतीय स्त्री को जागरूक बनाया है। प्रत्येक क्षेत्र में दखल के साथ-साथ साहित्य में भी उनका वर्चस्व है। अब वह कल की भारतीय स्त्री अबला नहीं रही सबला हो गयी है, क्यों कि अब वह-

'कोमल है कमजोर नहीं,
शक्ति का नाम ही नारी है।
सबको हिम्मत देने वाली,
मौत भी तुझसे हारी है।
कोमल और कमजोर समझकर जिसको सबने देखा है
वह कमजोर नहीं शक्तिशाली है,
सभी गुणों की अवतारी है।

आज स्त्री की दुनिया ही बदल गयी है। वह हर क्षेत्र मे पुरूषों से भी आगे नजर आ रही है। वास्तव मे आज की दुनिया स्त्री की दुनिया है। जिसकी दखल हर क्षेत्र मे है और वो हर क्षेत्र मे बेहतर कार्य कर रही हैं।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. दि संडे राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार पत्र दिल्ली, नोएडा, देहरादून से प्रकाशित उत्तराखण्ड संस्करण,20-02-2011 लेख-सृजन संसार केअंतर्गत डॉ अमित शुक्ल, रीवा पृष्ठ, 20
2. महिला सशक्तिकरण, भाग 1, ओमेगा पब्लिकेशन दरियागंज नई दिल्ली संपादक, डॉ. वीरेन्द्र सिंह यादव लेख-डॉ. अमित शुक्ल पृष्ठ 133,155
3. महिला सशक्तीकरण दशा एवं दिशा, संपादक-अखिलेश शुक्ला, गायत्री पब्लिकेशन रीवा, लेख-डॉ. अमित शुक्ल, पृष्ठ - 51
4. आजकल साहित्य और संस्कृति की मासिक पत्रिका मार्च 2011 सूचना भवन लोदी रोड नई दिल्ली पृष्ठ 47
5. 'अक्षर पर्व' देशबन्धु-प्रकाशन विभाग रायपुर छत्तीसगढ़ पृष्ठ 33
6. द संडे इंडियन विशेषांक सितंबर 2011 गौतम बद्ध नगर नोएडा उत्तरप्रदेश पृष्ठ 34, 36
7. स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष।

स्त्रियों के प्रति चली आ रही परंपरागत अवधारणों को चुनौती देता उपन्यास : पंचकन्या

* निशा मिश्रा
** डॉ. रानी अग्रवाल

'पंचकन्या' स्त्री-जीवन के स्वातंत्र्य, अभिलाषा, उल्लास की स्तुति है। यह उपन्यास पाश्चात्य से आयातित स्त्री-स्वतंत्रता के" फेमिनिज्म" शब्द के विरुद्ध स्त्री- स्वातंत्र्य को ज्यादा जीवंतता प्रदान करता 'एलिस वाकर' द्वारा समर्थित "वुमेनिज्म" शब्द के समकक्ष स्त्री-स्वतंत्रता का भारतीय-दर्शन है। इस उपन्यास में 'स्त्री-अस्मिता' को लेकर चल रहे विमर्शों का स्पष्ट उत्तर है कि जिस प्रकार समाज में एक पुरुष, पुत्र, पति, पिता की भूमिका से परे सर्वप्रथम एक पुरुष है, उसी प्रकार एक स्त्री, पुत्री, पत्नी, माता की भूमिका से पहले एक 'कन्या' है। जिस प्रकार पुरुष में पुरुषत्व का गुण अक्षुण्ण है, उसी प्रकार एक स्त्री में कन्या तत्व अक्षुण्ण है -"कौमार्य का वरदान किसी स्त्री की केवल शारीरिक अवस्था नहीं वरन् मानसिक अवस्था के लिए माना जाता है, जो कि वह किसी के भी बंधन से सदैव मुक्त रही हो, किसी के दासत्व से या किसी एक निर्धारित पुरुष पर निर्भर होकर न रही हो। वह अपने आप में एक हो, पूर्ण-स्वयं-सिद्धा (परिशिष्ट: पंचकन्या : स्त्री सारगर्भिता -217) बस आवश्कता है तो उस अक्षुण्ण तत्व को महसूस करने की है।

स्त्री-विमर्श के इस साहित्यिक आन्दोलन में, जो कहने को तो स्त्री-मुक्ति का आन्दोलन है, किन्तु उसकी केन्द्रीय भूमिका में पुरुष ही विद्यमान है, उसी के प्रेम की इच्छा है, उसी के द्वारा किया शोषण है और इसमें स्त्री की दशा एक ठगी स्त्री की सी है। स्त्री की स्वयं की अभिव्यक्ति होने के बावजूद भी क्यों एक पुरुष से दुसरे पुरुष में आसरा ढूंढने का प्रलोभन है, प्रतिकार क्यों नहीं? अपने अस्तित्व की रक्षा और प्रतीक्षित प्रतिकार के इन्हीं शब्दों से यह उपन्यास प्रारंभ होता है -"और सुन लो, सच्चा प्यार और एकनिष्ठता खोज रहे हो तो मुझसे तो नहीं पटेगी

==========

* शोध छात्रा, जुहारी देवी गर्ल्स डिग्री कॉलेज, कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर उ.प्र.
** शोध निर्देशिका, जुहारी देवी गर्ल्स डिग्री कॉलेज, कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर उ.प्र.

तुम्हारी क्योंकि सच्चा प्यार करने का ठेका क्या हम लड़कियों ने ही ले रखा है?" (मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, पृष्ठ 12) उपन्यास के केंद्र में कोई पुरुष नहीं है। पंचकन्या के अनुरूप रचित किसी भी स्त्री-पात्र के जीवन की धुरी पुरुष पर नहीं टिकी है।

उपन्यास में कथा संयोजिका प्रज्ञा, जो कि पुत्री के रूप में जन्म लेने के कारण पिता द्वारा उपेक्षित सिंगल पेरेंट चाइल्ड तथा भारतीय नृत्य सीखने आयी एक विदेशी पात्र एग्नेस के माध्यम से उपन्यास-लेखिका ने इतिहास और पुराणों में पाए जाने वाले पंचकन्याओं के मिथकीय चरित्र को आज के समय में वर्तमान कर दिया है। पंचकन्याओं में अग्रणी चरित्र अहिल्या का है जिसके अनुरूप इस उपन्यास में अवान्या का चरित्र है, जो पत्नीत्व और मातृत्व की गरिमा प्राप्त कर चुकी है, किन्तु जिस प्रकार अहिल्या का इंद्र के प्रति सहज आकर्षण था, उसी प्रकार आवान्या एक पाकिस्तानी उस्ताद फैजल की मोहक नृत्य-मुद्राओं के प्रति सहज आकर्षित हो जाती है, और अपने नारीत्व को संबंधों के बंधन से मुक्त कर अभीष्ट का वरण करती है। पंचकन्या में दूसरा चरित्र के मार्गदर्शिका के रूप अर्थात् मंदोदरी का है, जो समय-समय पर अपने पति रावण को सीता-अपहरण के विध्वंसक परिणाम के विषय में निर्देशित करती है तथा पति की मृत्यु के उपरांत देवर से पुनः-विवाह कर लाइन की परंपरा का पालन नहीं करती, इसी प्रकार मंजू काकी गौने से पूर्व ही पति की मृत्यु हो जाने पर भी अश्विन से विवाह नहीं करती और एक सफल शिक्षिका के रूप में जीवन व्यतीत करतीं हैं। पंचकन्याओं में तीसरा चरित्र जिज्ञासु-मनः कन्या चरित्र कुंती हैं,जो आशीर्वाद स्वरुप पाए वरदान का परीक्षण करने की चाह में सूर्य को अपने प्रथम समागम के लिए आमंत्रित करती हैं, जिसके परिणाम-स्वरुप भविष्योन्मुखी जीवन एक बीज उसे प्राप्त होता है, किन्तु इस घटना के पश्चात् उसका मान ग्लानि से भर जाता है। उसी प्रकार अपने सपनों में छिपे अर्थ के उद्घाटन की जिज्ञासा लिए माया अश्विन के समीप आती है, जिसकी पश्चात् परिणति कुंती के समान अपराध-बोध के रूप में होती है। लेखिका ने अपनी वैचारिक उत्कृष्टता का प्रदर्शन करते हुए द्रौपदी के वर्तमान चरित्र को गढ़ा है। वह भली-भांति जानती थी कि भारतीय-संस्कृति में एक बार तो द्रौपदी के चरित्र अर्थात् पांच पुरुषों से सम्बन्ध को करुणा और विवशता की चादर से ढँक दिया गया है किन्तु भारत-भूमि में दोबारा जन्मी द्रौपदी, वह भी कन्या के गुणों से परिपूर्ण स्वीकार्य नहीं होगी। अतः द्रौपदी के चरित्र का साम्य एक विदेशी महिला एनाबेला रोश के चरित्र से कराया है, जिसके चार पुरुषों से सम्बन्ध रहे और बिना किसी ग्लानि तथा अवलंबन की चाह के वह अपनी वृद्धावस्था में भी उन्मुक्त और आत्म-संतुष्ट थी। तारा के अनुरूप पांचवी पंचकन्या

कालिंदी है, जो किसी पुरुष के कर्म की भोक्ता नहीं बनती है-"दो नरों की हार और जीत का मुआवजा क्यों बनी मैं? शायद अंगद की माँ होना भर ....." (मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, पृष्ठ-179) एक विधवा का अभिशप्त जीवन जीने तथा अपने संतान को संरक्षण प्रदान करने हेतु सत्ता का चयन करती है। ऐसा ही कालिंदी ने आफताब तथा अजय के सन्दर्भ में किया।

मनीषा कुलश्रेष्ठ ने आधुनिक नारी के रूप में प्रज्ञा, माया, एग्नेस तथा सोपीना का चित्रण कर स्त्री की पुरुष पर निर्भरता के सम्बन्ध को, दैहिक सम्बन्ध को, संवेदनात्मक तथा मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध को नकार कर उनके बीच एक सामाजिक सम्बन्ध की स्थापना की है, जो प्रज्ञा-प्रशांत के सम्बन्ध-विच्छेद में, प्रज्ञा-निनाद के सहज मैत्री-पूर्ण सम्बन्ध में तथा एग्नेस-अनन्तदेव, एग्नेस-डेनियल के संयमित चरित्र में दिखाई देती है। यह है स्त्री-जीवन का आधुनिकता-बोध, जो हर परंपरा और सम्बन्ध के पीछे छिपे छलावे से परिचित है।

इस उपन्यास के स्त्री-जीवन के सरोकारों से परिचित होने के पश्चात् मैं आपका ध्यान इस उपन्यास के सामाजिक एवं राष्ट्रीय सरोकारों की ओर ले जाना चाहूंगी। मेरे अल्प अध्ययन में पहली बार मुझे स्त्री-विमर्श का ऐसा उपन्यास मिला जो सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर की समस्याओं को भी इंगित करता है।

मनीषा ने अपनी जन्मस्थली राजस्थान में रहने वाली एक कालबेलिया जन-जाति की जीवन शैली को उपन्यास के पृष्ठों पर उकेरा है, जो नाच-गाकर अपना जीवन-यापन करते है और वृद्ध हो जाने पर भीख मांगने के लिए मजबूर है। इस अभाव-ग्रस्त जीवन में 'पुष्कर मेला' उस अनुकूल ऋतु के समान है,जिसमे चींटी की भांति वे अपनी जेबे भरते है, आने वाले समय से निपटने के लिए-"हमें शर्म नहीं आती भारत की छवि बिगड़ते हुए मगर वे शर्मिंदा होते है भारत में अपनी छवि को लेकर" (मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, पृष्ठ 126)

इस तथ्य के उजागर होते ही भारत द्वारा विदेशी सैलानियों हेतु अपील किये जाने वाला "अतिथि देवों भव:" कैम्पेन स्वतः ही धराशायी हो जाता है, क्योंकि इस प्रकार हाशिए का जीवन जी रहे लोगों के लिए सैलानियों का आगमन बसंत के आगमन से कम नहीं और ऐसे देवों के स्वागत की अपेक्षा उनसे अभीष्ट पा लेने का व्यवहार ही स्वाभाविक है। प्रज्ञा और सुरेश के संवाद द्वारा पता चलता है कि आदिवासी समाज के लिए बनी विशिष्ट नीतियाँ केवल कागजों पर ही चिन्हित है-"कहने को ही जन-जाति का आरक्षण है। "(मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, पृष्ठ-135)

उपन्यास-लेखिका स्त्री के मुक्ति-कामी जीवन की आकांक्षी तथा आदिवासी जीवन को हाशिए से उठाकर मुख्यधारा में लाने की प्रणेता होने के उपरांत भी अपनी अभिव्यक्ति की शैली में न तो उपदेशात्मक है, और न ही हिंसात्मक। जिस

प्रकार उपन्यास में वर्णित कन्या-तत्व भौतिक-स्वतंत्रता से अधिक मनोवैज्ञानिक-स्वतंत्रता का द्योतक है, उसी प्रकार कथा का प्रत्येक सूत्र हमें अपने अन्तः कारण को टटोलने पर मजबूर कर देता है, हमें परिस्थिति-विज्ञ बनाता है और परिस्थिति का सामना करने हेतु सशक्त बनाता है।

मनीषा के इस उपन्यास में पंचकन्याओं का चरित्र तथाकथित कहे जाने वाले सभ्य समाज की स्त्रिओं के लिए है, क्योंकि वे या तो देव-रचना थी या तो किसी न किसी प्रकार से राजघरानों से सम्बन्ध रखती थी किन्तु आदिवासी-जीवन में स्त्रियों को पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त है। उनके जीवन का मुख्य संकट सुविधा-संपन्न समाज का अंग न होना है। अतः लेखिका ने महाभारत पुराण से सत्यवती के चरित्र का चयन किया है,एक ऐसे ही समाज (मछुआरिन) का अंग थी, किन्तु ऋषि पाराशर से संयुक्त हो जाने के उपरांत आशीर्वाद-स्वरूप मत्स्यगंधा से योजनगंधा में परिवर्तित होकर राज-परिवार का हिस्सा बनती है। इस उपन्यास में सत्यवती के समकक्ष बादाम सपेरन का चरित्र है। बादाम जैसा जीवन पाना अन्य कालबेली स्त्रियों के लिए स्वप्न-सा है। जिसे पाने के लिए सोपीना को शारीरिक शोषण का शिकार होना पड़ता है- "अब हर मत्स्यगंधा तो योजनगंधा नहीं बन सकती न। (मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, पृष्ठ137) किन्तु बाद में वह स्वयं में ही अपनी सार्थकता ढूंढती है।

मनीषा ने अतीत में, वर्तमान में, भारत में, विदेश में, हाशिए पर, मुख्यधारा में, 'कन्या- तत्व' की पहचान कर उसे सर्वव्यापी बना दिया है। उपन्यास में प्रस्तुत विभिन्न परिवेश, चाहे भारत का तंत्र-मन्त्र हो या शहरों की भाग-दौड़ या लन्दन का बर्फीला माहौल कथा को यथार्थता से परिपूर्ण कर देता है। सपनों की व्याख्या में रंगों का खेल, नृत्य की सधी विभिन्न शैलियाँ, कालबेलिओं का उन्मुक्त नृत्य और बंदरों पर बनाई जाने वाली में उनका आपसी व्यवहार पाठकों पर वर्षा की फुहारों-सा प्रतीत होता है। जो न तो उपन्यास को एक-रस होने देता है और न ही पाठकों को समस्या से बोझिल, क्योंकि लेखिका जानती है कि किसी गंभीर और दूरगामी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मनुष्य में उत्साह का बने रहना परम आवश्यक है।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. प्रदीप भट्टाचार्य, पंचकन्या : स्त्री सारगर्भिता (अनुवाद- मनीषा कुलश्रेष्ठ), सामायिक प्रकाशन, 2014 पृ. 217
2. मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, सामायिक प्रकाशन, 2014 पृ. 12
3. मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, सामायिक प्रकाशन, 2014 पृ. 126
4. मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, सामायिक प्रकाशन, 2014 पृ. 135

5. मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, सामायिक प्रकाशन, 2014 पृ. 137
6. मनीषा कुलश्रेष्ठ, पंचकन्या, सामायिक प्रकाशन, 2014 पृ. 179
7. सरस्वती, द्वितीय अंक, जुलाई-सितम्बर-2015 में स्त्री-विमर्श के आकाश में नई उड़ान, लता शर्मा, पृ. 79
8. समालोचन : स्तम्भ-परखः पंचकन्या (मनीषा कुलश्रेष्ठ), सतीत्व और मातृत्व से मुक्त-स्त्री की सृजनशीलता, विवेक मिश्र

चरित्र-निर्माण की प्रथम एवं प्रधान शिल्पी - माता

* डॉ. बसन्त कुमार मिश्र

पौराणिक एवं ऐतिहासिक दृष्टान्त हमारे दैशिक शास्त्र के इस सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं कि चरित्र -निर्माण की प्रथम एवं महान शिल्पी माता ही है। भारत को अपने अतीत गौरव के समुन्नत शिखर पर पुनः आरूढ़ कराने के लिये हमें उच्च -चरित्र सम्पन्न नागरिकों की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति तो हमारी मातृशक्ति द्वारा हमारे प्राचीन दैशिक शास्त्रानुसार अपना आहार-विहार , परिधान, शिक्षा आदि के अपनाने पर ही होगी।

स्त्रियां रोचमानायां सर्व तद् रोचते कुलम्।
तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते।।

अर्थात् स्त्रियों के अच्छे लगने पर (शोभित होने पर) वह समस्त परिवार समाज में अच्छा (आदरणीय) लगता है व उनका, सम्मान न होने पर समाज में वह परिवार शोभित नहीं होता है। जिस कुल में नारियों का सम्मान होता है वह कुल फलता-फूलता है। जैसा कि मनुस्मृति में है- ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।''

भारतीय संस्कृति में चरित्र को सर्वोच्च महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। बालक के चरित्र- निर्माण में माता, पिता, गुरु, शिक्षक, मित्रमण्डली, पढ़ी जाने वाली पुस्तकें, पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश आदि सभी का न्यूनाधिक प्रभाव पड़ता है। गर्भाधान से ही मनुष्य के चरित्र-निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। हमारी संस्कृति में ऐसी व्यवस्था की गयी है कि यदि पथ-प्रदर्शक माता, पिता, गुरु, आचार्य, उच्चकोटि के चरित्रवान् मिल जायँ। तो मनुष्य अपना चरम उत्कर्ष-साधन कर सकता है। इनमें से भी चरित्र-निर्माण में माता की भूमिका भित्ति-स्थानीय है और चरित्र पर माता के शील, व्यवहार एवं शिक्षा की अमिट छाप पड़ना अनिवार्य है।

हमारे शास्त्रों में विस्तार से चर्चित इस विषय पर निम्न निष्कर्ष प्रतिपादित हुए हैं -

---

* 'प्रवक्ता' चिन्मय विद्यालय, एन.टी.पी.सी. उंचाहार, रायबरेली (उ.प्र.)

1. साधुओं का परित्राण, दुष्टों का विनाश एवं धर्म-संस्थापन करने वाले श्रेष्ठ वीर पुरुष तभी उत्पन्न होंगे जब पिता के ब्रह्मचर्य के साथ माता के पतिदेवत्व का संयोग होगा।

2. प्रथमतः माता-पिता के तीव्र संस्कार अपत्य को दाय-रूप में प्राप्त होते हैं। द्वितीयतः गर्भ में जैसे संन्निकर्ष होते हैं, वैसी ही जीव की प्रवृत्ति बन जाती है। तृतीयतः रजस्वला होने के पश्चात् प्रायः एक पक्ष तक गर्भाधान हुआ करता है। आधिजनिक शास्त्र के अनुसार इन तीनों बातों को एकत्र करने से यह सिद्धान्त प्रतिपादित होता है कि रजस्वला होने के पश्चात् प्रायः एक पक्ष तक स्त्री के चित्त में जैसे संस्कार होते हैं, जैसे उसके आचार-विचार और आहार-विहार रहते हैं, जैसी उसके गर्भाशय की अवस्था होती है, गर्भस्थ जीव में वैसे ही गुण होते हैं। अतः इस शास्त्र में ऋतुमती स्त्री के लिए विशेष प्रकार की चर्या, विशेष प्रकार की औषधियाँ और विशेष प्रकार का भोजन कहा गया है। तदनन्तर गर्भाधारण के दिन से प्रसव होने तक गर्भवती स्त्री के लिये भिन्न-भिन्न मासों में भिन्न-भिन्न विधि से भिन्न-भिन्न प्रकार की औषधियाँ और विशेष प्रकार का भोजन बताया गया है। इनका कुछ उल्लेख हमारे वैद्यक शास्त्र और संस्कार विधि में पाया जाता है। आधुनिक जीवशास्त्र का भी यह मत रहा है कि अनेक प्रवृत्तियाँ उसके गर्भावस्था से ही बन जाती हैं।

अतः वीर एवं सच्चरित्र बालक के प्राप्त्यर्थ माता के लिये गर्भावस्था में अपने आचार-विचार, व्यवहार, भोजन, वेशभूषा, स्वाध्याय प्रभृति पूर्णतः सात्विक एवं शुद्ध रखना आवश्यक है। ऐसा कुछ भी नहीं होना चाहिए जिससे सात्विक संन्निकर्षों की हानि होकर राजसिक या तामसिक संन्निकर्ष प्रबल हो जायें। वेशभूषा, भोजन, मनोरंजन के साधन आदि सभी का सात्विक रहना आवश्यक है। शिशु तो कच्ची गीली मिट्टी-सरीखा होता है। उसे माता चाहे जैसा ढाल सकती है। शैशव में शिशु के मन, बुद्धि और शरीर का तीव्र गति से विकास होता है और चूँकि उसका अधिकतर समय माँ के साहचर्य में ही व्यतीत होता है, इसलिए शैशवावस्था में माँ की दैनन्दिन चर्या- भोजन, व्यवहार, परिधान, स्वाध्याय आदि का शिशु के अत्यन्त कोमल चित्त पर अमिट प्रभाव पड़ता है। बालक को श्रेष्ठ चरित्रसम्पन्न बनाने-हेतु उसे उत्तम आध्यापनिक संन्निकर्ष भी मिलना चाहिये जो कि बाल्यावस्था में प्रायः माँ से ही प्राप्त होता है। अध्यापन का अर्थ है उन्नति के मार्ग में ले जाना अर्थात् धर्म को समझने एवं पालन करने की शक्ति उत्पन्न करना, न कि केवल अक्षर ज्ञान। मात्र पढ़ने- लिखने से किसी में धर्मपालन करने की शक्ति उत्पन्न नहीं हो सकती, न किसी की मूर्खता अथवा धूर्तता कम हो सकती है। इसीलिये हमारे शास्त्रों में बाल्यकाल की शिक्षा के लिये कुछ नियम बताये गये हैं,

जैसे - (क) सात्विक आहार (ख) अनामय (ग) ब्रह्मचर्य (घ) प्रेमाचरण (च) क्रीडा (छ) बुद्धि-उद्‌बोधन (ज) शीलोत्पादन (झ) आदर्श जनन और (ट) औदार्य शिक्षा।

उपर्युक्त नियमों में से अधिकांश का पालन बाल्यावस्था में माता द्वारा ही कराया जाना श्रेयस्कर और सुगम भी है। आहार और स्वास्थ्य का ध्यान तो माता को रखना ही है। उचित कार्य करवाने-हेतु माता को बालक पर ताड़ना का प्रयोग नहीं करना चाहिये प्रत्युत अत्यन्त प्रेम से उसे समझाकर वही कार्य करवाना चाहिये। बाल्यकाल के खेलों से ही यौवन के चरित्र का सूत्रपात हो जाता है, अतः बालक को ऐसे खेलों में लगाना चाहिये जिससे उसका शरीर एवं बुद्धि तुल्यरूप से समृद्ध होती रहे और साथ-ही-साथ कल्पनाशक्ति या सहृदयता का भी आविर्भाव होता रहे। शैशव से ही धर्मात्मा महापुरुषों के चित्र दिखाकर और उनकी कथा सुनाकर बालक का आदर्श उच्च बना देना चाहिये। उसके सामने किसी आसुरी सम्पद्-विशिष्ट नीच गुणवाले व्यक्ति की प्रशंसा नहीं करनी चाहिये, चाहे वह व्यक्ति कैसा ही धनवान् और उच्च पदस्थ क्यों न हो। ऐसे सतर्क रहना चाहिये जिससे बालक नीच-संस्कारयुक्त या ऐश्वर्यमदोन्मत्त व्यक्तियों के सम्पर्क में न आ सके। बालक में औदार्य गुण की प्रवृत्ति- हेतु माँ अपने आचरण से बच्चे को स्वार्थ-त्याग का अनुशीलन कराये।

यदि उपर्युक्त शास्त्रीय दिशा-दर्शन पर पूर्ण ध्यान दिया जाय तो बालक सच्चरित्र होंगे ही। महाभारत और पुराण ऐसे महापुरुषों के उपाख्यानों से भरे पड़े हैं। वर्तमान युग में भी ऐसे महापुरुषों के असंख्य उदाहरण हैं। ऐसे कुछ महापुरुषों का वर्णन यहाँ अप्रासंगिक न होगा।

1. श्रीमद्‌भागवत में प्रह्लाद का जन्म दैत्यराज हिरण्यकशिपु की पत्नी कयाधू के गर्भ से होना था। इन्हें गर्भावस्था में ही उत्तम सत्संग एवं ज्ञानोपदेश प्राप्त हो, इस हेतु श्रीभगवान् ने एक विचित्र घटनाक्रम चलाया। देवराज इन्द्र ने हिरण्यकशिपु की अनुपस्थिति में दैत्यों पर प्रचण्ड आक्रमण कर दिया और गर्भवती राजमहिषी कयाधू को बंदी बनाकर वे उसे इस उद्‌देश्य से ले चले कि बालक उत्पन्न होने पर उसकी हत्या करके निर्भय हो जाऊँ। भगवदिच्छा से देवर्षि नारद इन्द्र को समझाकर कयाधू को अपने आश्रम में ले आये, जिससे गर्भावस्था में ही प्रह्लाद एवं उनकी माँ को उत्तम सत्संग प्राप्त हुआ। प्रह्लाद जी के मुख से इसका सुन्दर वर्णन सुनिये-

ऋषिं पर्यचरत् तत्र भक्त्या परमया सती।
अन्तर्वत्नी स्वगर्भस्य क्षेयायेच्छाप्रसूतये।।
ऋषिः कारुणिकस्तस्याः प्रादादुभयमीश्वरः।

धर्मस्य तत्वं ज्ञानं च मामप्युद्दिश्य निर्मलम्।।''

(श्रीमद्भागवत 7/7/14-15)

यहाँ दैत्य पत्नी कयाधू की इस समय की उच्च आध्यात्मिक स्थिति विशेष ध्यान देने योग्य है। अपनी संतान की कल्याण कामना से दैत्य-पत्नी द्वारा देवर्षि की परम भक्तिपूर्वक सेवा-श्रुश्रूषा तथा दैत्य द्वारा भी देवर्षि से भागवत-धर्म का गूढ़ रहस्य-श्रवण और विशुद्ध ज्ञान की प्राप्ति आश्चर्यजनक नहीं लगता क्या ? किन्तु प्रह्लाद को तो जन्म से ही महाभागवत जो बनाना था।

2. दिति ने काम-पीड़ित होकर देवताओं की अवहेलना करते हुए हठपूर्वक प्रजापति कश्यप द्वारा अनुचित वेला में गर्भ धारण किया, जिसका फल यह हुआ कि उसे दो अधम और अमंगलमय पुत्र प्राप्त हुए- हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु। उसी दिति ने जब दुबारा एक वर्ष तक कठोर पुंसवन-व्रत का पालन करते हुए गर्भ धारण किया तो एक नियम में एक दिन त्रुटि हो जाने पर भी उसे महाप्रतापी मरुद्गण पुत्र रूप में प्राप्त हुए। उत्तम संतान की प्राप्ति-हेतु गर्भिणी माता द्वारा पालनीय व्रत के नियमों का प्रजापति कश्यप ने क्या सुन्दर वर्णन किया है-

'किसी भी प्राणी को मनसा वाचा कर्मणा सताये नहीं, किसी को शाप या गाली न दें, झूठ न बोलें, शरीर के नख एवं रोएँ न काटें, किसी अशुभ वस्तु का स्पर्श न करे। जल में घुसकर स्नान न करें, दुर्जनों से बातचीत न करें, बिना धुला वस्त्र न पहने और किसी की पहनी हुई माला न पहनें। जूठा न खायें, मांसयुक्त अन्न का भोजन न करें। जूठे मुँह बिना आचमन किये, खुले बालों सहित, बिना श्रृंगार किये, वाणी का संयम किये बिना घर से बाहर न निकलें। बिना पैर धोये, अपवित्र अवस्था में, गीले पैरों से, उत्तर या पश्चिम को सिरहाना करके, दूसरों के साथ, नग्नावस्था में तथा सुबह-शाम नहीं सोना चाहिए। उपर्युक्त निषिद्ध कर्मों का त्याग करके सर्वदा पवित्र रहें, धुला वस्त्र धारण करे और सभी सौभाग्य के चिह्नों से सुसज्जित रहे। प्रातः काल कलेवा करने से पहले ही गाय, ब्राह्मण, लक्ष्मीजी और भगवान् नारायण की पूजा करें। इसके बाद पुष्पमाला, चन्दनादि सुगन्धित द्रव्य , नैवेद्य और आभूषणादि से सुहागिन स्त्रियों की पूजा करें तथा पति की पूजा करके उसकी सेवा में संलग्न रहे। यह भावना बनाये रखे कि पति का तेज मेरी कोख में स्थित है'। (श्रीमद्भागवत 6/18/47से 53)

3. देवमाता अदिति ने पयोव्रत का पूर्ण विधि के साथ अनुष्ठान किया तो स्वयं भगवान् ही वामन -रूप में प्राप्त हुए। व्रतानुष्ठान के समय माता अदिति के संयमित जीवन चर्या का क्या ही सुन्दर वर्णन है -

चिन्तयन्त्येकया बुद्ध्या महापुरुषमीश्वरम्।
प्रगृह्येन्द्रियदुष्टाश्वान् मनसा बुद्धिसारथिः।।

मनश्चैकाग्रया बुद्ध्या भगवत्यखिलात्मनि।
वासुदेवे समाधाय चचार ह पयोव्रतम्।। (श्रीमद्भागवत 8/17/2-3)

'बुद्धि को सारथि बनाकर मन की लगाम से उसने इन्द्रिय रूपी दुष्ट घोड़ों को अपने वश में कर लिया और एकनिष्ठ बुद्धि से वह पुरुषोत्तम भगवान् का चिन्तन करने लगी। उसने एकाग्र बुद्धि से अपने मन को सर्वात्मा भगवान् वासुदेव में पूर्णरूप से लगाकर पयोव्रत का अनुष्ठान किया।'

4. इसी प्रकार कपिल देव जी को अपने गर्भ में धारण करने योग्य बनने के लिए मुनीश्वर कर्दम के निम्न उपदेशानुसार देवहूति ने तीव्र व्रतचर्या का पालन किया-

धृतव्रतासि भद्रं ते दमेन नियमेन च।
तपोद्रविणदानैश्च श्रद्धया चेश्वरं भज।।
(श्रीमद्भागवत 3/24/3)

देवि! तुमने अनेक व्रतों का पालन किया है, अतः तुम्हारा कल्याण होगा। अब तुम संयम,तप और दानादि करती हुई श्रद्धापूर्वक भगवान् का भजन करो। तभी भगवान् तुम्हारे गर्भ से प्रकट होंगे - 'ते औदर्यो ब्रह्मभावनः'।(श्रीमद्भागवत 3/24/4)

5. माँ अपने संतान को सही मार्गदर्शन द्वारा कितने उच्च पद प्राप्ति करा सकती है इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण माता सुनीति का है जिसने अपने तिरस्कृत और रोरुद्यमान बालक ध्रुव को निम्न उपदेश देकर सर्वोत्कृष्ट पद की प्राप्ति का उपाय बताया-

मामंगलं तात परेषु मंस्था भुङ्क्ते जनो यत्परदुःखदस्तत्।।
आतिष्ठ तत्तात विमत्सरस्त्वमुक्तं समात्रापि यदव्यलीकम्।
आराधयाधोक्षजपादपद्मं यदीच्छसेऽध्यासनमुत्तमो यथा।।
(श्रीमद्भागवत 4/8/17,19)

बेटा ! तू दूसरों के लिये किसी प्रकार के अमंगल की कामना मत कर। जो मनुष्य दूसरों को दुःख देता है , उसे स्वयं ही उसका फल भोगना पड़ता है। सुरुचि ने विमाता होते हुए भी बात एकदम सही कही है। अतः यदि राजकुमार उत्तम के समान राज-सिंहासन पर बैठना चाहता है तो द्वेषभाव को छोड़कर उसी का पालन कर। बस, श्रीभगवान् के चरणों कमलों की आराधना कर। ' माता के उपदेशानुसार चलकर बालक ध्रुव ने उत्तरोत्तर गुरुकृपा , भगवद् दर्शन और परमपद प्राप्त कर लिया।

6. आधुनिक युग के महापुरुषों के चरित्र पर भी माँ की साधना एवं शिक्षा का विशेष प्रभाव परिलक्षित हुआ है। परमहंस देव रामकृष्ण की माता चन्द्रमणि देवी

अत्यन्त धर्मनिष्ठ, सरल स्वभाव एवं पतिव्रता महिला थीं। एक बार उन्हें शारदीय पूर्णिमा के दिन श्रीलक्ष्मी देवी के प्रत्यक्ष दर्शन हुए थे। परमहंस देव के आविर्भाव से ठीक पूर्व उन्हें भगवान् शिव की दिव्य ज्योति के एवं गयातीर्थ के अधिष्ठात्-देवता गदाधर विष्णु के नाना रूप का दिव्य दर्शन हुआ करते थे। इसीलिये उनका जन्म नाम भी गदाधर ही रखा गया था। वह जैसी ऋजुस्वभावा, धर्मशीला, भक्तिमती महिला थीं एवं जैसा सात्विक उनका आहार-विहार था, उन्हें वैसा ही धर्मप्राण, सरल, भक्तिमान्, संसार को ईश्वरप्राप्ति का सही मार्ग-दर्शन करने वाला पुत्र रामकृष्ण के रूप में प्राप्त हुआ था।

7. स्वामी विवेकानन्द के नाम से सुदूर विदेशों में हिन्दूधर्म की विजय-पताका फहराने वाले नरेन्द्रदत्त की माँ श्रीमती भुवनेश्वरी देवी का तो अपने पुत्र के चरित्र-निर्माण पर अत्यधिक प्रभाव था। भुवनेश्वरी देवी प्राचीनपंथी , धर्मपरायणा एवं अत्यन्त तेजस्विनी महिला थीं। वे प्रतिदिन स्वहस्त से शिवपूजन किया करती थीं। पुत्र-कामना से उन्होंने काशीवासी जनैक-आत्मीया महिला को पत्र लिखकर श्रीविश्वनाथ की पूजा एवं हवन की व्यवस्था की थी। फलस्वरूप उन्हें स्वप्न में तुषार-धवल रजतभूधरकांति श्रीविश्वेश्वर के दर्शन हुए थे और वरदान मिला था। नरेन्द्र का जन्मनाम भी इसीलिये वीरेश्वर (संक्षेप में 'विले') रखा गया था। बालक नरेन्द्र बाल्यकाल में अत्यन्त स्वेच्छाचारी और उद्दण्ड थे, किंतु उन्हें शांत करने का माँ ने एक अद्भुत उपाय आविष्कार किया और वह सफल भी हुआ था। 'शिव', 'शिव' कहकर मस्तक पर थोड़ा-सा जल छिड़कते ही उद्दण्ड नरेन्द्र मन्त्रमुग्ध की भाँति शान्त हो जाते थे। बालक का जन्म शिवांश से है, यह दृढ़ विस्वास होते हुए भी बुद्धिमती माँ ने इसे कभी प्रकट नहीं किया। केवल एक बार नरेन्द्र के औद्धत्य से समधिक क्षुब्ध होकर वे बोल उठी थीं - 'महादेव ने स्वयं आकर कहाँ से एक भूत को पकड़कर भेज दिया है।'

माँ के मुख से रामायण एवं महाभारत के उपाख्यान सुनने के लिये नरेन्द्र अत्यन्त आग्रहान्वित रहते। माँ भी प्रतिदिन उन्हें रामायण एवं महाभारत सुनातीं। अतीतयुग के धर्मवीरों के पावन चरित्र सुनकर उनके कोमल मन पर विशेष प्रभाव होता और उनका शिशु मन न जानें किन भाव तरंगों से आन्दोलित होता रहता कि वे अपनी स्वभाव सुलभ चंचलता का परित्याग करके घंटों तक मंत्रमुग्ध होकर शांत बैठे रहते। कभी-कभी माँ का अनुकरण करके बालक नरेन्द्र भी चक्षु मुद्रित करके ध्यान में बैठ जाते और उन्हें अविलम्ब बाह्यजगत् की विस्मृत हो जाती थी। यह एक अद्भुत बात थी। उनके चरित्र पर माँ की साधना एवं शिक्षा की अमिट एवं स्पष्ट छाप विद्यमान थी। परमहंस देव और स्वामी विवेकानन्द मे स्त्री मात्र के लिये मातृभावना इस प्रकार दृढ़ थी कि कोई भी प्रलोभन उन्हें इस भावना से

विचलित नहीं कर सका था।

इसी प्रकार पितृभक्ता बेटी भानी जिनसे सिखों के पंचम गुरु अर्जुन देव सरीखा पुत्र जन्म लिये। छत्रपति शिवाजी को अत्याचारी मुसलमानों के विरुद्ध कमर कसने के लिये माँ जीजाबाई की प्रेरणा एवं शिक्षा ही मुख्य कारण थी।

ऐसे अनगिनत पौराणिक एवं ऐतिहासिक दृष्टान्त हमारे दैशिक शास्त्र के इस सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं कि चरित्र -निर्माण की प्रथम एवं महान शिल्पी माता ही है। भारत को अपने अतीत गौरव के समुन्नत शिखर पर पुनः आरूढ़ कराने के लिये हमें उच्च -चरित्र सम्पन्न नागरिकों की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति तो हमारी मातृशक्ति द्वारा हमारे प्राचीन दैशिक शास्त्रानुसार अपना आहार-विहार, परिधान, शिक्षा आदि के अपनाने पर ही होगी।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. श्रीमद्भागवत, गीता प्रेस गोरखपुर
2. पौराणिक ग्रन्थ।

महिलाओं के प्रति अपराधः एक विश्लेषण

* डॉ. शाहेदा सिद्दीकी

अवधारणात्मक परिचय– अपराध उतना ही प्राचीन है जितना की स्वयं मानव समाज व उसकी सभ्यता। यद्यपि सामाजिक-सांस्कृतिक भिन्नताओं के कारण विभिन्न समाजों के अंतर्गत अपराध की प्रकृति व स्वरूप में अंतर दृष्टिगोचर होता है तथापि अपराध सम्बंधी कुछ व्यवहार प्रतिमान ऐसे हैं जो आदिम समय से लेकर आज तक बदस्तूर जारी है। इन्हीं अपराध प्रतिमानों में एक है- महिलाओं के विरुद्ध अपराध।

महिलाओं के विरुद्ध अपराध की समस्या कोई नयी नहीं है। जबसे हमें सामाजिक संगठन एवं पारिवारिक जीवन के लिखित प्रमाण मिलते हैं तभी से समाज में महिलाएँ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मानसिक सन्ताप, शोषण व हिंसा का शिकार रही हैं। विकास की प्रक्रिया में पिछले कुछ दशकों में आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी, संचार व वैश्वीकरण की गहरी सीख व प्रक्रिया ने इस प्रकार के अपराधों की प्रकृति, गंभीरता व स्वरूपों में इजाफा किया है। विगत् कुछ वर्षों में समाचार पत्र-पत्रिकाओं व दूरदर्शन आदि संचार माध्यमों ने इस समस्या को प्रमुखता देकर जनमानस व समाजविदों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है। फलस्वरूप महिलाओं के विरुद्ध अपराध की समस्या वर्तमान समय की एक प्रमुख सामाजिक समस्या बन गई है।

यद्यपि महिलाएँ किसी भी प्रकार के अपराध की शिकार हो सकती हैं किन्तु ऐसे अपराध जिनमें केवल 'महिला' ही उत्पीड़ित होती हैं एवं जो विशेष तौर पर महिलाओं के प्रति ही किए जाते हैं 'महिलाओं के प्रति अपराध' की श्रेणी में आते हैं। समाज की वास्तुकार स्त्री के प्रति हिंसा की निरन्तर बढ़ती घटनाओं से देश का हर जागरुक और संवेदनशील व्यक्ति व्यथित और चिंतित है, स्थिति इतनी भयावह हो चुकी है कि माँ के गर्भ में ही आधुनिक तकनीक से पहचान कर लड़कियों की हत्या की जाने लगी है। एक अध्ययन के अनुसार 1980 से लेकर 2010 के बीच (30 वर्षों में) लगभग 42 लाख से लेकर 121 लाख के बीच गर्भ में कन्या भ्रूणों

---

* एसोसिऐट प्रोफेसर, समाजशास्त्र, शासकीय उत्कृष्टता महाविद्यालय एवं शोध केन्द्र रीवा (नैक द्वारा 'ए' ग्रेड प्रदत्त)

की हत्या की गई। इस स्थिति ने जनसांख्यकीय सन्तुलन को ही असंतुलित कर दिया। 2011 की जनगणना के अनुसार, स्त्री-पुरुष अनुपात 943 : 1000 पर आ गया, यानी प्रत्येक 1000 पुरुष पर 57 स्त्रियाँ कम हैं। 0-6 वर्ष आयु वर्ग में लिंगानुपात 2001 में 927 के स्तर से गिरकर 2011 में 919 के स्तर पर आ गया। केन्द्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्री मेनका गाँधी का कहना है कि भारत में प्रतिदिन 2000 लड़कियों की हत्या गर्भ में ही कर दी जाती है, जो जन्म भी ले लेती हैं, उनमें से अनेक के गले पर तकिया रखकर उनका गला घोंट कर उन्हें मार दिया जाता है।

महिलाओं के विरुद्ध अपराधों से सम्बंधित दर्ज मामले

क्रम सं.	अपराध की प्रकृति	वर्ष				
		2011	2012	2013	2014	2015
1.	बलात्कार	24,206	24,923	33,707	36,735	34651
2.	बलात्कार का प्रयास	–	–	–	4,232	4,434
3.	महिलाओं का अपहरण	35,565	38,262	51,881	57,311	59,277
4.	दहेज हत्याएँ	8,618	8,233	8,083	8,455	7,634
5.	महिलाओं के शील भंग के उद्देश्य से उन पर किए गए हमले	42,968	45,351	70,739	82,235	82,422
6.	महिलाओं को लज्जित करना	8,570	9,173	12,589	9,753	8,685
7.	पति एवं उसके रिश्तेदार द्वारा करना	99,135	1,06,527	1,18,866	1,22,877	1,13,403
8.	विदेशों से महिलाओं का अपहरण	80	59	31	13	6
9.	महिलाओं को आत्महत्या करने के लिए उकसाना	–	–	–	3,734	4,060
A.	**भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत दर्ज कुल मामले**	**2,19,142**	**2,32,528**	**2,95,896**	**3,25,327**	**3,14,575**
10.	सती रोकथाम अधिनियम में दर्ज मामले	0	0	0	0	0
11.	महिलाओं को अशोभनीय तरीके से दर्शाने से सम्बंधित	453	141	362	47	40
12.	दहेज रोकथाम अधिनियम के अंतर्गत दर्ज मामले	6,619	9,038	10,709	10,050	9,894
13.	घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम के अंतर्गत दर्ज मामले	–	–	–	426	461
14.	महिलाओं के विरुद्ध अनैतिक व्यापार (रोकथाम) अधिनियम के अंतर्गत दर्ज मामले	2,436	2,563	2,579	2,070	2,424
B.	**महिलाओं के विरुद्ध कुल एस.एल.एल. अपराध**	**9,508**	**11,742**	**13,650**	**12,593**	**12,819**
	कुल योग (A + B)	**2,28,650**	**2,44,270**	**3,09,546**	**3,37,922**	**3,27,394**

पूर्ववर्ती शोध कार्यों का अध्ययन-

आरती आर जैरथ तथा राम आहूजा ने पाया कि यद्यपि किसी भी आयु की महिलाएँ बलात्कार के भय से सुरक्षित नहीं हैं तथापि मुख्यत: 12 से 17 वर्ष आयु समूह की लड़कियाँ बलात्कारियों का प्रमुख शिकार होती हैं किन्तु भय एवं सामाजिक कलंक के कारण पीड़ित महिलाओं द्वारा इस प्रकार के प्रकरण न केवल पुलिस बल्कि अभिभावकों को भी नहीं बताये जाते और ऐसी महिलाएँ कुण्ठा के कारण आत्महत्या की ओर अग्रसर होती हैं।

राजेन्द्र पाण्डे ने अपने शोध पत्र में पाया कि भारत में बलात्कार सम्बंधी अपराधों में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है जिसका प्रमुख कारण प्रशासनिक दृष्टि से बलात्कार को गम्भीर अपराध न मानना तथा इससे सम्बंधित कानूनों का लचर होना है। उनके अनुसार बलात्कार से पीड़ित महिला को शारीरिक, मनोवैज्ञानिक व सामाजिक अनेक तरीकों से प्रताड़ित किया जाता है।

डॉ. राम आहूजा के अध्ययन के निष्कर्षानुसार बलात्कार की शिकार 52.4 प्रतिशत तथा अपहरण की शिकार लगभग 85 प्रतिशत महिलाएँ अपराधियों से पूर्व परिचित थीं। गृह मंत्रालय के अपराध अन्वेषण ब्यूरो द्वारा प्रकाशित क्राइम इन इण्डिया सम्बंधी आँकड़ों से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है जिसमें पाया गया कि बलात्कार के 87 प्रतिशत प्रकरणों में अपराधी व उत्पीड़ित पूर्व परिचित थे जिनमें 34 प्रतिशत उनके पड़ोसी तथा 7 प्रतिशत उनके सगे सम्बंधी ही थे।

महिलाओं के प्रति अपराध के कारण-

महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराधों के ये आँकड़े वास्तविक जीवन में महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा के बहुत छोटे हिस्से हैं। इस सच्चाई के बावजूद कि भारतीय समाज में महिलाओं ने अपने प्रति होने वाले अपराधों को दर्ज कराना शुरू कर दिया है। लेकिन अभी भी बहुत सारी महिलाएँ परिवार की एकजुटता और सामाजिक दबाव और कानूनी प्रक्रिया से अनभिज्ञता तथा सामाजिक साहस के अभाव के चलते रिपोर्ट दर्ज नहीं करा पाती हैं।

महिला के प्रति हिंसा के कारणों के विवेचन, विश्लेषण और समाधान के उपायों को महिला-पुरुष के खांचे में या केवल कानून व्यवस्था की समस्या के रूप में देखने के बजाय उसे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवस्था और ऐतिहासिक विकास यात्रा के भीतर संदर्भित करके देखना होगा, जिसके भीतर से पुरुष वर्चस्ववादी मूल्यों और संस्कृति का विकास होता है जो सतह पर महिलाओं के खिलाफ बढ़ते अपराध में परिलक्षित होता है।

महिलाओं के विरुद्ध अपराध के प्रमुख कारण निम्नानुसार हैं-

1. महिलाओं को कमतर या दोयम दर्जे की मानने की परम्परा, संस्कार और मूल्य व्यवस्था।
2. लैंगिक असमानता और भेदभाव के खिलाफ संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों को सामाजिक स्वीकृति न मिलना।
3. महिलाओं को हिंसा से बचाने के कानूनी प्रावधानों को जमीनी स्तर पर लागू न होना।
4. संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों को लागू करने वाली सरकारी एजेंसियों में कार्यरत् व्यक्तियों की स्त्री सम्बंधी सोच और दृष्टि।

5. आर्थिक संसाधनों के वास्तविक स्वामित्व से अधिकांश स्त्रियों का वंचित होना।
6. सार्वजनिक जीवन में पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की कम उपस्थिति। यह स्थिति उन्हें असुरक्षित और असहज बनाती है।
7. महिलाओं के एक हिस्से का अशिक्षित (34.54 प्रतिशत) और अपने अधिकारी के प्रति जागरुक न होना। इसके चलते, वे अपने अधिकारों का समुचित तरीके से इस्तेमाल नहीं कर पाती हैं और अपहरण, जोर जबरदस्ती से शादी, दहेज उत्पीड़न जैसी घटनाओं का शिकार होती हैं।
8. महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति बढ़ती चेतना और संवैधानिक व्यवस्था और कानूनी अधिकारों को व्यवहार में उतारने की कोशिश। यह चीज पितृसत्ता की मानसिकता वाले लोगों को नागवार लगती है। ऑनर किलिंग, घरेलू हिंसा और कुछ मामलों में यह यौन उत्पीड़न, बलात्कार और सामूहिक बलात्कार का कारण बनता है।
9. पुरुष वर्चस्व का हर स्तर पर महिलाओं द्वारा बढ़ता प्रतिकार और प्रतिरोध इसके चलते पुरुष वर्चस्व को चुनौती मिल रही है, जो पुरुषों और पितृसत्ता की मानसिकता रखने वाली स्त्रियों को महिलाओं के प्रति हिंसा के लिए उकसाती है, घरेलू हिंसा का यह एक कारण है।
10. स्त्री को भोग्या समझने की प्राच्य और पाश्चात्य दोनों दृष्टियों का मेल, यौन उत्पीड़न और बलात्कार का एक बहुत बड़ा कारण है।

निष्कर्ष एवं सुझाव-

महिलाओं के प्रति बढ़ती हिंसा के कारणों के विवेचन और विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि-

1. यह एक सामाजिक-सांस्कृतिक समस्या भी है, जिसकी आर्थिक बुनियाद भी है। इस सबके बावजूद, सबसे तात्कालिक तौर पर जो कदम उठाया जाना चाहिए, वह है महिला हिंसा को रोकने के कानूनी उपायों को सख्त तरीके से लागू करना।
2. सभी महिलाओं को उनके संवैधानिक और कानूनी अधिकारों से परिचित कराना।
3. वैसे तो निर्भया काण्ड के बाद बने कानून और अभी हाल के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ने कई सारी कानूनी खामियों को दूर कर दिया है, लेकिन जो खामियाँ कानूनी विशेषज्ञों और स्त्री अधिकारों के अध्येताओं और कार्यकर्ताओं के अनुसार बची हुई हैं उन्हें दूर किया जाए।
4. कानून को अमल में लाने वाली एजेंसियों को इतना प्रभावी बनाया जाए

कि कोई भी अपराधी सजा से बचने न पाए।

5. इन तात्कालिक उपायों के साथ ही हमें इस समस्या के दीर्धकालिक और स्थाई समाधान के बारे में भी कारगर प्रयास करने होंगे, क्योंकि केवल दण्ड के भय से न तो संवैधानिक अधिकारों का सम्मान किया जाता है और न कानून का पालन। इसके लिए पहली आवश्यकता होती है समाज की स्वीकृति।

6. इस स्वीकृति के लिए आवश्यक है कि व्यापक समाज महिलाओं के अधिकारों के प्रति संवेदनशील हो और पूर्ण इंसानी बराबरी का दर्जा देने के लिए तैयार हो। महादेवी वर्मा के शब्दों में कहें तो, इस समय आवश्यकता है एक ऐसे देशव्यापी आन्दोलन की, जो सबको सजग कर दे, उन्हें इस दिशा में प्रयत्नशीलता दे और नारी की वेदना का यथार्थ अनुभव करने के लिए उनके हृदय को संवेदनशील बना दे, जिससे मनुष्य जाति के कलंक के समान लगने वाले इन अत्याचारों का अंत हो जाए।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. वूमेन, हेल्थ एण्ड डेवलपमेंट (1985)- विश्व स्वास्थ्य संगठन, प्रकाशन नं. 90, जेनेवा, पृ. 10.
2. राम आहूजा (1987)- क्राइम अगेन्स्ट वीमेन, रावत प्रकाशन, जयपुर, पृ. 12-13.
3. मीरा देसाई (1998)- डोमेस्टिक वाइलेंस इन वीमेन एण्ड सोसायटी इन इंडिया, अजंता प्रकाशन, पृ. 254-291.
4. सुषमा सूद (1990)- वाइलेंस अगेंस्ट वूमन, ओरियेन्ट प्रकाशन, जयपुर।
5. गंभीर विजय कुमार (2000) महिलाओं के विरुद्ध अपराध (वृहत्तर ग्वालियर के सम्बंध में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन) विषयक पी-एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर, पृ. 97.
6. डॉ. सिंह निशांत (2002) औरत, अस्मिता और अपराध, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली से उद्धत, पृ. 131.
7. Pandey Rajendra (1986), Rape Crimes and Victimisation of Rape Victims in Free India, Indian journal of Social Work, 47 (2), July, p. 169-186.
8. ओ. सी. शर्मा (2005)- महिलाओं के प्रति हिंसा, आशीष प्रकाशन, नई दिल्ली दि हिन्दुस्तान टाइम्स, दिसम्बर 8, 2006.
9. डॉ. सिद्धार्थ (2017) 'महिलाओं के प्रति बढ़ती हिंसा', प्रतियोगिता दर्पण, आगरा, पृ. 82, 83, 84.

नारी उत्थान में डॉ. अम्बेडकर का योगदान

* डॉ. संध्या शुक्ला
** वंदना शर्मा

विभिन्न युगों में भारत में नारी को प्राप्त अधिकारों की मीमांसा के आधार पर समाज में नारी को स्वतंत्रता थी और उसे पुरूषों के समान आत्म विकास के अवसर प्राप्त थे, भारतीय समाज प्रगति पर था, किन्तु जब नारी के अधिकारों की उपेक्षा हुई, तब समाज की प्रगति अवरूद्ध हो गई। स्मृतिकाल में विशेष रूप से मनु के पूर्व तक भारतीय समाज में नारी की स्थिति अच्छी थी। स्त्रियों को वेद की शिक्षा प्रदान की जाती थी। उन्हें गुरूकुलों में प्रवेश मिलता था। स्त्रियां न केवल वेद मंत्रों का उच्चारण करती थी बल्कि वेद की विभिन्न शाखाओं के अध्ययन में पारंगत एवं उनकी मीमांसा में पटु भी थी। स्त्रियां शिक्षक थी एवं कन्याओं को पढ़ाती थी। विशेष रूप से धर्म, दर्शन एवं अध्यात्म के ज्ञान में स्त्रियाँ बहुत निपूर्ण थी। जनक एवं सुलभ याज्ञवल्क्य एवं गार्गी आदि के मध्य संवादों से स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में अनेक ऐसे अवसर आये जबकि स्त्रियों ने पुरूषों के साथ खुली बहस में भाग लिया। किन्तु बाद में उनकी दशा बहुत खराब हो गई। वे पुरूषों की जीवन संगिनी नहीं बल्कि दासी बन गई। ऐसा क्यों हुआ? इसके लिये उत्तरदायी कौन है?

भारत में नारी को भी हर प्रकार की सुविधाएँ एवं उच्च शिक्षा की प्राप्ति हो। नारी को भी स्वतंत्रता एवं पुरूषों के समान आत्म विकास के अवसर प्राप्त हो। दलित महिलाओं को संबोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि आप स्वच्छता से रहना सीखें। सभी प्रकार के दूराचारों से दूर रहें। आपको अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा देनी चाहिए और उनके मष्तिक में यह बैठाना चाहिए कि उन्हें महान बनाना है। आपको चाहिए कि आप अपने बच्चों के दिमाग से सभी प्रकार के हीन भावों को दूर करें।

संक्षेप में डॉ.अम्बेडकर का सोचना था कि दलित समाज की उन्नति के

==========

* विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
** एम.ए., एम.फिल (राजनीति विज्ञान), रीवा (म.प्र.)

लिए महिलाओं को भी पुरूषों के समान आगे आना चाहिए। दलित महिलाओं को चाहिए कि वे अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा प्रदान करें। पति हो या भाई अथवा बेटा यदि शराब पीता है तो, उसे शराब न पीने दे एवं स्त्रियों को भी पुरूषों की भाँति शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। उन्हें भी समानता का अधिकार प्राप्त होना चाहिए। डॉ. भीमराव के शब्दों मे, उनका सोचना था कि दलित समाज की उन्नति के लिए नारी (महिलाओं) को भी पुरूषों के समान आगे आना चाहिये। डॉ. अम्बेडकर नारी संगठन के बहुत हिमायती थे उनका विश्वास था कि यदि एक बार नारी की समझ में आ जाये और वह निश्चय कर ले तो समाज की बुराइयों को दूर करने और समाज को सुधारने में वह बहुत कार्य कर सकती है।

यह कहना कठिन है कि प्राचीन राज्य प्रशासन तंत्र में महिलाओं की क्या भागीदारी थी, किन्तु इस बात में कोई संदेह नहीं है कि प्राचीनकाल में देश के बौद्धिक एवं सामाजिक जीवन में महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी थी। अर्थववेद के एक उदाहरण से स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ भी पुरूषों की भांति उपनयन की अधिकारी थी और सामान्यतया ब्रह्मचर्य की समाप्ति के पश्चात ही उनका विवाह होता था। प्राचीनकाल में अनेक स्त्रियों का उल्लेख मिलता है जो विदुषी थी, उन्होने वेदों की ऋचाओं की रचना की थी।

बुद्ध ने समाज में नारी की स्थिति को उठाने के लिये बहुत प्रयास किया। समाज में शिक्षा व आत्मविकास के अवसर का जहां तक प्रश्न है बुद्ध ने नारी एवं पुरूष में भेद नहीं किया। वे बुद्धि एवं चरित्र में नारी को पुरूष से कम नहीं मानते थे। पुरूषों की भांति स्त्रियों को धर्म की दीक्षा, सन्यास अथवा परिव्रजत्व की अनुमति प्रदान कर बुद्ध ने नारी को पुरूषों के समकक्ष धार्मिक अधिकार प्रदान किया। धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिये उन्होने भिक्षु संघों की भांति भिक्षुणी संघों की भी स्थापना की। (अम्बेडकर : 1977)

बुद्ध का कहना था कि इस बात का कोई आधार नहीं है कि पुत्र जन्म से पुत्री से अधिक योग्य होता है। कन्या पुत्र से अधिक बुद्धिमान और गुणी हो सकती है। इसलिये कन्या के जन्म पर माता-पिता को दु:खी नहीं होना चाहिये। बुद्ध स्त्री को सृष्टि की सर्वोच्च कृति मानते थे, क्योंकि वही बोधि-सत्व एवं विश्व सम्राटों को जन्म देती है। बुद्ध के अनुसार नारी उन सात रत्नों में एक है, जो व्यक्ति को चक्रवर्ती बनाते हैं। बुद्ध का कहना था कि जो व्यक्ति, परिवार या समाज स्त्री को स्वतंत्रता एवं अधिकार प्रदान नहीं करता उसका विनाश हो जाता है।

जैसा कि स्पष्ट किया गया है कि प्राचीन काल में स्त्रियों का विवाह वयस्कता प्राप्ति के बाद होता था। उन्हें तलाक के अधिकार भी प्राप्त थे। पति को सामान्य स्थिति में अपनी पत्नी को तलाक देने अथवा दूसरी पत्नी से विवाह करने

का अधिकार नहीं था। कौटिल्य ने पुरूषों की भाँति स्त्री को भी तलाक का अधिकार प्रदान किया।

तलाकशुदा स्त्री अपने पति से भरण-पोषण प्राप्त करने की पात्रता रखती थी। तलाकशुदा अथवा विधवा स्त्री पुनर्विवाह भी कर सकती थी। कौटिल्य ने विवाहित स्त्री को आर्थिक भरण पोषण के लिये अपने पति की सम्पत्ति में पर्याप्त अधिकार प्रदान किया।

प्राचीन काल में एक समय ऐसा था जबकि भारतीय समाज में स्त्रियों का बहुत आदर किया जाता था। उन्हें शिक्षा, आत्म विकास, विवाह, तलाक एवं संपत्ति सम्बन्धी आवश्यक अधिकार भी प्राप्त थे, किन्तु बाद में उनकी दशा बहुत खराब हो गई। वे पुरूषों की जीवन संगिनी नहीं बल्कि दासी बन गई।

नारी के उत्थान में डॉ. अम्बेडकर के विचारों का विश्लेषण-

डॉ.अम्बेडकर की मान्यता थी कि नारी की प्रगति के बिना समाज की प्रगति संभव नहीं है। समाज में नारी की स्थिति को अम्बेडकर समाज की प्रगति का मापदण्ड मानते थे। उनका कहना था कि ''मैं किसी समाज की प्रगति इस आधार पर मापता हूँ कि उस समाज में नारी ने किस सीमा तक प्रगति की है।''

डॉ. अम्बेडकर नारी संगठन के बहुत हिमायती थे उनका विश्वास था कि यदि एक बार नारी की समझ में आ जाये और वह निश्चय कर ले तो समाज की बुराइयों को दूर करने और समाज को सुधारने में वह बहुत कार्य कर सकती है। इसलिये दलितों की मुक्ति के लिये काम आरंभ करने के समय से ही अम्बेडकर स्त्रियों को पुरूषों के साथ लेकर चले।

वास्तव में डॉ. अम्बेडकर अपने गुरू बुद्ध की भांति जीवन में स्वतंत्रता एवं समानता को बहुत महत्व देते थे। स्वतंत्रता एवं समानता उनके जीवन के न केवल कोरे सिद्धांत थे बल्कि व्यवहार के नियम भी थे। इसलिये जैसा ऊपर कहा गया है कि उन्होंने दलितोत्थान संबंधी अपने संघर्षों में पुरूषों के साथ स्त्रियों का भी आह्वान किया।

मार्च 1920, 1927 को महाद के चौबदार ताल सत्याग्रह में भाग लेने हेतु डॉ. अम्बेडकर ने पुरूषों के साथ दलित महिलाओं का भी आह्वान किया। उनका कहना था कि ''तुम्हारी कोख से जन्म लेना आज पाप समझा जाता है। तुम हमारी माँ और बहनें हो, हमें अगर हीन समझा जाता है तो क्या तुम्हे बुरा नहीं लगता। समाज में तुम्हे जो कष्ट भोगने पड़ रहे हैं, उन्हें तुम स्वयं भी अच्छी तरह जानती हो, अतः तुम्हे स्पष्टतः यह तय करना है कि इस सत्याग्रह में भाग लेना है अथवा नहीं, क्योंकि संघर्ष के बिना कुछ भी नहीं मिल सकता''। (बी.आर. अम्बेडकर संद. रावत, 1989:74)

महाद सत्याग्रह की भाँति डॉ. अम्बेडकर के आह्वान पर नासिक के कालाराम मंदिर तथा पूना, कानपुर, लखनऊ एवं मद्रास आदि स्थानों पर हिन्दू मंदिरों में प्रवेश हेतु आंदोलनों में पुरूषों के साथ महिलाओं ने भी बढ़-चढ़ कर भाग लिया। भूमिहीन कृषकों में कृषि योग्य भूमि आवंटित किये जाने हेतु डॉ. अम्बेडकर द्वारा संचालित आंदोलनों में भी दलित महिलाओं ने पुरूषों के साथ भारी संख्या में भाग लिया। इन आंदोलनों में भाग लेने वाली महिलाओं में शान्ती बाई दाणी, गीता बाई गायक वाड़ तथा श्रीमती मनोबल शिवराज के नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है।

20 जुलाई 1942 को अखिल भारतीय दलित महिला अधिवेशन को संबोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने दलित महिलाओं को सलाह दी कि वे विवाह की जल्दी में न पड़ें। विवाह एक दायित्व (लाइबिलिटी) है। अपने बच्चों पर विवाह तब तक न थोपें जब तक वे विवाह संबंधी आर्थिक जिम्मेदारियों को वहन करने में समर्थ न हो जाये, जो विवाह करें वे यह ध्यान रखें कि आधिक संतान पैदान करना एक अपराध है। माता-पिता का दायित्व यह है कि वे अपनी संतान को अपने से अच्छा आरंभ दें। इन सबसे बड़ी बात यह है कि जो लड़की शादी करती है, वह अपने पति के समकक्ष खड़ी हो। उससे मित्रता और समानता का दावा करें। उसकी दासी बनने से साफ इंकार कर दें। उनका विश्वास था कि यदि दलित महिलायें ऐसा करती हैं तो इससे न केवल उनका वरन् पूरे दलित समाज का सम्मान बढ़ेगा। सभा में बीस हजार महिलाओं की उपस्थिति को लक्ष्य करते हुये अम्बेडकर ने कहा कि स्त्रियां किसी भी समाज की प्रगति का दर्पण होती हैं। आज मैं अपने समाज के प्रगति के पथ पर अग्रसर होते देखकर सुख का अनुभव कर रहा हूँ।

डॉ. अम्बेडकर महिलाओं में वेश्यावृत्ति को बहुत बुरा मानते थे, किन्तु वेश्याओं के प्रति उनका दृष्टिकोण सुधारवादी था। तात्पर्य यह है कि गांधी की भांति अम्बेडकर भी व्यक्ति से नहीं वरन् उसकी बुराई से घृणा करते थे। 16 जून 1936 को बम्बई में दलित वेश्याओं की एक सभा को संबोधित करते हुए, उन्होने कहा कि ''यदि आप हम सबके साथ रहना चाहती हैं, तो अपनी जीवन पद्धति को बदलें। आप विवाह कर समाज की अन्य महिलाओं की भांति सम्मानपूर्वक पारिवारिक जीवन व्यतीत करें, वेश्यावृत्ति के घृणास्पद जीवन के अलावा आजीविका कमाने के समाज में सैकड़ों तरीके हैं। जब तक आप वेश्यावृत्ति के घृणास्पद जीवन का परित्याग नहीं करती तब तक समाज में आपको उचित सम्मान प्राप्त नहीं हो सकेगा''।

नारी संबंधी सामाजिक विधान-

पूर्व विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि नारी के पतन से समाज का पतन होता है और नारी की उन्नति से समाज की उन्नति होती है। भारत में जब नारी की स्थिति उन्नत थी भारतीय समाज भी उन्नति के शिखर पर था, किन्तु जब नारी आत्मोन्नति व आत्मविकास के अवसर से वंचित हो घर की चार दीवारी में कैद हो गई तो भारतीय समाज भी अंधकार के गर्त में डूब गया।

रूढ़िग्रस्त जर्जर भारतीय समाज को सुधारने के लिये सर्वप्रथम नारी की दशा को सुधारना आवश्यक था। इसलिये राजाराममोहन राय, हरविलास शारदा, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि ने भारतीय नारी की दिशा में सुधार हेतु सती प्रथा निषेध, बाल विवाह निषेध एवं विधवा पुनर्विवाह को कानूनी मान्यता प्रदान किये जाने हेतु कार्य किया। स्वतंत्रोपरान्त नारी को परम्परात्मक निर्योग्यताओं से मुक्त करने एवं उन्हें पुरूषों के बराबर कानूनी अधिकार दिलाने में डॉ. अम्बेडकर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

हिन्दू कोड बिल में कन्या के विवाह की निर्धारित तत्कालीन न्यूनतम आयु में वृद्धि, एक विवाह का अनिवार्य किया जाना, अन्तर्जातीय विवाह को मान्यता, स्त्रियों को पुरूषों के समान तलाक का अधिकार, तलाकशुदा स्त्री को पुत्री, पत्नी एवं माँ के रूप में पारिवारिक सम्पत्ति का अधिकार, स्त्री को गोद लिये जाने एवं गोद लेने के अधिकार आदि का प्रावधान था।

कानून मंत्री के रूप में हिन्दू कोड बिल को डॉ. अम्बेडकर ने संसद के सम्मुख सर्वप्रथम 5 फरवरी 1951 को प्रस्तुत किया, किन्तु बिल पर चर्चा पूरी नहीं हो सकी। बिल का औचित्य दर्शाते हुये डॉ. अम्बेडकर ने संसद में कहा कि ''यदि आप हिन्दू व्यवस्था, हिन्दू संस्कृति और हिन्दू समाज की रक्षा चाहते हैं, तो इनमें जो दोष पैदा हो गये हैं, उनको सुधारने में आपको तनिक भी झिझक नहीं होनी चाहिये। हिन्दू कोड बिल हिन्दू व्यवस्था में केवल उन्हीं अंशों में सुधार चाहता है, जो विकृत हो गये हैं। उनसे अधिक कुछ नहीं। अतः आप इसका समर्थन अवश्य करें।''

संसद में कांग्रेस दल भारी बहुमत में था। कांग्रेसी एवं विपक्षी सांसदों सहित आम जनता में बिल को लेकर अत्याधिक विवाद पैदा हो गया। परम्परावादी विचारधारा के लोग बिल का विरोध कर रहे थे, जबकि प्रगतिशील इसका समर्थन इस बिल पर सांसदों में मतभेद को देखते हुये कांग्रेस दल ने अपने सांसदों को इस बात की स्वतंत्रता प्रदान की कि वे अपनी इच्छानुसार बिल पर मतदान करें। 17 सितम्बर 1951 को बिल संसद में पुनः प्रस्तुत किया गया।

बिल के पक्ष में डॉ. अम्बेडकर जो उस समय कानून मंत्री थे ने एक बयान

जारी किया। इनका कहना था कि ''हिन्दू कोड बिल इस देश में विधानसभा द्वारा हाथ में लिया गया सबसे महत्वपूर्ण समाज सुधार है। कोई भी कानून जो इस देश में पारित हुआ अथवा जो संभवतः पारित होगा, महत्व की दृष्टि से, हिन्दू कोड बिल की तुलना में कहीं नहीं ठहरता। वर्ग-वर्ग, लिंग-लिंग के बीच असमानता की उपेक्षा करके, जो हिन्दू समाज का मूलाधार है, आर्थिक समस्याओं के संबंध में कानून बनाया जाना हमारे संविधान का उपहास और गोबर के ढेर पर महल बनाये जाने के समान है। हिन्दू कोड बिल का इतना महत्व है जिसे मैं उसके साथ जोड़ता हूँ। इसी बिल के खातिर मतभेद होते हुये भी मैं मंत्रिमण्डल में बना रहा। अतएव यदि मैंने कोई गलती की है तो इस आशा से कि कोई शुभ परिणाम निकले।''

संसद और संसद के बाहर रूढ़िवादी तत्वों के विरोध के कारण हिन्दू कोड बिल मूल रूप से पारित नहीं हो सका, उसे स्थगित करना पड़ा। हिन्दू कोड बिल के प्रति तत्कालीन प्रधानमंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू एवं कांग्रेसियों के उदासीन एवं नकारात्मक रूख तथा कतिपय अन्य नीतिगत विषयों पर असहमति के कारण डॉ. अम्बेडकर ने 27 सितम्बर 1951 को कानून मंत्री के पद से नेहरू मंत्रिमण्डल से त्याग पत्र दे दिया। आगे चलकर अलग-अलग अधिनियमों के रूप में हिन्दू कोड बिल संसद में पारित कर दिया गया, जिससे हिन्दू (बौद्ध, जैन, सिख सहित) नारी की द्रुत सामाजिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त हुआ। भारत में हिन्दू नारी की विमुक्ति में डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर का यह योगदान चिरस्मरणीय रहेगा।

निष्कर्ष –

परंपरात्मक भारतीय समाज में नारी अनेक निर्योग्यताओं से ग्रस्त थी। उसे शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। वह वयस्क होते हुये भी अपनी इच्छानुसार अपनी जाति या सम्प्रदाय से बाहर के किसी व्यक्ति से विवाह नहीं कर सकती थी। पुरूष तो एक से अधिक विवाह कर सकता था। वह अपनी पत्नी अथवा पत्नियों को त्याग भी सकता था। उन पर अत्याचार कर सकता था, किन्तु पत्नी अपने पति को त्याग नहीं सकती थी और न पुनर्विवाह कर सकती थी, कोई स्त्री न तो किसी की दत्तक संतान बन सकती थी और न ही किसी को गोद ले सकती थी। स्त्री को अपने पिता, पति अथवा पुत्र की सम्पत्ति पर कोई अधिकार भी नहीं था। तात्पर्य यह है कि नारी समाज में पूर्णतया असहाय और अबला थी।

समाज में नारी पुरूष के समान स्वतंत्र एवं अधिकार सम्पन्न हो इसके लिये अम्बेडकर ने अविस्मरणीय कार्य किया। उनके नेतृत्व में बने संविधान में लिंग के आधार पर पुरूष और स्त्री के बीच सामाजिक भेदों को समाप्त किया गया। संविधान ने स्त्री व पुरूष में कोई भेद न मानते हुए दोनों को समान दर्जा प्रदान किया। संविधान के माध्यम से बच्चों व स्त्रियों की बिक्री तथा उनसे बेगार लेने

पर भी प्रतिबन्ध लगाया गया। संविधान द्वारा नारी को स्वतंत्रता एवं समानता का अधिकार प्रदान किये जाने से सिद्धान्ततः नारी की सामाजिक स्थिति में सुधार तो अवश्य आया, किन्तु स्वतंत्रता एवं समानता की संवैधानिक प्रत्याभूति मात्र से सदियों से उपेक्षित नारी को परम्परात्मक दासता से मुक्ति मिल जायेगी, अम्बेडकर को इस पर संदेह था। उनका सोचना था कि विवाह और सम्पत्ति पर अधिकार संबंधी प्रचलित कानूनों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाये बिना नारी की मुक्ति संभव नहीं है। अपने इस विश्वास को मूर्त रूप देने की दृष्टि से उन्होने एक व्यापक सामाजिक विधान की रूपरेखा निर्मित की जिसे हिन्दू कोड बिल के नाम से जाना जाता है।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. डॉ. अम्बेडकर का विचार दर्शन, खण्ड-एक, डॉ. रामगोपाल सिंह पृ. 143
2. डॉ. अम्बेडकर का विचार दर्शन, खण्ड-एक, डॉ. रामगोपाल सिंह पृ. 144
3. अम्बेडकर 1993, डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज (खण्ड 12) बाम्बे, गवर्नमेंट ऑफ महाराष्ट्र बब्लिकेशन पृ. 193
4. अम्बेडकर 1993, डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज (खण्ड 12) बाम्बे, गवर्नमेंट ऑफ महाराष्ट्र बब्लिकेशन पृ. 194
5. अम्बेडकर : 1979 द हिन्दू नारी का उत्थान और पतन, श्री वर्धन अनूदित द राइज एण्ड फाल ऑफ हिन्दू वूमेन, लखनऊ, बहुजन कल्याण प्रकाशन पृष्ठ 74
6. लोकनीता जिनी(मेनन निवेदिता, आर्य साधना नारीवाद राजनीतिः संघर्ष एवं मुद्दे हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निर्देशालय दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली 2006
7. मेघबाल कुसुम भारतीय नारी के उद्धारक : डॉ. बी.आर.अम्बेडकर, सम्यक प्रकाशन 2005
8. कुमारी सीमा- महिला अधिकार और भारतीय प्रावधान उपकार प्रकाशन आगरा-2
9. विद्यावाचस्पति शास्त्री सोहनलाल : हिन्दू कोड बिल और बाबा साहब सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली 2003

भारतीय समाज में वृद्ध महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति और समस्यायें

* प्रो. अर्चना चौहान

शास्त्रीय आधार पर भारतीय समाज में आश्रम व्यवस्था का महत्व रेखांकित किया गया है। व्यक्ति की औसत आयु 100 वर्ष मानते हुये,संपूर्ण जीवन वृतांत को 25-25 वर्षों के खण्डों में विभक्त किया गया। प्रारंभ के 25 वर्ष विद्या-अध्ययन के लिये, 25 से 50 वर्ष गृहस्थ आश्रम के लिये, 50 से 75 वर्ष वानप्रस्थ आश्रम और 75 से 100 वर्ष सन्यास आश्रम के लिये निर्धारित किये गये। आयु के आधार पर सामाजिक दायित्वों का वर्गीकरण करने का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को पुरूषार्थ और कर्म करने के लिये प्रेरित करना है,जिससे उसकी सामाजिक उपादेयता बनी रहे।

चिकित्सकीय सुविधा और स्वयं के प्रति जागरूकता बढ़ने से क्रमशः समाज में वृद्ध-जनों की संख्या बढ़ रही है। भारतीय समाज में आयु संरचना के आधार पर निर्मित पिरामिड का आकार बदल रहा है। वृद्ध अथवा वरिष्ठ जन श्रेणी में वे व्यक्ति आते हैं, जिनकी आयु 60 वर्ष से अधिक होती है। वृद्धावस्था में व्यक्ति की क्षमतायें धीरे-धीरे कम होने लगती है। तरूणाई में जहाँ व्यक्ति में ऊर्जा और जोश अधिक होता है,वहीं वृद्धावस्था में ऊर्जा और जोश घटने लगता है। जैवकीय अवस्था में परिवर्तन से सामाजिक प्रस्थिति प्रभावित होने लगती है। आयु बढ़ने से अन्य पर निर्भरता भी बढ़ने लगती है। यद्पि समाज में आयु के आधार पर सम्मान तो होता है, पर अधिक आयु में निर्णयन अधिकार घटता है। पारंपरिक सामाजिक व्यवस्था में परिवार का मुखिया उम्रदराज ही होते थे, पर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में परिस्थिति बदलने से परिवार का मुखिया उम्र के आधार पर न हो कर आर्थिक आधार पर होता है।

भारतीय समाज परंपराओं और आधुनिकता का अद्भूत सम्मिश्रण है, जिसमें भिन्न-भिन्न आयु वर्ग की महिलाओं की सामाजिक-प्रस्थिति में अंतर स्पष्ट दिखायी देता है। महान हिन्दी कहानी सम्राट मुंशी प्रेमचंद (1880-1936) ने बूढ़ी

---

* सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सिहोर (म.प्र.)

काकी कहानी में वृद्धावस्था की सामाजिक समस्याओं का मार्मिक चित्रण करते हुये बुढ़ापें की मानसिक दशा का वर्णन किया। स्वार्थवादिता और विवशता का वर्णन लगभग एक सदी पूर्व लिखी कहानी में तात्कालीन सामाजिक वातावरण को रेखांकित किया। साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है, आज भी बूढ़ी काकी है और उनकी सामाजिक प्रस्थिति भी प्रायः वैसी ही है।

वृद्ध पुरूष और वृद्ध महिलाओं की सामाजिक स्थिति और समस्याओं में अंतर होता है ,प्रायः पुरूषों का दायरा घर से बाहर होता है और महिलाओं का घर के अंदर। भारतीय समाज में वृद्ध-महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति कैसी है और किस प्रकार प्रभावित हो रही है, अनकी समस्यायें किस प्रकार की हैं पर प्रकाश डालने से पूर्व सामाजिक प्रस्थिति को समझना आवश्यक है।

सामाजिक प्रस्थिति-

सामाजिक प्रस्थिति समाज की बुनियादी अवधारणा है। सामाजिक प्रस्थिति के अभाव में सामाजिक संरचना की कल्पना नहीं की जा सकती है। बीयरस्टेड समाज को सामाजिक प्रस्थितियों का जाल कहतें हैं। समाज में व्यक्तियों की स्थिति का निर्धारण सामाजिक नियमों के अनुसार होता है। व्यक्ति का समाज में आचरण सामाजिक मानदण्ड से ही तय होता है। जॉनसन का मत है कि प्रत्येक व्यक्ति का समाज में एक निश्चित पद होता है, जिसे सामाजिक पद कहा जा सकता है। सामाजिक पद व्यक्तियों के अधिकारों और बाध्यताओं का एक जटिल समग्र है। समाजशास्त्रीय परिभाषाओं के अनुसार अधिकार को स्थिति और बाध्यता को भूमिका कहा जाता है।

किसी सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति निर्दिष्ट समय में जो स्थान प्राप्त करता है, वह उस व्यवस्था में उस व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति है (राल्फ लिंटन)। डेविस ने प्रस्थितियों की उत्पत्ति के लिये समाज की आवश्यकताओं को उत्तरदायी माना है। रूढ़िगत समाज में सामाजिक प्रस्थिति परंपराओं से निर्धारित होती है,जबकि औद्योगिक एवं पूजीवादी समाजों में व्यक्ति स्वयं की सामाजिक प्रस्थिति स्वयं के प्रयासों से पसंद करता है। किंबाल यंग सामाजिक स्थिति और सामाजिक प्रतिष्ठा में सहसंबध मानते हैं।

प्रस्थिति के दो प्रकार हैं-प्रदत्त और अर्जित प्रस्थिति। प्रदत्त प्रस्थिति समाज की आधारभूत प्रस्थिति है,जो वैयक्तिक इच्छा पर निर्भर नहीं होती है, सापेक्षिक रुप से स्थायी होती है। प्रदत्त प्रस्थिति समाज द्वारा प्रदत्त होने के कारण अपरिवर्तनीय होती है, लेकिन तीव्र सामाजिक परिवर्तन की स्थिति में प्रदत्त प्रस्थिति से जुड़ी भूमिकायें परिवर्तित होने लगती है, भूमिकायें समाज की द्वितीयक संस्थायें लेने लगती है। उदाहरणार्थ भारतीय समाज में कामकाजी महिलाओं की संख्या बढ़ने

और परिवार के स्वरुप में परिवर्तन विघटन के कारण महिलाओं की सामाजिक भूमिका बदल रही है। झूलाघर,डे-बोर्डिंग स्कूलों की संख्या बढ़ रही है।

महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति–

पितृसत्तात्मक भारतीय सामाजिक व्यवस्था में ऋगवैदिक सभ्यता में महिलाओं को वे सभी अधिकार प्राप्त थे जो कि पुरूषों को प्राप्त थे। शिक्षा-प्राप्त करना,स्वयं के विवाह का निर्णय लेना, बाल विवाह का प्रचलन ना होना, सार्वजनिक जीवन में सहभागिता करना,ब्रह्मचर्य का पालन करना आदि महिलाओं की सशक्त प्रस्थिति का द्योतक है। ऋगवैदिक काल के अंत तक महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति बदलने लगी और मध्यकाल तक आते आते महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति और चिंतनीय हो गयी।मातृत्व के रुप में महिला सदैव सम्मानित रही है।

समाज सुधार और राष्ट्रीय आन्दोलनों से महिलाओं में सामाजिक चेतना की उत्पत्ति हुयी और महात्मागांधी के प्रयासों से महिलाओं का सार्वजनिक जीवन में प्रवेश प्रारंभ हुआ। इससे महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति पुनः परिवर्तित होने लगी। 21वीं सदी में भारतीय समाज में सभी महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति समान नहीं है, उनमें भी सामाजिक स्तरीकरण पाया जाता है। नववधु की सामाजिक प्रस्थिति और सास की सामाजिक प्रस्थिति में अंतर होता है, ठीक वैसे ही जैसे कि माँ-बेटी या जेठानी-देवरानी की सामाजिक प्रस्थिति में अंतर अवलोकित है। आर्थिक आधार पर भी महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति में समरुपता नहीं है। भारतीय समाज में महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति निर्धारित करने में आयु,शिक्षा,आर्थिक-आधार, धर्म और जाति की महत्वपूर्ण भूमिका है।

वृद्ध महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति–

आयु और यौन मात्र जैवकीय प्रघटना नहीं है,अपितु सामाजिक और सांस्कृतिक चर भी हैं। कुछ संस्कृतियों में आयु और यौन के आधार पर सम्मानित किया जाता है, विशेषाधिकार भी प्रदान किये जाते हैं। वृद्ध महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति में परिवर्तन का मुख्य कारण आयु है, जिससे वह समाज में सम्मान भी प्राप्त करती हैं और कहीं बोझ मानकर अपमानित भी होती हैं। वृद्ध महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति को प्रभावित करने वाले कारक इस प्रकार हैं-

1. **शारीरिक क्षमता**– आयु बढ़ने से शारीरिक क्षमता घटती है और इसका परिणाम उनके कार्यों पर पड़ता है। पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में महिला और पुरूष की सामाजिक प्रस्थिति में अंतर होता है, जो आयु बढ़ने के साथ-साथ और दिखायी देता है।
2. **आर्थिक स्थिति**– वृद्धावस्था में यदि आर्थिक स्थिति अच्छी है, तो

सामाजिक प्रस्थिति अच्छी होती है और इसके विपरीत स्थिति में सामाजिक प्रस्थिति पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। यदि वृद्ध महिला आर्थिक रुप से सशक्त है,उसके नाम से जमीन-जायदाद है, जमा पूंजी है तो उसकी पूछ-परख भी होती है और सामाजिक प्रतिष्ठा भी बढ़ती है।

3. **सामाजिक आवश्यकता**– आधुनिक तकनीकी और इंटरनेट युग से पूर्व बहुत सारे कार्य करने के लिये आवश्यक मार्गदर्शन हेतु अनुभवी वृद्ध महिलाओं के मार्गदर्शन की आवश्यकता नवीन पीढ़ी को होती थी किंतु अब बहुत से आधारभूत कार्यों के लिये अनुभवी वृद्धाओं की आवश्यकता नहीं रही। दादी माँ के नुस्खों का स्थान गुगल जैसे सर्च-इंजन ले रहें हैं।

4. **वैवाहिक स्थिति**– वृद्धावस्था में महिला का पति जीवित है तो सामाजिक स्थिति पर विशेष प्रभाव पड़ता है और यदि वृद्धावस्था में महिला का पति नहीं है, तो वह परिवार के अन्य सदस्यों पर पूर्णतः पराश्रित हो जाती है, स्वतंत्र निर्णय लेना अथवा राय देने का अधिकार क्रमशः घटता जाता है।

5. **परिवार का स्वरुप और प्रकृति**– वृद्धावस्था में महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर परिवार के स्वरुप का भी प्रभाव होता है। बड़े और संयुक्त परिवार में सामाजिक स्थिति अच्छी होती है क्योंकि वहाँ वह सबकी जिम्मेदारी है,पर वर्तमान में छोटे और नाभिकीय परिवार चलन में है जिससे उनकी सामाजिक स्थिति प्रभावित होती है। परिवार में नवीन प्रवृत्ति के रुप में नाभिकीय और कामकाजी दंपति वाले परिवार दिखायी दे रहें हैं, जिसमें वृद्ध महिलाओं की आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

6. **अनुकूलन और सामंजस्य**– सामाजिक एकीकरण को बढ़ावा देने वाली अनुकूलन और सामंजस्य सामाजिक प्रक्रिया होती है।यदि वृद्धायें समयानुसार नवीन परिस्थितियों में अनुकूलन और सामंजस्य प्रक्रिया को अपनाती हैं, तो सामाजिक स्थिति अच्छी होती है, पर वृद्धावस्था में अनुकूलन और सामंजस्य स्थापित करने में समस्या होती है।

7. **शैक्षणिक स्थिति**– शिक्षा का सामाजिक स्थिति से धनात्मक सहसंबध है। शिक्षा से जागरूकता के साथ निर्णय लेना भी आसान हो जाता है। अतः शिक्षित और अशिक्षित वृद्ध महिलाओं की सामाजिक स्थिति में अंतर होता है।

वृद्ध महिलाओं की समस्यायें–

1. **स्वास्थ्य समस्या**– आयु के बढ़ने के साथ कई प्रकार की शारीरिक समस्यायें सामने आती हैं जैसे - पाचन तंत्र का अच्छे से काम न कर पाना, घुटने आदि में तकलीफ रहना आदि। इससे उनके कार्य करने पर विपरीत प्रभाव पड़ने लगता है। प्रायः महिलायें अपने स्वास्थ्य के प्रति लापरवाह होती हैं, जिसका प्रभाव

उनकी शारीरिक क्षमता पर पड़ता है।

2. **मनोवैज्ञानिक समस्या**– वृद्धावस्था में अकेलापन, भावात्मक अस्थिरता की समस्या होती है। एक ओर जीवन के प्रति उत्साह कम होता है और वहीं दूसरी तरफ मृत्यु के प्रति डर की भावना भी विकसित होने लगती है।

3. **सुरक्षा**– वृद्धावस्था में शारीरिक क्षमता कम हो जाने के कारण सुरक्षा की समस्या सामने आती है , अपराधिक मनोवृत्तियों के व्यक्तियों द्वारा इन पर आक्रमण किये जातें है, जो कभी-कभी उनकी मृत्यु का कारण बन जाते हैं।

4. **उपेक्षा**– व्यस्तताओं के कारण परिवार के सदस्य वृद्धाओं पर अधिक ध्यान नहीं दे पाते जिससे वे स्वयं को उपेक्षित महसूस करने लगते है। 'सास भी कभी बहु थी' जैसी उक्ति से स्पष्ट होता है कि आयु बढ़ने से महिला की शक्ति घर में घटने लगती है। उपेक्षा की पराकाष्ठा तब हो जाती है जब वृद्ध आत्महत्या करने के लिये प्रेरित होने लगते हैं।

5. **स्वनियंत्रण का कम होना**– वृद्धावस्था में स्वनियंत्रण कम होने लगता है, भाव-संवेग, स्वादेन्द्रियों पर नियंत्रण रखना मुश्किल होने लगता है और जिद्दी स्वभाव हो जाता है, इसीलिये वृद्धावस्था को बाल्यावस्था का पुनरागमन कहा जाता है।

वृद्ध महिलाओं की समस्या के सामाजिक कारण–

* व्यक्तिवादिता में वृद्धि
* सामाजिक और नैतिक मूल्यों में परिवर्तन
* नगरीय क्षेत्रों में आवास समस्या
* शिक्षा एवं रोजगार हेतु युवाओं के प्रवर्जन का बढ़ना
* महिलाओं की सार्वजनिक जीवन में अत्याधिक सहभागिता
* परिवार का आकार छोटा होना
* वृद्धाओं के अनुभव और ज्ञान का महत्व ना समझना

सुझाव–

1. वृद्धावस्था में निःशुल्क स्वास्थ्य परीक्षण शिविर नियमित लगाये जायें और वृद्ध महिलाओं को शिविर में आने हेतु प्रेरित किए जाये।
2. वृद्धावस्था एक स्वभाविक घटना है,इस सत्य से सभी को अवगत कराने के लिये नुक्कड़ नाटक आदि स्वयंसेवी संस्थाओं के द्वारा आयोजित करायें जायें।
3. सुरक्षा के लिये नवीन तरीकों का उपयोग करना वृद्ध महिलाओं को सीखना होगा।
4. वृद्धजनों को व्यस्त रखने के लिये उनके अनुभवों का उपयोग लिये जायें,

जिससे वो स्वयं को समाज के लिये उपेक्षित ना समझ कर आवश्यक मानेंगे।

5. समाजीकरण प्रक्रिया के अंर्तगत बाल्यकाल से ही घर के बड़े-बुजुर्ग जनों के प्रति सम्मान और प्रेम के मूल्य विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका परिवार की ही होगी। अत: परिवार महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था के रूप में दायित्व का निर्वहन करे।

वृद्धाओं के सशक्तिकरण से ही सामाजिक स्थिति में सुधार संभव है।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डेविस के.,(अनु.)अग्रवाल जी.के.(2006), मानव समाज,किताब महल इलाहाबाद
2. दोषी और जैन.(2006),समाजशास्त्रः नई दिशायें,नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
3. सिंह जे.पी..(2009),समाजशास्त्र : अवधारणाएं एवं सिद्धांत,पी.एच.आई. लर्निंग,प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली
4. शर्मा के.एल.(2006),भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन,रावत पब्लिकेशन जयपुर पृष्ठ 193-206
5. Ogburn, W. F., & Nimkoff, M. F. (1947)A handbook of sociology.Eurasia publishing House(pvt) New Delhi 1979
6. Subha, M. (2012). Portrayal of social reality in premchands fiction and its visual representation a comparative study.
7. Thursz, D., Nusberg, C., & Prather, J. (Eds.). (1995). Empowering older people. Continuum International Publishing Group.

पंचायती राज और महिलाएँ

* डॉ. कंचन मसराम

भारत में पंचायती राज व्यवस्था बहुत प्राचीन पद्धति के रूप में चली आ रही है। वैदिक युग में भी हमें इसका उल्लेख मिलता है जिसमें पंचो को परमेश्वर की संज्ञा दी गयी है और उनके न्याय को श्रेष्ठ और सर्वोपरि माना गया था। पंचों का कार्य ग्रामीण समस्याओं के समाधान के अतिरिक्त प्रशासन के कार्यो को भी करना होता था। सर चार्ल्स मैटकाफ ने उनके स्वशाासन और आत्मनिर्भरता का वर्णन करते हुए लिखा है कि भारत के ग्रामीण समाज गणराज्य के समान है, ये सभी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं करते है। गाँधी जी ने कहा था कि भारत की आजादी नीव से प्रारंभ होनी चाहिये, पंचायती राज की स्थापना गाँधी जी के सपनों को साकार करने की पहल है।

सन 1955 में गठित बलवंतराय मेहता की सिफारिशों के आधार पर पंचायती राज व्यवस्था का प्रारंभ हुआ, उसी समय से यह अनुभव किया गया कि देश का समग्र विकास महिलाओं को अनदेखा करके नहीं किया जा सकता क्योंकि किसी भी राष्ट्र के विकास का आंकलन उस देश की महिलाओं की स्थिति से पता लगाया जाता है। भारत में भी इस दिशा में महिलाओं को शक्ति प्रदान करने व उनकी स्थिति में परिवर्तन लाने हेतु पंचायती राज व्यवस्था के तहत परिवर्तन लाने की कोशिश की गई थी।

राजनीति भारतीय महिलाओं के लिये कोई नई बात नहीं है। स्वतंत्र भारत में अनेक महिलाओं ने अपनी भागीदारी को पहले ही स्पष्ट कर दिया है, किन्तु वैधानिक रूप से संविधान के 73 वें और 74 वें संशोधनों के द्वारा पंचायती राज संस्थाओं और स्थानीय निकायों में प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की 30 प्रतिशत भागीदारी स्व. राजीव गाँधी ने पहली बार निश्चित करके महिला अधिकारों को एक नई दिशा प्रदान की जो वास्तव में एक सराहनीय कदम था। इस विधेयक ने पहली बार ग्रामीण महिलाओं को स्वयं अपने भाग्य का निर्माता बनने का अवसर प्रदान किया।

73 वें संविधान के फलस्वरूप पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से

==========

* सह प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बालाघाट (म.प्र.)

महिला वर्ग को पंचायत स्तर से ही नेतृत्व का अवसर दिया गया जो इस दिशा में ऐतिहासिक कदम है। क्योंकि इनमें न केवल पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा देकर संसद तथा विधानसभाओं की तरह इन्हें लोकतंत्र की तीसरी कतार के रूप में अपनाकर ग्रामीण विकास का दायित्व सौंपा गया है और इन संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई सीट आरक्षित करके महिलाओं के अस्तित्व और अधिकार को स्वीकार किया गया जो महिला शक्ति को उजागर करने का सार्थक प्रयास है। इन सबका समग्र प्रभाव महिला समाज में व्यापक पैमाने पर देखा जा सकता है।

पंचायती राज में महिला जन प्रतिनिधियों द्वारा सामाजिक दायित्व के निर्वाह में अपनी क्षमता प्रमाणित कर रही है। जिससे यह ज्ञात हो सके कि तमाम संवैधानिक प्रावधानों के फलस्वरूप महिला प्रतिनिधियों की स्थिति क्या है? महिला नेता अपने समुदाय के समग्र विकास हेतु किस प्रकार का प्रयत्न कर रहे है? यह भी अध्ययन का विषय है जिस पर समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन किया जाना आवश्यक है। यह शोध पत्र भी इस दिशा में एक प्रयास है।

शोध हेतु बालाघाट जिला (म.प्र.) की चयनित महिला नेताओं की संख्या 50 है वे विभिन्न पदों को सुशोभित कर रही है जिसे तालिका क्रमांक 1 में देखा जा सकता है।

तालिका क्रमांक -01
विभिन्न पदों पर महिलाओं की संख्या

क्र.	नेता का पद	आवृत्ति	प्रतिशत
1	जिला पंचायत अध्यक्ष	01	02
2	जनपद पंचायत सदस्य	09	18
3	सरपंच	40	80
	योग	50	100

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है, कि अधिकतर महिलाएँ पंचायतों में सरपंच के पद पर है जिनका प्रतिशत 80 है एवं जनपद सदस्य 18 प्रतिशत है जिला पंचायत अध्यक्ष के रूप श्रीमती रेखा बिसेन पदस्थ है।

उपरोक्त विश्लेषण इस ओर इंगित करता है कि महिलाएँ नेता के रूप में क्षेत्र में प्रभावशाली हो रही है। पंचायत के सर्वोच्च पद पर इनका आसीन होना

इनकी राजनीतिक गतिशीलता को स्पष्ट करता है।

तालिका क्रमांक - 02

महिला नेताओं का जातिवार विवरण

क्र.	महिला सरपंचो की जाति	संख्या	प्रतिशत
1	अनुसूचित जनजाति	8	16
2	अनुसूचित जाति	7	14
3	पिछड़ा वर्ग	30	60
4	सामान्य	05	10
	योग	50	100

उपरोक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि महिला नेताओं में से 16 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति, 14 प्रतिशत अनुसूचित जाति की है, जबकि 60 प्रतिशत पिछड़ा वर्ग तथा 10 प्रतिशत सामान्य वर्ग की है।

महिला नेताओं की शासकीय कार्य हेतु अन्य पर निर्भरता-

पंचायती राज संस्थाओं के द्वारा महिलाओं में स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता का विकास किया गया है जिससे उनके अंदर हिम्मत व सुरक्षा के भाव आए और वे अपने क्षेत्र की समस्याओं को रखकर उनका समाधान करने में सक्षम हो सके।

प्राय: देखा गया है कि महिला नेता अपने परिवार के किसी न किसी सदस्य के साथ पंचायतों की बैठकों में हिस्सा लेती है, उनके निर्णयों को प्राथमिकता देती है। उनके अपने शासकीय कार्यो की पूर्णता हेतु पति या परिवार के अन्य पुरूषों पर निर्भरता का आरोप लगता रहा है। उनकी यही निर्भरता का अध्ययन क्षेत्र के उत्तरदायित्व से ज्ञात किया गया जिसमें निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए जिसे तालिका क्रमांक 03 में स्पष्ट किया गया है।

तालिका क्रमांक 03

महिला नेताओं की शासकीय कार्य हेतु अन्य पर निर्भरता

क्र.	निर्भरता की मात्रा	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अन्य पर पूर्णरूपेण निर्भरता	23	46
2	अन्य पर आंशिक निर्भरता	25	50
3	अन्य पर किसी भी प्रकार की निर्भरता नहीं	02	04
	योग	50	100

तालिका के अनुसार 46 प्रतिशत महिला नेताओं ने स्वीकारा है कि वे शासकीय कार्यो के लिये पूर्णरूपेण दूसरों पर निर्भर है। उन्होंने इसका कारण अपनी अशिक्षा व कार्यानुभव का अभाव बताया वही 50 प्रतिशत अर्थात् 25 महिला नेताओं ने अन्य के प्रति आंशिक निर्भरता को स्वीकारा जो प्राय: सलाह

मशविरे व कार्य में सहयोग के रूप में होती है। 04 प्रतिशत अर्थात् 02 नेताओं ने स्वयं को आत्मनिर्भर बताया और कहा कि महिलाएँ यदि करना चाहे तो ऐसा कोई कार्य नहीं है जो वे स्वयं न कर सकती हो।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि महिला नेता अन्य पर आंशिक निर्भर रहती है।

महिलाओं को नेता के रूप में स्वीकृति–

कई प्रकार की बाधाओं और कठिनाइयों के बाद बालाघाट जिले में महिला नेतृत्व उभरा है। सामान्य रूप में क्या स्थिति है। महिलाओं को नेता के रूप में किस सीमा तक स्वीकारा जा रहा है? इसका विश्लेषण तालिका क्रमांक 04 में स्पष्ट किया गया है।

तालिका क्रमांक - 04

महिलाओं को नेता के रूप में स्वीकृति

क्र.	नेता के रूप में स्वीकृति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हां	35	70
2	नहीं	15	30
	योग	50	100

70 प्रतिशत महिलाओं को नेता के रूप में स्वीकार कर रहें है और व उस पर किसी प्रकार का प्रश्न चिन्ह अंकित नहीं कर रहे है। जबकि, 30 प्रतिशत अभी भी ये मानते है कि महिलाएँ इतनी सक्षम नहीं हुई है कि उन्हें नेता के रूप में स्वीकार किया जाये।

महिला नेताओं को आवश्यक परिस्थिति व प्रोत्साहन न मिलना–

राजनीतिक परिदृश्य में महिलाओं की भागीदारी का विश्लेषण किया गया है कि इतने वर्षों बाद भी उन्हें वे परिस्थितियाँ व प्रोत्साहन नहीं मिल रहा जितनी की अपेक्षा है। इस तथ्य को जानने का प्रयास किया गया है। जिसे तालिका क्रमांक 05 में स्पष्ट किया गया है।

तालिका क्रमांक - 05

महिला नेताओं को प्रोत्साहन न मिलना

क्र.	प्रोत्साहन न मिलना	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हां	42	84
2	नहीं	08	16
	योग	50	100

स्पष्ट होता है कि 84 प्रतिशत महिला नेता यह मानते है कि अभी भी उन्हें आवश्यक परिस्थिति व प्रोत्साहन नही मिलता जबकि 16 प्रतिशत के अनुसार उन्हें आवश्यक परिस्थिति व प्रोत्साहन मिलता है।

उपरोक्त तालिकाओं से स्पष्ट होता है कि महिला नेताओं को आरक्षण के बावजूद तरह-तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है और ये समस्याएँ विभिन्न कारणों से उत्पन्न होती है -

1. जागरूकता की कमी- ग्रामीण विकास तभी संभव है जब पंचायत के प्रतिनिधियों पदाधिकारियों को इसके संबंध में उठाए जाने वाले कदमों की जानकारी हो। जागरूकता की कमी के कारण ही महिला प्रतिनिधियों को निर्णय प्रक्रिया में भूमिका न निभाना, शासकीय योजनाओं एवं कार्यक्रमों के संबंध में जानकारी न होना जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
2. अशिक्षित या अल्प शिक्षित- ग्रामीण महिलाओं का अशिक्षित होना उनके कार्य में सबसे बड़ी बाधा है। शासन के विशेष प्रयासों के बावजूद भी महिला साक्षरता दर कम है इसका मुख्य कारण महिला साक्षरता के लिए जनजागरण की कमी है।
3. गरीबी रेखा से नीचे - महिला प्रतिनिधियों का गरीबी रेखा से नीचे रहना भी समस्या है। मध्यप्रदेश में एक सर्वेक्षण के अनुसार पंचायतों में चुनकर आई 57 प्रतिशत महिला गरीबी रेखा के नीचे के परिवार से है।
4. संबंधो से जुड़ा होना - पुरुष प्रधान समाज वर्चस्व को बनाए रखने के लिए संबंधो का उपयोग कर रहा है महिला सरपंच की खुद की कोई राय नहीं है, मध्यप्रदेश में तो कुछ शब्दों का चलन आम हो गया है। जैसे - सरपंच पति, सरपंच पुत्र।
5. भ्रष्टाचार - नौकरशाही के भ्रष्टाचार के कारण महिलाएँ कार्य करने में असमर्थ है उनका कहना है, कि कोई भी फाईल बिना हिस्सा दिए आगे नहीं बढ़ती जिससे विकास में बाधा आती है।

6. चरित्र हनन - गाँव की रूढ़िवादी नीतियों के कारण भी प्रतिनिधि कार्य करने में असमर्थ है महिलाएँ घर से बाहर निकलकर ग्रामीण विकास का कार्य करती है तो समाज उनके चरित्र पर उगंली उठाकर उन्हें हतोत्साहित करता है।

7. अविश्वास प्रस्ताव - पंचायत का पुरुष वर्ग व गाँव का पुरुष वर्ग यह नहीं चाहता कि महिला प्रधान हो। अतः बिना किसी कारण के अविश्वास प्रस्ताव लाकर उन्हें हटा देना चाहते है और पुरुष उपप्रधान को प्रधान बनाना चाहते है। इसके लिये उन्हें भ्रष्टाचार के मामलों में फसाया जाता है।

उपलब्धियाँ – पंचायती राज व्यवस्था से महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है उन्हें अपनी शक्ति को पहचानना है।

1. राजनीतिक चेतना का प्रसार हुआ है।
2. कार्यक्षमता के प्रति विश्वास बढ़ा है।
3. आत्मसम्मान की भावना जागृत हुई है।
4. शोषण के प्रति जागृति आई है।
5. सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ी है।
6. विवेकपूर्ण निर्णय क्षमता में वृद्धि हुई है।
7. कार्यपद्धति में खुलापन व स्पष्टवादिता विकसित हुई है।

महिला नेतृत्व को प्रभावी बनाने हेतु सुझाव –

1. महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाया जाये।
2. सामाजिक प्रथाओं व परंपराओं में परिवर्तन की जरुरत।
3. पुरुष मानसिकता में परिवर्तन की आवश्यकता।
4. सरकार सभी महिलाओं को शिक्षित करने का अविलम्ब प्रावधान करें।
5. महिलाओं से संबंधित सभी कानूनों की जानकारी दी जाये।
6. महिलाओं को जागरूक बनाया जाये।

निष्कर्ष–

1. विभिन्न पदों पर महिला नेताओं का पदस्थ होना महिलाओं की बदली हुई स्थिति का परिचायक है।
2. आरक्षण के कारण महिलायें इन पदों पर पदस्थ हो रही है। आरक्षण न होने पर क्या ये इन पदों पर पदस्थ होती? यह एक विचारणीय प्रश्न है।

प्रस्तुत शोध पत्र पंचायत जन प्रतिनिधियों की राजनीतिक वास्तविकता को जानने पर आधारित है। कुछ वर्षों से समानता की ओर महिलाओं को अग्रसर करने के सरकारी व गैर सरकारी स्तर के सभी प्रयास जारी है लेकिन समाज के प्रत्येक क्षेत्र में महिला सहभागिता की स्थिति आंकड़ों में दर्ज होती जा रही है। किन्तु भूमिका संघर्ष सामाजिक मान्यतायें जागरूकता का अभाव आदि समस्यायें महिलाओं के विकास में बाधक बनी हुई है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में ग्रामीण व नगरीय क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति में दिखाई दे रहा परिवर्तन वास्तविकता को प्रश्न चिन्हित कर रहा है। इसके लिये यह आवश्यक है कि पंचायती राज में महिला जन प्रतिनिधियों की स्थिति का अध्ययन किया जाये।

अध्ययन से यह स्पष्ट है कि पंचायती राज के माध्यम से महिलाओं का आत्मविश्वास बढ़ा है जिसके कारण उनकी स्थिति उत्साह वर्धक है। वर्तमान समय में महिलाओं की सामाजिक स्थिति परिवर्तित हो रही है। वे अपना पक्ष पूरी निर्भीकता एवं निष्पक्षता से बैठकों में रखने लगी है। पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी से उन्हें जो नया परिवेश मिल रहा है। वह उनके लिए प्रगति एवं विकास के नये आयाम को स्थापित कर रहा है तथा उसके साथ ही पुरुष समाज में वर्चस्व पर भी अंकुश लगाकर उन्हें यह समझाने में अपनी भूमिका का निर्वाह कर रहा हे कि भारत की ग्रामीण महिलाएँ पुरुषो की अपेक्षा किसी भी स्तर पर कमजोर नहीं हैं।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. एन के श्रीवास्तव - भारत में पंचायती राज
2. पंचायत संदेश - अक्टूबर 2009
3. योजना - नवम्बर 2000
4. पंचायती राज एवं दलित नेतृत्व- पूरणमल आविष्कार पब्लिशर्स जयपुर
5. पंचायती राज एवं अनुसूचित जाति महिला नेतृत्व - यतीन्द्र सिंह सिसोदिया रावत पब्लिकेशन्स जयपुर
6. कुरुक्षेत्र अप्रैल 2002

बस्तर जिले की राजनीति में महिलाओं का योगदान व वर्तमान चुनौती

* सियालाल नाग

भूमिका– भारतीय समाज में छत्तीसगढ़ बस्तर जिले की राजनीति में महिलाओं का योगदान समय, काल और परिस्थिति के अनुसार बदलती रही है। समय के साथ उसकी स्थितियों में परिवर्तन आया है। वैदिक काल में महिला की स्थिति काफी मजबूत और प्रतिष्ठापूर्ण थी, लेकिन धीरे-धीरे उसकी स्थितियों में बदलाव होने लगे। वक्त की आंधी ने महिला की स्थिति कमजोर व बेबसीपूर्ण स्थिति में पहुँचा दी। लेकिन बस्तर जिले की राजनीति में महिलाओं का योगदान बहुत पुराना है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले से ही महिलायें राजनैतिक योगदान दे रही है। फिर भी महिलाओं को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

उद्देश्य–

1. बस्तर जिले की राजनीति में महिलाओं का योगदान एवं वर्तमान समय की चुनौतियों की स्थिति को समीक्षा करना।
2. स्थानीय महिला व अन्य जिले, राज्य के महिलाओं के मध्य हो रहें सम्पर्क के प्रभाव का पता लगना।
3. बस्तर जिले के राजनीतिक विकास में महिलाओं की प्रशासन में भूमिका को ज्ञात करना
4. बस्तर जिले की राजनीति में महिलाओं के योगदान पर पड़ने वाले प्रभावों को ज्ञात करना।

आवश्यकता–

1. बस्तर जिला की अधिकतर जनसंख्या आदिवासियों की है। स्थानीय प्रशासन में महिला प्रतिनिधि नाम मात्र की होती हैं, वास्तविक कार्य का सम्पादन पुरूषों के द्वारा किया जाता है।
2. बस्तर जिले की राजनीति में महिलाओं का योगदान ज्ञात करना।
3. बस्तर लोकतंत्र की वास्तविकता को ज्ञात करना जहां पर स्थानीय निकाय

==========

* अतिथि सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, अध्ययनशाला बस्तर विश्वविद्यालय, जगदलपुर (छ.ग.)

में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है।

4. बस्तर की राजनीति में महिलाओं को आने वाले समय की समस्या एवं समाधान ज्ञात करना है।

तालिका क्रमांक 1

बस्तर जिले की जनसंख्या 2011 और 2001 जनगणनानुसार

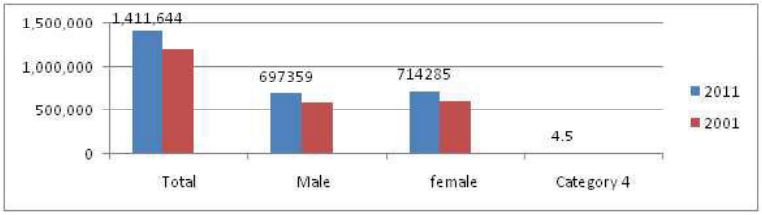

तालिका क्रमांक 2

बस्तर जिले में साक्षारता प्रतिशत 2001 के अनुसार

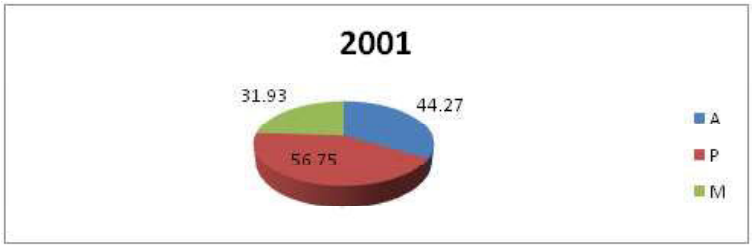

तालिका क्रमांक 2 से ज्ञात होता है कि सन् 2001 की जनगणनानुसार बस्तर की साक्षारता प्रतिशत का औसत 44.27 है, पुरूष साक्षारता पतिशत 56.75 है एवं महिला साक्षारता पतिशत 31.93 है जब हम तुलनात्मक अध्ययन करते है तो यह प्रतिशत राज्य एवं देश की साक्षारता प्रतिशत से कम है, परन्तु भविष्य में बढ़ने उम्मीद की जा रही है

तालिका क्रमांक 3

बस्तर जिले में साक्षारता प्रतिशत 2011 के अनुसार

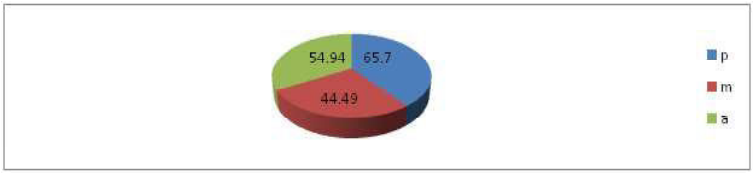

तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि सन् 2011 की जनगणनानुसार बस्तर की साक्षरता प्रतिशत कुल 54.94 है, जबकि पुरूष साक्षरता प्रतिशत 65.7 है और महिला साक्षरता प्रतिशत 44.49 है।

जब हम तुलनात्मक अध्ययन करे तो स्पष्ट है कि 2001 से 2011 की साक्षरता प्रतिशत में वृद्धि लगभग 10 प्रतिशत होती हुयी दिखाई देती है और आशा करते है कि भविष्य में साक्षरता प्रतिशत में इससे भी अधिक बढ़त्तरी होगी।

बस्तर की प्रथम महिला शासिका महारानी प्रफुल्ल कुमारी देवी का राज्याभिषेक सन् 1922 में 12 वर्ष की आयु में हुआ था। उनका विवाह मयूज भंज महाराज के भतीजे प्रफुल्ल चंद भजदेव के साथ जनवरी 1927 को हुआ ('द इडियन वूमन हुड़')

महारानी ने महिला के रुप में अपने अधिकारों की सम्पुर्ण प्रभुसत्ता को प्राप्त कर इतिहास बनाया जबकि उनके पिता (रुद्रप्रतापदेव) ने मृत्यु के कुछ समय पूर्व एक दत्तक पुत्र लेने की इच्छा व्यक्त कर अपनी पत्नी (महारानी सौतेली माँ) को अधिकृत किया था। महारानी प्रफुल्ल कुमारी देवी को अंग्रेज शासको ने लगातर तंग किया था। उनके पति प्रफुल्ल चन्द्र भंजदेव के बस्तर प्रवेश में प्रतिबंध लगा दिया गया था, क्योकि उन्होंने बस्तर को 1930 ई. में निजामिस्तान बनाने के ब्रिटिश षड़यन्त्र की खिलाफत की थी। उन्हे उनके बच्चों से दूर रखा गया तथा उनका अपने बच्चो पर कोई अधिकार नहीं रह गया था। उन्हें भी अंग्रेजों ने प्रताड़ित किया। महारानी को 'अपेंड़ीसायटिस' के ऑपरेशन के लिये लंदन भेजा गया था। जहां उनका देहावसन 1936 में संदेहास्पद ढ़ग से हो गया। संभवतः उन्हे अंग्रेज शासको द्वारा षड़यंत्रपूर्वक मार दिया गया। इस प्रकार महारानी प्रफुल्ल कुमारी देवी केवल बस्तर की ही नहीं अपितु संपूर्ण छत्तीसगढ़ की प्रथम एवं एक मात्र महिला शासिका थी। इसके बाद प्रवीरचन्द्र भंजदेव को ब्रिटिश शासन ने औपचारिक रुप से गद्दी पर बिठाया एवं रियासती शासन की बागडोर अपनी हाथ में ले ली।

महिलाओं की स्थिति-

वैदिक काल में पुरूषों की सभा में शास्त्रार्थ करने वाली महिला बाद के कालखण्ड़ में घर की चार दीवारी के बीच कैद रहने वाली और पुरूषों के पैर की जूती तक बना दी गई। वैदिक समाज में महिलाओं को प्रर्याप्त स्वतंत्रता थी, वे अपना सुयोग्य वर स्वयं चुनती थी लेकिन बाद के दौर में नारी का विवाह कम उम्र में होने लगा। माना जाता है कि वैदिक युग में महिलाओं का स्थान सम्मानीय था। मध्यकाल में उनकी स्थिति दयनीय हो गई, जबकि आधुनिक काल में महिलाएँ अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए जूझ रही है। महिलायें अपने हिस्से का

आसमां लेने के लिए प्रयासरत है। अपने हाथों की एक लम्बी लाइन खींचने की तैयारी में है। प्राचीन काल में विधवाओं की स्थिति दयनीय नहीं थी। सती प्रथा का भी प्रचलन नहीं था। बाद के समय में विधवा विवाह को कुछ जातियों ने समर्थन नहीं किया जबकि विधुर के पुनर्विवाह को अपनाया गया ताकि पत्नी के देहान्त के बाद पति अपना विवाह कर सके। समाज ने पुरूष के सुख की सम्पूर्ण व्यवस्था की जबकि महिला को सदैव तिरस्कृत समझा। पति की मृत्यु के बाद उस सती स्थल का महिमामण्ड़न कर आय के नए जरिए खोजे गए। देश की ताजा जनगणना के सन् 2011 के अनुसार महिला की शैक्षणिक स्थिति काफी चिन्ताजनक है। देश में पुरूष साक्षरता दर 82.14 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर मात्र 65. 46 प्रतिशत बनी हुई है। महिला साक्षरता दर को बढ़ाने के लिए उनमें जागरूकता व संगठित होने की आवश्यकता है। शैक्षणिक दृष्टि से महिला अब भी पिछड़ी हुई है और महिला शिक्षा के प्रसार की आज बहुत आवश्यकता है। पुरूष प्रधान भारतीय समाज में नारी की स्थिति दिल दहलाने वाली बनी हुई है।

मनुस्मृति में महिला का स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार नहीं किया गया-'बचपन में पिता, जवानी में पति और बुढ़ापे में पुत्र के अधीन रखा गया है।' हालांकि भारतीय संविधान ने नारी को पुरूष के समकक्ष माना है। सरकार की ओर से समाज में व्याप्त कुरीतियों मसलन दहेज प्रथा का विरोध, भ्रुण हत्या पर प्रतिबंध, लिंग परीक्षण पर पाबन्दी के प्रयासों के भारतीय समाज में कोई ज्यादा प्रभाव नहीं पड़ा, बल्कि ये कुरीतियॉ ज्यादा फैल रही हैं। वर्तमान में महिलाओं को यह समझना होगा कि आज समाज में उनकी दयनीय स्थिति भगवान की देन न होकर समाज में चली आ रही परम्पराओं का परिणाम है। इस स्थिति को बदलने का बीड़ा महिलाओं को स्वयं उठना होगा। जब तक वह खुद अपने सामाजिक एवं आर्थिक स्तर से सुधार नहीं करेगी, तब तक समाज में उनका स्थान द्वितीय श्रेणी के नागरिक का ही बना रहेगा महात्मा गांधी ने कहा था-'स्त्री तो पुरूष की सहचरी है, उसे पुरूष के समान ही मानसिक क्षमताएँ प्राप्त हैं। उसे पुरूष की गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार है और पुरूष के समान ही स्वतंत्र और स्वाधीनता का अधिकार प्राप्त है। पुरूष और स्त्री का दर्जा बराबर है, लेकिन एक जैसा नहीं है। वे एक अनुपम युगल हैं और एक-दूसरे के पूरक हैं। उनमें से प्रत्येक एक-दूसरे की सहायता करते हैं, इस प्रकार एक के बिना दूसरे के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती।

महिला सशक्तिकरण वर्ष 2001 के बाद महिलाओं में जबरदस्त जागृति आई लेकिन अभी भी सामन्तशाही के अवशेष भारतीय समाज में दिखाई देते है। आज भी कई परिवारों में लड़की के जन्म लेने के साथ ही उसके मुंह के तम्बाकू

भरकर उसे मौत के घाट उतार दिया जाता है।

बस्तर जिला पंचायत में महिलाओं का योगदान-

73 वें संविधान संशोधन अधिनियम के अनुसार मध्यप्रदेश पंचायती राज अधिनियम 30 दिसम्बर, 1993 ई. को राज्य विधान सभा द्वारा पारित किया गया और 25 जनवरी, 1994 ई. को राज्य में लागू कर त्रिस्तरीय पंचायती राज की स्थापना की गई। 1 नवम्बर, 2000 ई. को छत्तीसगढ़ राज्य की स्थापना की गई। छत्तीसगढ़ राज्य में 27 जिला पंचायतें, 146 जनपद पंचायतें तथा 9,768 ग्राम पंचायतें कार्यरत है। जिसमें महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है। जिसके आधार पर जिला पंचायत बस्तर का विश्लेषण किया जा रहा है। जिला पंचायत बस्तर में 2018 की स्थिति निम्नवत है।

तालिका क्रमांक 4

जिला पंचायत बस्तर अध्यक्ष पद कुल 1 पर निर्वाचित सदस्य

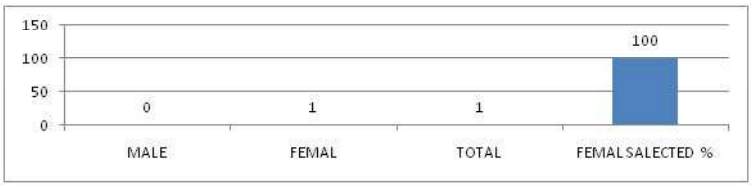

तालिका क्रमांक 4 में कुल एक सदस्य वाली जिला पंचायत में महिला ही निर्वाचित हुयी है,जिसका प्रतिशत 100 है।

तालिका क्रमांक 5

जिला पंचायत बस्तर प्रतिनिधि सदस्य

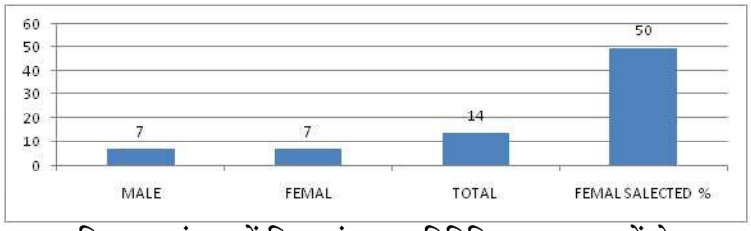

तलिका क्रमांक 5 में जिला पंचायत प्रतिनिधि पद कुल 14 में से 7 सदस्य महिला निर्वाचित हुयी है। सीटों के आधार पर महिलाओं का प्रतिशत 50 है।

तालिका क्रमांक 6

जनपद पंचायत अध्यक्ष

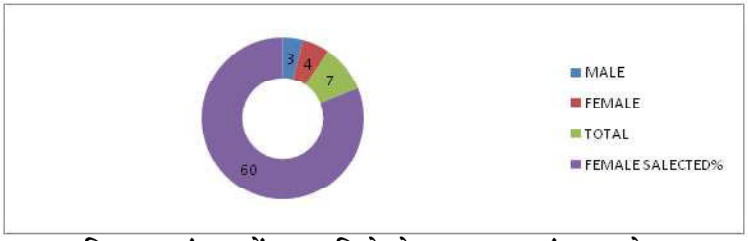

तालिका क्रमांक 6 में बस्तर जिले के सात जनपद पंचायत के अध्यक्ष पद कुल 7 में से 4 सदस्य महिला निर्वाचित हुयी है, जिसका प्रतिशत 60 प्रतिशत है।

तालिका क्रमांक 7

जनपद पंचायत प्रतिनिधि

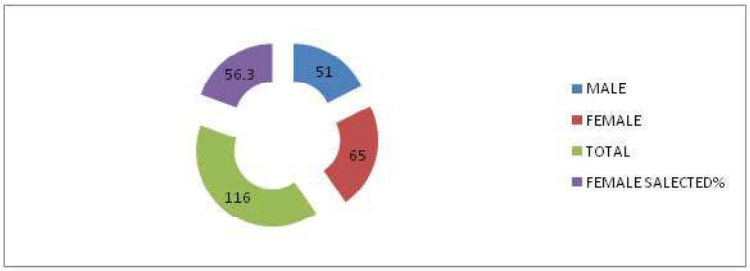

तालिका क्रमांक 7 में जनपद पंचायत प्रतिनिधि के पद कुल 116 है,जिसमें 65 सदस्य महिला निर्वाचित हुयी है। जिसका प्रतशत 56.3 प्रतिशत है।

तालिका क्रमांक 8

ग्राम पंचायतों के सरपंच

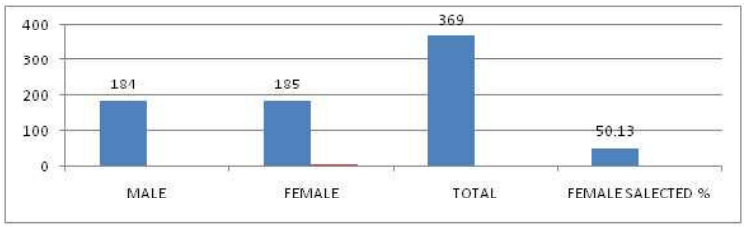

तालिका क्रमांक 8 में बस्तर जिला के ग्राम पंचायतों के सरपंच प्रतिनिधि की कुल सदस्य संख्या 369 में से 50.13 प्रतिशत महिलाये निर्वाचित हुयी है।

तालिका क्रमांक 9,
ग्राम पंचायतों के पंच प्रतिनिधि

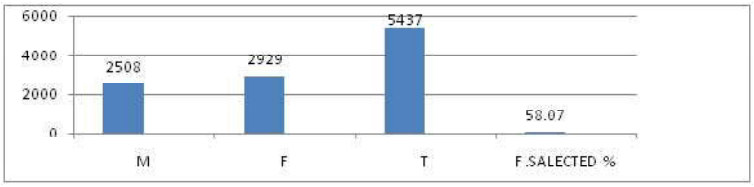

तालिका क्रमांक 9 में बस्तर जिला के ग्राम पंचायतों के पंच प्रतिनिधि की कुल सदस्य संख्या 5437 में से 2929 महिला पंच प्रतिनिध के रूप में निर्वाचित हुयी है।

तालिका क्रमांक 10,
महायोग

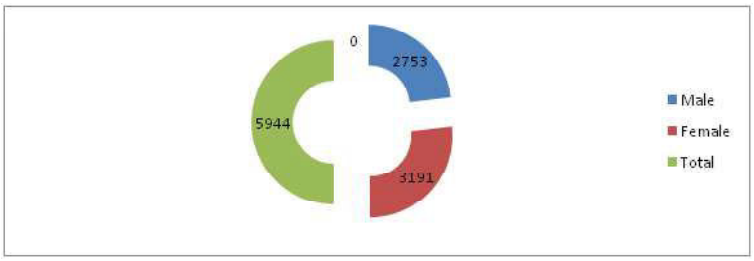

तालिका क्रमांक 10 स्थानीय स्वशासन के त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था के तहत बस्तर जिला के सम्पूर्ण अध्ययन से स्पष्ट होता है कि तीनों स्तरों में कुल सीट 5944 में से महिलाये 3191 सदस्य निर्वाचित हुयी है।

उपर्युक्त तालिकाओ का तुलनात्मक अध्ययन करते है तो स्पष्ट होता है कि जिला पंचयात अध्यक्ष में 100 प्रतिशत महिला निर्वाचित है, जबकि जिला सदस्य के 50 प्रतिशत महिलाये और जनपद में अध्यक्ष 60 प्रतिशत महिलाये, जनपद सदस्य 56 प्रतिशत एवं ग्राम पंचायत सरपंच में 50.13 प्रतिशत, पंच 58.07 प्रतिशत निर्वाचित हुयी है। ये सब आरक्षण के कारण महिलाओं की संख्या 50 प्रतिशत से अधिक है, जो बस्तर के महिलाओं के लिये शुभ संकेत है। यही पर विधान सभा, लोक सभा, राज्यसभा, मंत्रिमण्ड़लों में इनकी स्थिति क्षीण है।

समस्याएं –

1. बस्तर की राजनीति में महिलाओं के योगदान का अभाव होने की मुख्य समस्या अशिक्षा है।

2. महिलाये अर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण भी राजनीति से वंचित रहती है।
3. महिलाओं को यातायात संबंधी समस्याये होती है।
4. बस्तर की महिलाये केन्द्र सरकार या राज्य सरकार की राजनीति में नहीं होने का प्रमुख कारण आरक्षण का तय नहीं होना हैं।
5. सम्पूर्ण बस्तर जिला नक्सलावाद की समस्या से ग्रस्त है।
6. राष्ट्रीय राजनीतिक दल भी महिलाओं को पार्टी आरक्षण के आधार पर टिकट नही देती है।

समाधान–

1. महिलाये को आर्थिक रूप से मजबूत होने की आवश्यकता है। जिसके लिए महिला प्रतिनिधि को सम्मानजनक प्रतिमाह वेतन निर्धारित किया जाना चाहिए।
2. महिलाओं को साक्षार करने की आवश्यकता है।
3. बस्तर एवं छत्तीसगढ़ से नक्सलवाद का खात्मा करने की आवश्यकता है। (चाहे बातचीत से हो या किसी अन्य माध्यम से)
4. राष्ट्रीय पार्टियों में 33 प्रतिशत आरक्षण का क्रियान्वयन करना आवश्यक है।
5. विधान सभा और लोकसभा, राज्यसभा में महिलाओं के लिए आरक्षण व्यवस्था लागू करने की आवश्यकता है।
6. यातायात की प्रर्याप्त सुविधा मुहैया कराना चाहिए जो प्रतिनिधि के पद के आधार पर हो।

निष्कर्ष– जहां तक बस्तर जिला से महिलाये राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, कैबिनेट मंत्री, राज्यसभा, लोकसभा, राज्यपाल, मुख्यमंत्री, मंत्री, विधायक, इत्यादि पदों में कभी आसीन नही हुयी है। पंचायत में आरक्षण के कारण महिलाओं की स्थिति सम्मानजनक कही जा सकती है। जब हम तुलनात्मक अध्ययन करे तो स्पष्ट है कि आरक्षण के कारण ही इनकी स्थिति सम्मान जनक है अन्यथा नगण्य हो सकता था, लेकिन उससे ऊपर के पदों पर आसीन नही होना एक चिंता का विषय है। राजनीति महिलाओं के लिए सदैव एक वर्जित क्षेत्र रहा हैं। वर्तमान परिस्थितियॉ भी इस वर्जना को तोड़ नहीं पाई हैं। निरंतर जटिल होती परिस्थतियॉ, तथा चारित्रिक पतन महिलाओं को इस क्षेत्र से दूर रखे हैं। अतः कहा जा सकता है कि राजनीतिक क्षेत्र में स्त्रियॉ न के बराबर हैं और जो स्त्रियॉ इस क्षेत्र में उपस्थित हैं, वे भी लगातार शोषण तथा समस्याओं का सामना कर रही हैं। ये सभी पहलू बस्तर की महिलाओं की राजनीतिक चुनौती है। जिनसे महिलाओं को सामना करने

की आवश्यकता है।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. डॉ. अनुभूति, ''नारी समस्याओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन'' हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजनौर उ.प्र.संस्करण प्रथम 2013
2. डॉ. के .के. झा, बस्तर और लोकनायक, प्रवीर चन्द्र भंजदेव और उनकी वंश परम्परा विश्व भारती प्रकाशन नागपुर 2013
3. www.c.g.vidhan sabha.gov.in 26.07.2018
4. journalistdharamveer.blogspot.com>blo….21.07.2018
5. bastar.gov.in>population 10.08.2018

कल्चुरी युगीन समाज में नारियों की दशा (छत्तीसगढ़ के विशेष सन्दर्भ में)

* डॉ. महेन्द्र कुमार सार्वा

समाज निर्माण में नारी शक्ति का महत्वपूर्ण योगदान है। अपनी लघुता में महानता, शीतलता में जीवन की उष्मा एवं सुन्दर तन में शिवम् बसाये रहने वाली नारी, समाज के लिए जो आदर्श निश्चित करती है और अपने कर्तव्यों का पालन करती हुई जीवन का अर्थ व्यक्त करती है, उसी से सम्पूर्ण मानव जाति के भाग्य का निर्णय होता है। नारी सदा नर की प्रेरक शक्ति रही है। सृष्टि के आरंभ से ही नारी ने सामाजिक जीवन के पोषण में अपनी ममता, वात्सल्य, त्याग, करूणा से महती योगदान दिया है। इतिहास साक्षी है कि भारत ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व की नारी जाति को ऐसी सामाजिक परिस्थितियों का सामना करना पडता है, जिसमें कभी वह पूजी गई तो कभी उसे बंधन एवं निषेधों की जंजीरों से जकड़ दिया गया। सम्पूर्ण विश्व में कोई भी ऐसा स्थान नहीं है, जहां नारी ने अत्याचार न सहा हो। मां का सम्बोधन पाने वाली नारी गणिका, वेश्या एवं नगरवधू कहलाई। ऐसे में समाज के सर्वांगीण अध्ययन एवं विकास के लिए नारी समाज का सम्पूर्ण अध्ययन आवश्यक है। इसी संदर्भ में मेरा शोधपत्र ''कल्चुरी युगीन समाज में नारियों की दशा'' छत्तीसगढ़ के विशेष सन्दर्भ में एक ऐतिहासिक विश्लेषण है।

प्राचीन भारत के इतिहास में कल्चुरी नरेशों का स्थान वैशिष्टपूर्ण रहा है। दक्षिण कोशल अर्थात छत्तीसगढ़ में कल्चुरियों की चार प्रमुख राजधानियां रही -तुम्माण, रतनपुर, खल्लारी एवं रायपुर।[1] छत्तीसगढ़ के कल्चुरियों ने राजनैतिक एवं प्रशासनिक उपलब्धियों के साथ सभ्यता एवं संस्कृति के विकास में अपना योगदान दिया। तुम्माण, रतनपुर, खरौद, जांजगीर, पाली, मल्हार, नारायणपुर, कोनी, राजिम, खल्लारी रायपुर आदि स्थानों से प्राप्त शिलालेखों एवं मूर्तियों से नारियों की तत्कालीन स्थिति प्रमाणित होता है।[2]

कल्चुरी ताम्रपत्रों के अनुसार नोनल्ला अपने पति रत्नराज प्रथम की अत्यंत

==========

* सहायक प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय दू. ब. महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

प्यारी थी।[3] जाजल्लदेव की पत्नी लाछल्ला देवी को पाणिग्रहिता, धर्मिता आदि नाम से अलंकृत किया गया था। पाणिग्रहिता अर्थात पाणि ग्रहण संस्कार द्वारा पति द्वारा शारीरिक, आत्मिक एवं मानसिक बंधन में बंधी स्त्री तथा धर्मिणी अर्थात धर्म बंधनों में बंधी स्त्री। यह उसके धार्मिक महत्व को उजागर करती है।[4]

प्राचीन काल से विवाह की जो परम्परा चली आ रही है, उसी परम्परा का निर्वाह कल्चुरी कालीन समाज द्वारा किए जाने के साक्ष्य उपलब्ध होते है। कल्चुरी अभिलेखों में विवाह को परिणय, उपायन, पाणिग्रहण आदि शब्दों से विभूषित किया गया हैं।[5] शाही परिवार की लड़कियों के विवाह शाही परिवार में होने के साक्ष्य मिलते हैं। कोमोमंडल के क्षत्रिय राजा वजूवर्मन की पुत्री नोनल्ला का विवाह रत्नराज प्रथम से इस दृष्टांत की पुष्टि करता है।[6] रंभाला, सोनल्ला देवी, लाच्छल्ला देवी, सोमल्ला देवी एवं अन्य सभी कल्चुरी कालीन रानियां शाही क्षत्रिय परिवारों से ही संबंधित थी। ब्राम्हण, वैश्य आदि अन्य वर्ग के लोग अपने ही वर्ण से विवाह करते थे।[7] किसी भी राजा की यशकीर्ति विजय एवं सफल राज्य शासन के पीछे उसकी धर्मपत्नी का ही हाथ होता था। खरोद के शिलालेख से स्पष्ट होता है कि राजादेव की पत्नी जीवा उसकी महान सफलता के लिए प्रेरक थी।[8] जन साधारण में एक विवाह होने के साक्ष्य मिलते है किन्तु सम्पन्न घरानों एवं उच्च वर्गों में बहुविवाह के भी अनेक उदाहरण मिलते है। रत्नदेव तृतीय के प्रधानमंत्री ब्राम्हण गंगाधर की दो पत्नियां रमा एवं पद्मा का उल्लेख मिलता है। उल्हणदेव की तीन पत्नियां का उसकी चिता के साथ सती होने का प्रमाण भी सिद्ध करता है कि उसकी तीन पत्नियां थी। न केवल क्षत्रिय वरन् कायस्थ देवगण की भी दो पत्नियां प्रभा एवं जन्हो का उल्लेख मिलता हैं।[9] समकालीन समाज में प्रेम विवाह के उदाहरण भी मिलते है। कलचुरी रतनपुर शिलालेख में उत्कीर्ण है कि मांडलिक ब्रम्हदेव एक युवती के प्रेमजाल में किस प्रकार बंधे थे।[10] कलचुरी काल में विधवा विवाह के भी उल्लेख भी मिलते हैं। जिन नारियों के पति (वीर सैनिक) युद्ध में मारे जाते थे उन्हें वीर सामन्तों द्वारा वरण किया जाता था। प्राचीनकाल में इस प्रकार के विवाह आम बात थी।[11]

कलचुरी काल में भी स्त्रियां पति, पिता व पुत्र अथवा तीनों के न होने पर अन्य पुरूष संबंधियों के ही नियंत्रण में रहती थी।[12] कन्या जन्म को अशुभ नहीं माना जाता था। अनेक स्त्रियों ने समय-समय पर अपने पिता, पति एवं पुत्र के यश फैलाने में अमूल्य योगदान दिया है।[13] स्त्री शिक्षा पर रोक नहीं थी। पृथ्वीदेव के रतनपुर शिलालेख में देवगण की पुत्री थोपा का उल्लेख मिलता है कि वह सद्गुणों की भंडार थी।[14] कलचुरी अभिलेखों में रत्नराज प्रथम की पत्नी नोनल्ला का उल्लेख उसके पिता कोमोमंडल के राजा यजूका की प्रसिद्ध पुत्री के रूप में

किया गया है।[15] कल्चुरी काल में पत्नीव्रता पत्नियों को दैवीय उपाधियां देने के साक्ष्य मिलते हैं यथा शची इन्द्र, लक्ष्मी-विष्णु आदि।[16]

पत्नी को घर की देहरी लांघ कर जाने का अधिकार न था। पुरदाह प्रथा अधिक लोकप्रिय थी। पति की मृत्यु के बाद पत्नी का जीवन अत्यन्त दुखद माना जाता था। एक विधवा से अपेक्षा की जाती थी कि वह अपने बेटे की छाया में रहकर अपने सतीत्व की रक्षा करे अथवा अपने पति की चिता में जलकर सती हो जाये।[17] विधवा पुनर्विवाह के उदाहरण उच्च वर्ण में नहीं मिलता। हर्षगुप्त की पत्नी एवं महाशिवगुप्त बालार्जुन की माता वासटा का वैधव्य पूर्ण जीवन कष्टप्रद था, वह अपना शेष जीवन व्रत , उपवास एवं ईश्वर की आराधना करते हुए तीर्थ स्थल में व्यतीत की थी।[18] उपरोक्त जानकारी लक्ष्मण मंदिर के शिलालेख से मिलती हैं। प्राचीनकाल से स्त्री की पूर्णता उसके मातृत्व से ही प्राप्त होती है, ऐसा माना जाता रहा, कि पति के असमर्थ होने पर कुछ लोगों का दायित्व होता था कि नियोग द्वारा उस स्त्री को गर्भ धारण कराए किन्तु ऐसा साक्ष्य समकालीन समाज में नहीं मिलते हैं, इसके विपरीत जब पत्नी गर्भ धारण करने में असमर्थ हो तो पति को दूसरी स्त्री रखने का अधिकार प्राप्त था।[19] बहुपत्नी प्रथा के नगण्य उदाहरण हमें कलचुरी समाज में मिलते हैं। समाज में स्त्री को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। राजा जाज्जलदेव प्रथम ने मात्र अपनी मां की इच्छा पूरी करने के लिए राजा सोमेश्वर, उसके मंत्री एवं उसकी रानियों को गिरफ्तार करके छोड़ दिया था।[20]

शिवरीनारायण से प्राप्त शिलालेख में सती प्रथा का सजीव वर्णन उत्कीर्ण है कि कैसे राजा उल्हणदेव की तीनों पत्नियां पति के चिता में सदेह प्रवेश की थी। छत्तीसगढ़ के विभिन्न गॉवों में सती चौरा का मिलना सती प्रथा को प्रमाणित करता है।[21]

कलचुरी काल की कतिपय मूर्तियों में नायिका, सुरसुंदरी अप्सरा, शालभंजिका, परिचारिका, चवरधारिणी का उल्लेख मिलता है, जो समाज में उसके स्थान तय करते है।[22]

कलचुरी कालीन ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति सामाजिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं से प्रभावित थी। ग्रामीण संस्कृति में परम्परा रूपी संस्कार का बोझ अधिक रहा। यहां नारी समाज की अपनी मर्यादा है। किसी भी बस्ती में भद्र, वयोवृद्ध पुरूष को देखकर नारियां कछोटा को शिथिल कर आदर प्रदर्शित करती हैं। कलचुरी काल में ग्रामीण महिलायें केवल लुगरा (साड़ी) ही पहनती थी, साथ ही ग्रामीण स्त्रियां चांदी या गिलट के आभूषण ज्यादा पहनती थी। ग्रामीण क्षेत्र में सोने के आभूषण कम दिखाई पड़ते है। ऐसा संभवतः इनकी आर्थिक विपन्नता के कारण रहा होगा।[23]

छत्तीसगढ़ के ग्रामीण क्षेत्र में विवाह मात्र केवल नर-नारियों का ही नहीं अपितु जानवर, पेड़, कुंये, तालाबों के भी विवाह होते थे। छत्तीसगढ़ में कलचुरी काल में ग्रामीण क्षेत्र में छुटका विवाह, कइनदान ,देड़हा विवाह, चढ़ विवाह चूड़ी विवाह, गवन विवाह आदि प्रचलित थे। स्त्री का अविवाहित रहना निंदनीय समझा जाता था।[24] प्राय: विवाह दूसरे गोत्र में एवं सजातीय होते थे। प्राय: एक विवाह की मान्यता थी किन्तु बहुविवाह के प्रमाण भी ग्रामीण अंचल में विद्यमान थे। कल्चुरी काल में छत्तीसगढ़ में बाल विवाह प्रचलित थी,जो यदा-कदा आज भी देखने को मिलता हैं। विधवा विवाह प्रचलित थी। कन्या जन्म शुभ माना जाता था।[25]

कलचुरी कालीन स्त्री अपने शरीर में गोदना द्वारा श्रृंगार करती थी। ग्रामीण महिलाओं में गोदना आवश्यक था। ऐसी मान्यता थी कि मृत्यु पश्चात् यही निशानी साथ जाता हैं। गोदना नारी देह के लिए अंलकरण के रूप में सौन्दर्य प्रसाधन तो थी ही, यह जादू-टोना के रूप में अदृश्य विनाशी शक्तियों से जीवन का रक्षक भी माना जाता रहा। ददा देथे चूरा पैरी, टूट फूट जाथे। दाई देथे कारी गोदना, माटी संग मिल जाथे। इसका महत्व उपरोक्त कथन से स्पष्ट होता है।[26]

छत्तीसगढ़ के ग्रामीण जीवन में परम्परा, रीतिरिवाज और धर्म का सम्मिश्रण है। ग्रामीण महिलाओं में सरलता और उदारता के साथ यहां अंध विश्वासों का ताना बाना भी रहा हैं। कृषक परिवारों का जीवन रूढ़िवादी होने के साथ धर्म भीरू भी होता हैं। इसलिए देवताओं को प्रसन्न करने के लिए नारियां व्रत एवं पूजा करती है।[27]

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि कलचुरी कालीन समाज में स्त्रियों का स्थान सम्मानजनक रहा हैं ,जहां राजकुल में नारियां अपने पति के साथ मिलकर राजकार्य में हाथ बटांती थी, सभी धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण होती थी, कलचुरी कालीन अभिलेखों में रानियों के उल्लेख स्त्रियों के सम्मानीय स्थिति के सूचक है। कलचुरी कालीन नारियों के द्वारा तालाब कुंए खुदवाने एवं मंदिरों के निर्माण करवाने के साक्ष्य मिलते है। वहीं ग्रामीण समाज में भी नारी का स्थान श्रेष्ठ रहा। परिवार के भरण-पोषण के साथ ही साथ धार्मिक क्षेत्र में उनका योगदान सराहनीय रहा। कलचुरी काल में विवाह एक पवित्र कार्य माना जाता था। सजातीय विवाह निश्चय ही समाज में वर्ण व्यवस्था को स्पष्ट करता है। प्राय: एक विवाह से नारी की स्थिति सुखद रही। कलचुरी कालीन अभिलेखों एवं सती स्तम्भों से प्रमाणित होता है कि तत्कालीन समाज में सती प्रथा जैसे अमानवीय प्रथा प्रचलित थी, जो नारी जीवन के लिए अभिशाप थी, किन्तु ये केवल उच्च वर्णों तक सीमित रहा। ग्रामीण जीवन में विधवा विवाह प्रचलित होने से सती प्रथा का

दंश नारियों को सहना नहीं पड़ा। परम्परा और रीति रिवाज ने छत्तीसगढ़ की संस्कृति को सदैव जीवन्त बनाए रखा एवं संस्कृति का हस्तांतरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक होता रहा, जिसका सरल जीवन यहां के नारियों में देखने को मिलता हैं। अशिक्षा एवं रूढ़िवादिता ने तत्कालीन नारी समाज के जनजीवन को ठहराव की स्थिति में ला दिया, जिससे वे जादू-टोना में विश्वास करने लगी थी। नारी सौन्दर्य की उपासना एवं श्रृंगार प्रियता ने दुःख में सुख का अनुभव कराते हुए सामाजिक व्यवस्था को निरन्तरता बनाए रखी।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1 तिवारी डॉ. पुष्पा, (2007) कल्चुरी युगीन समाज एवं सस्कृति लोकहित प्रकाशन दिल्ली-93 प्रथम संस्करण, पृ. सं. 96
2 जैन बालचंद्र, उत्कीर्ण लेख मंहत घासीदास स्मारक संग्रहालय रायपुर। पृ. 20
3 रायबहादुर हीरालाल, (1939) मध्यप्रदेश का इतिहास वाराणसी पृ. 50
4 पांडेय ऋषिराज, (2008) छत्तीसगढ़ दक्षिण कोसल के कल्चुरी छत्तीसगढ़ हिंदी ग्रंथ अकादमी रायपुर, पृ. सम्पादकीय
5 तिवारी डॉ. पुष्पा, (2007) कल्चुरी युगीन समाज एवं सस्कृति लोकहित प्रकाशन दिल्ली-93 प्रथम संस्करण, पृ. सं. 96
6 जैन बालचंद्र, उत्कीर्ण लेख मंहत घासीदास स्मारक संग्रहालय रायपुर। पृ. स. 20
7 रायपुर गजेटियर पृ. 34
8 बिलासपुर गजेटियर पृ. 43
9 केयर भूषण, छत्तीसगढ़ के नारी रत्न। पृ. 16
10 पांडेय सुधाकर, दक्षिण कोसल की कल्चुरीकालीन धार्मिक व्यवस्था। पृ. 4
11 तिवारी डॉ. पुष्पा, (2007) कल्चुरी युगीन समाज एवं सस्कृति लोकहित प्रकाशन दिल्ली-93 प्रथम संस्करण, पृ. सं. 97
12 भारद्वाज आंनद, छत्तीसगढ़ के कल्चुरीकालीन अभिलेख सांस्कृतिक अध्ययन पृ. 15
13 गाथा सप्तशती भाग 1 पृ. 56
14 गुप्त प्यारेलाल, (1973) प्राचीन छत्तीसगढ़ सन् पृ 149
15 प्रसाद जीतमित्र, (2007) दक्षिण कोशल का सांस्कृतिक इतिहास छत्तीसगढ़ हिंदी ग्रंथ अकादमी रायपुर, पृ. 67
16 तिवारी डॉ. पुष्पा, (2007) कल्चुरी युगीन समाज एवं सस्कृति लोकहित प्रकाशन दिल्ली-93 प्रथम संस्करण, पृ. सं. 98
17 मिरासी वी. वी. कल्चुरी नरेश और उनका काल म. प्र. षासन साहित्य परिषद भोपाल पृ. 35
18 मिश्र रमेन्द्रनाथ, छत्तीसगढ़ का प्रशासनिक इतिहास पुस्तक प्रतिष्ठान रायपुर पृ. 18
19 यदु हेमू, दक्षिण कोसल की कला पृ. 41
20 झा मंगलानंद, कल्चुरीकालीन मंदिर स्थापत्य पृ. 34
21 झा लक्ष्मीधर, छत्तीसगढ़ के अभिलेखों का अध्ययन पृ. 11
22 करमोकर कमल, छत्तीसगढ़ की ग्रामीण महिलाएँ पृ. 84
23 केयर भूषण, छत्तीसगढ़ के नारी रत्न पृ. 9

24 तरार शकुन्तला, बेटियॉ छत्तीसगढ़ की। पृ. 7
25 बेहार रामकुमार, छत्तीसगढ़ संस्कृति एवं विभूतियां। पृ. 17
26 तिवारी डॉ. पुष्पा, कल्चुरी युगीन समाज एवं सस्कृति लोकहित प्रकाशन दिल्ली-93 प्रथम संस्करण 2007 पृ. सं. 99
27 करमोकर कमल, छत्तीसगढ़ की ग्रामीण महिलाएँ पृ. 87

विद्रोही-भक्त कवयित्री मीरा के काव्य में प्रेम, संघर्ष और स्त्रीत्व

* अर्चना वर्मा
** डॉ. रानी अग्रवाल

हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत मध्यकाल में भक्ति आन्दोलन एक महान घटना हुई जिसका प्रादुर्भाव अनेक परिस्थितियों का मिला-जुला रूप है जिसका उदय दक्षिण भारत के आलवार संतों की वाणी से उत्तर भारत की ओर उन्मुख हुआ। यह तथ्य आज भी मान्य है कि भक्ति भावना का उदय मुसलमानों के आक्रमण तथा हिन्दू मंदिरों को ध्वस्त किए जाने की स्थिति ने भी प्रसारित किया था। समाज ने भक्ति भावना की इस धारा को अप्रत्याशित रूप से स्वीकार कर उसका स्वागत किया। तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक धरोहरों पर आने वाले संकट को देश के सच्चे हित चिन्तकों ने बाह्य और अन्तर्विरोधों के कारण उपजें संकटों को पहचाना। धर्म के क्षेत्र में वाद-सम्प्रदाय, मत-मतान्तर उठ खड़े हुए जिससे जनता विभ्रमित हो गयी और जनता का शोषण होने लगा। कहने का तात्पर्य है कि भक्ति का उदय किसी एक कारण से नहीं हुआ है बल्कि देश में अन्तर्निहित शक्तियों के घात-प्रतिघात के कारण हुआ है। भक्ति काव्य में विद्रोही कवियों की महान प्रतिभाओं के प्रखर प्रकाश ने योगदान दिया है। ऐसे समय में भक्ति काल की विद्रोही-भक्त कवयित्री मीराबाई का स्वर सुनाई देता है, जिसमें उनका सर्वसुलभ एवं हृदय स्पर्शी स्वर मुखरित हुआ है।

प्रेम माधुरी में रमी मीरा का काव्य भावावेग, भावनाओं की मार्मिक अभिव्यक्ति है। मीराबाई ने विभिन्न पदों एवं गीतों की रचना की। जिसमें कुछ पूर्ण तथा कुछ अपूर्ण रचनाएं भी हैं। उनकी रचनाओं की संख्या ग्यारह हैं- 'गीत-गोबिन्द का टीका', 'नरसी जी का मायरा', 'राग सोरठा का पद,' 'मलार राग', 'रागगोविन्द', 'सत्य भानुरुसण','मीरा के गरबी', 'रूक्मणीमंगल', 'नरसी मेहता की हुंडी' और 'स्फुट पद'आदि। प्रेम की साक्षात् मूर्ति मीराबाई जी ने अपने

==========

* शोध छात्रा, जुहारी देवी गर्ल्स पी.जी. कॉलेज, कानपुर (उ.प्र.)
** ऐसोसिएट प्रोफेसर, जुहारी देवी गर्ल्स, पी.जी. कॉलेज, कानपुर (उ.प्र.)

काव्य में प्रेम का माधुर्य एवं प्रियतम वियोग का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। कृष्ण प्रेम में मतवाली मीराबाई के विरह की कोई सीमा नहीं है हृदय की आकुलता को मीरा ने इस प्रकार व्यक्त किया हैः-

विरहनी बावरी सी भई।
ऊँची चढ़ि अपने भवन में टेरत हाथ दई।
ले अंचरा मुख असुवन पोंछत उधरे गवत सही।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर बिछुरत कछु न कही।"[1]

मीराबाई की भक्ति माधुर्य भाव की है। उनके आराध्य हैं ब्रजवासी सगुण-साकार लीला पुरुशोत्तम भगवान श्रीकृष्ण। वह अपने आपको पूर्व जन्म की गोपिका मानती है और कहती हैं कि वह गिरिधर गोपाल को भा गई हैं-

"राणाजी! हूँ तो गिरिधर ने मन भावी।
पूर्व जनमनी हूँ ब्रजतणी गोपी चूका थतां अहीं आवी रे .....।।"[2]

मीराबाई लौकिक बन्धनों से मुक्त होकर स्वछन्द रूप से काव्य रचना करती थीं। वह बाल्यकाल से ही भगवान श्रीकृष्ण के प्रेम में लीन रहती थीं और कृष्ण को ही अपना सर्वस्व एवं अपना पति मानती थीं और कहती हैं कि उनके सिवा इस संसार में मेरा कोई नहीं हैं-

"मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो और न कोई
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई"[3]

मीराबाई कृष्ण प्रेम में सराबोर हैं। उन्होंने प्रेम बेलि बोई है जिसे वह आँसू रूपी जल से सींचती हैं। उनके लिए जप, तप, तीर्थ सब व्यर्थ है। जो उन्होनें बेलि बोई है उसमें आनंद रूपी फल लगने लगें हैं। उनके लिए कृष्ण प्रेम ही सब कुछ है वे कहती हैं कि-

"भजमन चरण कॅवल अविनासी।
कहा भयौ तीरथ व्रत कीन्हे, कहा लिए करवट कासी।"[4]

वह तो सांवरे के रंग में रंगी हुई हैं उसी के प्रेम में पगी हुई हैं वह कहती हैं कि-

"मैं तो साँवरे के रंग राँची
साजि सिंगार बांधि पग घुँघरू लोक लाज तजि नाची।"[5]

मीराबाई कहती हैं कि मेरे प्रभु सांवली सूरति वाले गिरिधर गोपाल जिनकी आँखें विशाल हैं वह मेरे प्रिय मेरी आंखों में बस जाये। मीरा कहती है कि-

"बसो मेरे नैनन में नंदलाल
मोहनि मूरति साँवरि सूरति नैणां बने विसाल।"
अधर सुधारस मुरली राजति उर बैंजंती माल।"[6]

सूरदास के पश्चात् कृष्ण काव्य परम्परा में मीरा का योगदान महत्वपूर्ण है

मीरा के पदों में पार्थिव शरीर से उद्‌भूत प्रेम तत्व दिखाई देता है। उनका प्रेम अलौकिक है। मीरा को अपने प्रिय भगवान श्रीकृष्ण पर अगाध विश्वास एवं श्रद्धा है। उनके प्रेम में परमतत्व का समन्वय हो गया है। कह कहती हैं कि-

"हेरी मैं तो प्रेम दीवाणी, मेरा दरद न जाणे कोई।
सूली ऊपर सेज हमाणी, किस विधि सोणा होई।"[7]

मीराबाई का सम्पूर्ण जीवन संघर्षमय रहा है। उनके जीवन में अनेक उतार चढ़ाव, दुख-सुख आते रहे हैं। उनके दुख और संघर्ष का कारण उनका भगवान श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम एवं भक्ति है। उनके प्रियतम इस भौतिक संसार के प्राणी न होकर ईश्वर स्वरूप भगवान श्रीकृष्ण है। उनकी प्रेम और भक्ति में मीराबाई को अपनी सुधबुध एवं लोक-मर्यादा का भी किंचित ध्यान न रहा। उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि कुल खानदान लोक लाज की मर्यादा को उन्होंने पानी में बहा दिया है-

"लोक लाज कुल काण जगत की , दई बहाइ जस पानी।"[8]

मीराबाई के जीवन में कष्टों एवं संघर्षों का प्रारम्भ उनकी ससुराल से ही प्रारम्भ हो जाता है। उनका विवाह चित्तौड़ के रांणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र भोजराज से होता है।

विवाह के सात वर्ष पश्चात् भोजराज की मृत्यु होने के कारण मीराबाई वैवाहिक सुख भोग न सकीं। उनके अन्तर्मन में ईश्वर के प्रति आस्था और अगाध विश्वास हो गया था। मीरा के प्रेम मार्ग में लोकोपवाद बाधक नहीं था। उनका मानना है कि पीड़ा, कष्ट सब कुछ ईश्वर द्वारा ही प्राप्त है। इसलिए वह प्रिय है। साधु संगति में बैठकर उन्हें लोक मर्यादा का भी ध्यान नहीं रहा। वह कहती हैं कि-

साधां ढिग बैठ-बैठ, लोक लाज खूयां।
भगत देख राजी हुयां, जगत देखा रूयां।
असुवाँ जल सींच-सींच प्रेम बेल बूयां
X X X X X X X X
मीरा री लगण लग्यां होणा हो जो हूयां।"[9]

पति के गोलोक वासी होने के पश्चात् मीराबाई मंदिरों में भगवान श्री कृष्ण की प्रतिमा के समक्ष जाकर गीत गाया करती थीं। यह व्यवहार राजघराने को रास नहीं आया। वह उसे राजघराने अथवा राजकुल विरूद्ध लगा जिससे कि मीराबाई को जान से मारने का प्रयत्न किया। परन्तु मीराबाई पर ईश्वर की कृपा होने के कारण उनकी मृत्यु नहीं हुई। मीरा अपने घर वालों से परेशान होकर जगह-जगह मंदिरों में जाकर भगवान श्रीकृष्ण के भजन एवं कीर्तन सुनाया करती थी। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में लिखा है कि "ये प्रायः मंदिर में जाकर उपस्थित भक्तों के बीच श्रीकृष्ण भगवान की मूर्ति के सामने आनंद मग्न

होकर नाचती गाती थी। कहतें हैं कि इनके इस राजकुल विरूद्ध आचरण से इनके स्वजन लोक निंदा के भय से रुष्ट रहा करते थे। यहाँ तक कहा जाता है कि उन्हें कई बार विष देने का प्रयत्न किया गया, पर भगवत् कृपा से विष का कोई प्रभाव इन पर न हुआ। घरवालों के व्यवहार से खिन्न होकर ये द्वारका और वृन्दावन के मंदिरों में घूम-घूम कर भजन सुनाया करती थी। जहाँ जाती वहाँ उनका देवियों का-सा सम्मान होता। ऐसा प्रसिद्ध है कि घरवालों से तंग आकर इन्होंनें गोस्वामी तुलसीदास को यह पद लिखकर भेजा था-

स्वस्ति श्री तुलसी कुल भूषन दूषन हरन गोसाई।
बारहि बार प्रनाम करहुँ, अब हरहुँ सोक समुदाई।
घर के स्वजन हमारे जेते सबन्ह उपाधि बढ़ाई।।
साधु संग अरूभजन करत मोंहि देत कलेस महाई।
हमको कहा उचित करीबो है, सो लिखिए समझाई।।''[10]

मीराबाई अपने आपको चिर सुहागिनी मानती हैं। अपने पति भोज राज की मृत्यु के पश्चात् तत्कालीन परिस्थितियों एवं प्रथा के अनुसार सती नहीं हुई थीं जो मीरा के संघर्ष का प्रमुख कारण था। वह कहतीं हैं कि-

"जग सुहाग मिथ्यारी सजनी हांवा हो मिट जासी
वरन् कट्यां हरि अविनाशी म्हारों काल-व्याल न खासी।।"[11]

इस पर समाज ने आक्रोश व्यक्त किया तो मीराबाई गिरिधार गोपाल भगवान श्री कृष्ण को अपना पति मान लिया और भक्ति का मार्ग चुन लिया है वो लिखती हैं कि-

"गिरधर गास्यां सती न होस्यां।
मन मोहयो धन नामी।।"[12]

"काजल टीकी हम सब त्यागा, त्याग्यों है बांधन जूड़ो।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, बर पायों छै पूरों।"[13]

मीराबाई समाज के बन्धन में नहीं बँधीं। उन्होंने समाज से संघर्ष करते हुए काव्य रचना की है। मीरा के सम्बन्ध में श्री निरंजन भगत का कथन है-"समाज, राज्य और धर्म के बंधन में मीरा बद्ध नहीं थी, स्थल और काल की सीमा में मीरा सीमित न थी मीरा इस पृथ्वी पर निर्वासिनी थी। मीरा परमेश्वर नामक प्रदेश की नागरिक थी। परमेश्वर मीरा का स्वदेश था। स्वतन्त्रता, समानता, बंधुता के लिए रूढ़ि भंग, प्रणालिका, भंग, क्रांति द्वारा उन्होंने कुल नाशी का विरूद्ध प्राप्त किया था वे बदनामी और मखौल का पात्र बनी थी इस राजपूत स्त्री ने आजीवन हर क्षण का जौहर रचा था। इस मेड़तणी ने जीवन भर प्रत्येक पल जल-जलकर सतीत्व प्रकट किया था। परमेश्वर मीरा का इल्म था, परमेश्वर मीरा का शौर्य या

परमेश्वर मीरा की मिरात (पूँजी), बड़ी पूंजी थी। परमेश्वर मीरा का सुकून था, सबसे बड़ी आस्वस्ति थी।"[14]

हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में मीराबाई ने पदार्पण किया। मीराबाई के सन्दर्भ में मध्य युगीन कवयित्री को पढ़ना कठिन काम है। मीराबाई एक स्त्री है और उस काल में स्त्रियों की स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी। उस समय स्त्री को एक देवी की संज्ञा देकर उसे कैद में रखा जाता था। लेकिन मीराबाई एक स्त्री होकर अपने आप को कृष्ण भक्ति से जोड़ लिया। इस पर समाज ने विरोध किया। मीराबाई ने इस विरोध का सामना किया और न जाने उन्हें कितने दुखों को झेलना पड़ा। साधु संगति को लेकर मीराबाई की दुर्गति हुई। परन्तु मीरा के स्त्रीत्व और आत्म सम्मान पर आँच नहीं आयी। मैनेजर पाण्डेय लिखते है कि "मीरा के जीवन में अनेक जटिलताएं विद्यमान थी। राजकुल की बेटी एवं बहू होने की वजह से उन्हें सामन्ती समाज द्वारा दी गई अमानवीय पीड़ा भी सहनी पड़ी। उनकी कविता में एक ओर सामन्ती समाज में स्त्री की पराधीनता और यातना का बोध है तो दूसरी ओर उस व्यवस्था और स्वतंत्रता के लिए दिवानगी की हद तक संघर्ष भी है। उस युग में एक स्त्री के लिए ऐसा संघर्ष अत्यन्त कठिन था। लेकिन मीरा ने अपने स्वत्व की रक्षा के लिए कठिन संघर्ष किया।"[15]

पति की मृत्यु होने के पश्चात् एक सामान्य विधवा नारी की तरह मीराबाई अपना जीवन नहीं व्यतीत कर सकती थीं। उनका जीवन संघर्ष वैधव्य से शुरू हो जाता है वह साधु संगति में बैठती और अलौकिक प्रियतम से मिलने के लिए आकुल रहती थीं। परन्तु राणा को मीरा का यह व्यवहार रास नहीं आया। उन्होंनें लोक लाज के भय से मीरा को बहुत ही प्रताड़ित किया था। इस बात को मीराबाई स्वयं स्वीकारती है -

"सांप पिटारा रांणा भेज्यो, मीरा हाथ दियो जाय।
न्हाय धोय कर देखण लागी, सालिग राम गई पाय।
जहर का प्याला राणा भेज्या, अमृत दीन बनाय।
न्हाय-धोय कर पीवण लागी, हो अमृत अंचाय।
सूल सेज राणा ने भेजी, दीज्यों मीरा सुलाय।
सांझ भई मीरा सोवण लागी, मानोफूल बिछाय।"[16]

मध्यकाल में स्त्रियों को अपने विचार प्रस्तुत करने की स्वतन्त्रता नहीं थी। स्त्रियां स्वतन्त्र रूप से लेखन नहीं कर सकतीं थीं। मीराबाई ने समाज से विद्रोह करके स्त्रियों को एक नई दिशा प्रदान की। मीराबाई राजमहल को छोड़कर स्वतंत्र रूप से जीवन यापन किया। जिससे समाज ने मीरा की भर्त्सना की, अनेक लांछन लगाएं। तब मीरा ने स्पष्ट रूप से घोषणा की, कि इस संसार में गिरिधर गोपाल

के अलावा मेरा कोई भाई बन्धु नहीं है-

"महारां री गिरधर गोपाल दूसराणां कूयां
दूसराणां कूयां साधां सकल लोक जूयां।
भाया छाड्यां, बन्धा छाड्या ,छाड्यां संगा सूयां।"[17]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मीराबाई ने अपनी अदम्य भक्ति एवं प्रेम के सहारे अपने स्त्रीत्व को बचाये रखने के लिए समाज से संघर्ष एवं विरोध किया।

मध्यवर्गीय नारी की स्थिति को बदलने के लिए भी मीराबाई ने जो कदम उठाया वह प्रशंसनीय है। समाज से संघर्ष करते हुए मीरा को जो यातनाएं सुननी पड़ी उनसे वह घबराई नहीं बल्कि उनका डटकर सामना किया। कृष्ण जी के प्रति प्रेम और भक्ति मीरा के अन्तर्मन को ऊर्जस्वित करती रही और मीरा अपने अनन्य ईष्वर गिरिधर गोपाल की भक्ति एवं प्रेम में तल्लीनता से मग्न रही। हालात् और परिस्थितियां उनका कुछ न बिगाड़ सकीं। यहाँ तक कि उन पर विष का भी कोई प्रभाव न पड़ा।

मीराबाई ने भक्ति और प्रेम के लिए समाज और परिवार से जो संघर्ष किया वह उनकी सहज आत्मानुभूति के गीत और उनका काव्य बन गये।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. डॉ0 नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ-221
2. भूपेन्द्र त्रिवेदी, मीरानापदो, पृ0-6
3. मीरा पदावली
4. मीरा पदावली
5. मीरा पदावली
6. मीरा पदावली
7. मीरा बृहत्पदावली- पृष्ठ- 54
8. मीरा पदवाली : परशुराम चतुर्वेदी, पृ0-7
9. वही, पद संख्या-18
10. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ0-145
11. डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 हरदयाल- हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ0-221
12. सुदर्शन चोपड़ा, भक्त कवियत्री मीरा, पृ0-112
13. विश्वनाथ त्रिपाठी, मीरा का काव्य, पृ0-104
14. श्री निरंजन भगत, मीरा पृष्ठ-49
15. मैनेजर पाण्डेय, मीरा : एक पुनर्मूल्यांकन, पृ0-117
16. सुदर्शन चोपड़ा भक्त कवियत्री मीरा, पृ0-63
17. विश्वनाथ त्रिपाठी, मीरा का काव्य, पृ0-101

ध्रुवस्वामिनी का आधुनिक संदर्भ एवं नारी मुक्ति

* डॉ. गुड्डी बिष्ट, पंवार

छायावाद के आधार स्तम्भ जयशंकर प्रसाद की काव्य के क्षेत्र में जितनी प्रतिभा है। गद्य को भी शिखर तक पहुंचाने का उतना ही महान कार्य उन्होंने किया है। जब हम जयशंकर प्रसाद के नाटकों की बात करते हैं तो भारतवर्ष का गौरवशाली इतिहास देखने-पढ़ने लगते हैं। प्रसाद एक कालजयी लेखक हैं और जब तक समाज जीवित रहेगा तब तक प्रसाद प्रासंगिक रहेंगे। कालजयी साहित्यकार का लेखन सदियाँ परिवर्तित होनें पर भी यथावत रहता है। जयशंकर प्रसाद जी ने अपने नाटकों में इतिहास के पन्नों को उठाकर आधुनिक समस्याओं का समाधान ढूँढा है। अधुनातन समाज की जटिल समस्याओं का समाधान प्रसाद के नाटकों की विशेषता रही है। प्रसाद जी व्यापक अनुभूतियों के ऐसे कलाकार हैं जिनकी रचनाएं भारतीय सांस्कृतिक वैभव को लेते हुए भी विश्वमानव को ही केन्द्र में रखती है और प्रसाद के संस्कारी व्यक्तित्व को एक गूढ़ तथा उदात्त जीवन दर्शन देती हैं। उतार-चढ़ाव से भरे संघर्षपूर्ण जीवन में विचलित होने के अवसर अनेक आते हैं, किन्तु जीवनदृष्टि मनुष्य को स्वस्थ एवं संकल्पमय बनाती है। आत्म के प्रति यथासम्भव निर्लिप्त रचना तथा व्यष्टि को समष्टि में समाहित कर सकना ही व्यक्ति का उद्देश्य होना चाहिए। जयशंकर प्रसाद मात्र एक ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं में नारी जाति को सरआँखों पर रखा है। प्रसाद का प्रसिद्ध महाकाव्य 'कामायनी' है जिसकी विश्वविख्यात पंक्तियाँ विश्वसाहित्य की धरोहर हैं। नारी जाति को लेकर विश्वसाहित्य की सर्वोत्कृष्ट यह पंक्तियाँ नारी के सम्मान एवं महत्ता की प्रतिनिधि हैं-

नारी! तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास-रजत-नग पग तल में
पीयूष स्रोत सी बहा करो
जीवन के सुन्दर समत में।[1]

अर्थात् नारी समाज की वह धुरी है जिसके बिना समाज एवं मानव जीवन

==========

* वरिष्ठ असिस्टेन्ट प्रोफेसर, हे.न.ब.ग.के. विश्वविद्यालय श्रीनगर, गढ़वाल

की कल्पना करना सम्भव नहीं है। नारी बिना जीवन नहीं और सरस और मधुरता भरा जीवन नारी के बिना असम्भव है।

आधुनिकता एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है यह एक विचारधारा नहीं वरन् जीवन प्रणाली है जिसने सम्पूर्ण मानव जाति को समकालीन समय से जोड़ा है उसे मानवीय मूल्य दिए हैं और उसकी सामाजिक तथा सांस्कृतिक समग्रता को उद्घृत किया है। आधुनिकता पर यह भी आरोप है कि वह इतिहास से अलग है, परम्परा से अलग है, अतीत से अलग है, पर यह तथ्य सही नहीं है उसका विच्छेद साहित्य में हो सकता है इतिहास से नहीं, वह परम्परा का विकास है, उससे अलग नहीं है। आधुनिकता के दो पहलू हैं। दर्शन और इतिहास अर्थात् दर्शन का इतिहास और इतिहास का दर्शन।

ध्रुवस्वामिनी नाटक 1933 में प्रसाद जी द्वारा लिखा गया। 1933 में प्रसाद जी की नारी इतनी सबल बन चुकी थी कि अपने स्वत्व की रक्षा करना वह स्वयं जानती थी। अपने अस्तित्व को संकट में पड़ा देखकर नारी का आन्तरिक स्वाभिमान एवं आत्मा की आवाज निकलती है। ध्रुवस्वामिनी अपने मान-सम्मान एवं मर्यादा की रक्षा करना स्वयं भी जानती है। प्रसाद की नारी श्रद्धा भाव से पूरित होने पर भी वीरता की प्रतिमूर्ति है। नारी सुलभ स्वभाव के कारण वह रामगुप्त से अपनी रक्षा करने का भी वचन मांगती है, किन्तु रामगुप्त उसकी रक्षा करने में स्वयं को असफल महसूस करता है। रामगुप्त एक कायर पुरूष है वह स्वयं ही युद्ध के नाम से कांपता है। ध्रुवस्वामिनी रामगुप्त से कहती है- ''मेरे पिता ने उपहार स्वरूप कन्यादान किया था, किन्तु गुप्त साम्राज्य क्या अपनी पत्नी शत्रु को उपहार में देंगे (घुटने के बल बैठकर) देखिये, मेरी ओर देखिए। मेरा स्त्रीत्व क्या इतने का भी अधिकारी नहीं कि अपने को स्वामी समझने वाला पुरूष उसके लिए प्राणों का पण लगा सके।''[2]

रामगुप्त क्योंकि कायर पुरूष था। नारी का स्वाभिमान एवं उसका स्वत्व वह नहीं समझता है वह नारी को केवल विलास की वस्तु मानता है और ध्रुवस्वामिनी से कहता है- ''तुम सुन्दर हो, ओह कितनी सुन्दर! किन्तु सोने की कटार पर मुग्ध होकर उसे कोई अपने हृदय में डुबा नहीं सकता। तुम्हारी सुन्दरता-तुम्हारा नारीत्व- अमूल्य हो सकता है। फिर भी स्वयं अपने लिए मैं कितना आवश्यक हूँ, यह कदाचित् तुम नहीं जानती हो।''[3]

नारी मर्यादा है, नारी सम्मान है, नारी श्रद्धा है, नारी प्रेम है, नारी वात्सल्य है, नारी ममता है इन सभी गुणों के साथ-साथ वह ज्वाला भी है, अग्नि भी है, चण्डी भी है और दुर्गा भी। इसका परिचय ध्रुवस्वामिनी उस समय देती है जब रामगुप्त उसकी रक्षा करने से इनकार करता है। अपने अस्तित्व को ललकार कर

ध्रुवस्वामिनी का यह कथन निश्चिय ही नारी स्वाभिमान एवं नारी स्वत्व को दृष्टिगोचर करता है। ''(खड़ी होकर रोष से) निर्लज्ज! मद्यप! क्लीव! ओह तो मेरा कोई रक्षक नहीं? (ठहरकर) नहीं, अपनी रक्षा मैं स्वयं करूँगी। मैं उपहार में देने की वस्तु शीतलमणि नहीं हूँ, मुझमें रक्त की तरल लालिमा है। मेरा हृदय उष्ण है और उसमें आत्मसम्मान की ज्योति है उसकी रक्षा मैं ही करूंगी (रसना से कृपाणी निकाल लेती है।)''[4]

ध्रुवस्वामिनी नाटक में प्रसाद जी यह भी कहना नही भूले कि नारी का चरित्र एवं उसका स्वावलम्बन उसके लिए विशेष महत्व रखता है। जब कोई नारी समाज के बन्धनों की मर्यादा में बंधकर किसी पुरूष को अपना पति स्वीकार कर लेती है तो उसके भीतर कहीं न कहीं उस पुरूष के प्रति रक्षक भाव भी पैदा हो जाता है। जयशंकर प्रसाद ने एक ऐसे देश में जन्म लिया जहां की नारियां पतिव्रता धर्म के लिए विश्वविख्यात हैं। इस गौरवशाली परम्परा को प्रसाद जी भी आगे बढ़ाना चाहते हैं। 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में वह ध्रुवस्वामिनी के माध्यम से यह भी कहलवाना चाहते हैं कि मैं किसी परपुरूष या राजा की भी संगिनी नहीं बनना चाहती हूँ। रामगुप्त क्योंकि कायर पुरूष है। ध्रुवस्वामिनी उसे अपना स्वामी नहीं मानती है किन्तु किसी अन्य पुरूष के पास जाने से अच्छा वह रामगुप्त को अपना समर्पण करना सर्वोपरि मानती है, जो कि भारतीय मर्यादा एवं परम्परा के अनुकूल ही है। विषम परिस्थितियों में घिरकर ही वह रामगुप्त को अपना सब कुछ समपर्ण करने को तैयार हो जाती है। इसी संदर्भ में वह कहती है- ''मेरे और अपने गौरव की रक्षा करो। राजा आज मैं शरण की प्रार्थिनी हूँ। मैं स्वीकार करती हूँ कि आज तक मैं तुम्हारे विलास की सहचरी नहीं हुई, किन्तु वह मेरा अहंकार था जो अब चूर्ण हो गया है। मैं तुम्हारी होकर रहूँगी। राज्य और सम्पत्ति रहने पर राजा को पुरूष को बहुत सी रानियाँ और स्त्री मिलती हैं किन्तु व्यक्ति का मान नष्ट होने पर फिर नहीं मिलता।''[5] भारतवर्ष की गौरवशाली परम्परा को प्रसाद जी ने 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक के माध्यम से दिखाया है। उनकी नारी मान-मर्यादा की रक्षा के लिए स्वयं का समर्पण भी करती है। किन्तु अपना सम्मान खोते हुए देख वह माँ चण्डी और वीरांगना लक्ष्मीबाई बनना भी नहीं भूलती। अपने तेजस्वी और स्वाभिमानी रूप को भी प्रसाद जी ने ध्रुवस्वामिनी में बखूबी दिखाया है। जो कि आधुनिकता का भी प्रतीक है क्योंकि समसामयिक परिवेश में भी नारियाँ स्वयं को सबल ही महसूस करती हैं। वर्तमान संदर्भ में अगर हम बात करें तो प्रत्येक क्षेत्र में पुरूष के साथ चलने वाली नारी सर्वप्रथम अपना आत्मसम्मान कायम रखती है। नारी का आत्मसम्मान ही वह सबसे बडा पहलू है जो किसी भी पारिवारिक परिवेश को सुदृढ़ बनाता है। नारी सम्मान एवं मर्यादा के इस नाजुक प्रश्न को प्रसाद तत्कालीन

समय में उठा चुके हैं।

ध्रुवस्वामिनी नाटक में जयशंकर प्रसाद ने जहां एक ओर रामगुप्त जैसा कायर पुरूष दिखाया है वहीं दूसरी तरफ भारतवर्ष के वीर सपूतों को दिखाना नहीं भूले हैं चन्द्रगुप्त 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक का एक ऐसा मिथकीय पात्र है जो कि महान पराक्रमी, नारी सम्मान एवं मर्यादा के लिए अपने प्राणों का पण लगाता है। ध्रुवस्वामिनी का सम्मान और उसकी मर्यादा की रक्षा के लिए वह अपना राज्याधिकार भी छोड़ देता है और कहता है- ''यह नहीं हो सकता। महादेवी! जिस मर्यादा के लिए, जिस महत्व को स्थिर रखने के लिए मैंने राजदण्ड ग्रहण न करके अपना मिला हुआ अधिकार छोड़ दिया, उसका यह अपमान! मेरे जीवित रहते आर्य समुद्रगुप्त के स्वर्गीय गर्व को इस तरह पद-दलित न होना पड़ेगा। (ठहरकर) और भी एक बात है मेरे हृदय के अन्धकार में प्रथम किरण सी आकर जिसने अज्ञात भाव में अपना मधुर आलोक ढाल दिया था। उसको भी मैंने केवल इसीलिए भूलने का प्रयास किया कि .....''[6]

नारी सृष्टि की एक ऐसी कृति है जिसके हृदय में प्रेम पूर्णतः भरा हुआ है और वह प्रेम के साथ-साथ ममत्व की भी प्रतिमूर्ति है। यद्यपि कितने भी युग बीत जाये, कोई भी समाज आ जाये, स्त्री के बिना अकल्पनीय है, क्योंकि वह जननी है और प्रेम से पूरित है। प्रसाद जी की ध्रुवस्वामिनी में प्रेम का एक गौरवमयी रूप जिसे कि ध्रुवस्वामिनी सोचती हुई दिखाई गई है। वह चन्द्रगुप्त से प्रेम करती है किन्तु वह रामगुप्त की बन्दिनी है। चन्द्रगुप्त से वह निश्छल हृदय से प्रेम करती है वह स्वयं सोचती है कि- ''कितना अनुभूतिपूर्ण था वह एक क्षण का आलिंगन! कितने संतोष से भरा था। नियति ने अज्ञात भाव से मानों लू से तपी हुई वसुधा को क्षितिज के निर्जन में सांयकालीन शीतल आकाश से मिला दिया हो। (ठहरकर) जिस वायुविहीन प्रदेश में उखड़ी हुई सांसों पर बन्धन हो, अर्गला हो, वहां रहते यह जीवन असहाय हो गया था। तो भी मरूँगी नहीं। संसार के कुछ दिन विधाता के विधान में अपने लिए सुरक्षित करा लूंगी। कुमार! तुमने वही किया, जिससे मैं बचती रही! ओह, इस वक्षस्थल में दो हृदय हैं क्या? जब अन्तरंग 'हाँ' कहना चाहता है, तब ऊपरी मन 'ना' क्यों कहला देता है।'[7]

भारतवर्ष में ऐसा भी समय रहा है जब नदियाँ अपने पतियों के साथ सती हुई हैं। किन्तु स्वयं अपनी इच्छा से सती होना एक अलग बात है, और जबरन सती करवाना दूसरी बात। एक कुशल साहित्यकार होने के नाते प्रसाद जी ने 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में एक ऐसी ज्वलन्त समस्या को उठाया है जोकि नारी जाति की पुरजोर वकालत करती है। कालजयी साहित्यकार अपने समय से ही सदा-सदा के लिए चिर स्थापित रहता है और समाज की समस्यायें कालजयी साहित्यकार के साहित्य

में सदा ज्वलन्त ही होती हैं 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में प्रसाद जी ने मुख्य रूप से तीन समस्याओं को उठाया है जिसमें सर्वोपरि है पुनर्लग्न की समस्या जो आज भी समाज में यथावत बनी है। प्रसाद जी ने समस्या को उठाकर उसका समाधान भी शास्त्रों के माध्यम से दिया है। जब तक सृष्टि में जीवन और मृत्यु रहेगा तब तक समाज में ये समस्याएं भी मुखरित होती रहेंगी। समाज में न जाने कितने कालों से कितनी ही नारियां विधवा हुई होंगी अथवा पतियों के द्वारा प्रताड़ित कर छोड़ी गई होंगी। इसका पूर्णतया समाधान हमें ध्रुवस्वामिनी देती है, क्योंकि नाटकार जयशंकर प्रसाद संसार की नारी रूपी कड़ी को जानते हैं और जन्मजात पुरूष होने के फलस्वरूप भी नारी हृदय के सम्पूर्ण तन्तुओं को बडी बारीकी से समझते हैं जो कि उनकी लेखनी से पूर्णतः व्यक्त हो जाता है। साधारणतः हम अगर मंथन करें तो देखा जाता है कि हमारे समाज की कोई भी तरूणी अगर अपने यौवनकाल में ही वैधव्य को प्राप्त होती है या पति द्वारा छोड़ी जाती है तो उसके सम्पूर्ण जीवन में नैराश्य छा जाता है और जीवन जीना उसके लिए बहुत कठिन महसूस होता है। वर्तमान में यदि हम देखें तो नारी व्यवसाय के हर क्षेत्र में पुरूषों के ही बराबर है जिससे नारी आर्थिक रूप से स्वतंत्र है। स्वस्थ समाज एवं स्वस्थ जीवन केवल आर्थिक स्वतंत्रता का हिमायती नहीं होता, इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे पहलू भी हैं जिनकी समाज एवं व्यक्ति के जीवन में नितान्त आवश्यकता होती है जैसे पति-पत्नी का आपसी प्रेम, माता-पिता का वात्सल्य प्रेम, पारिवारिक प्रेम, सामाजिक प्रतिष्ठा आदि जो कि एक स्वस्थ समाज का निर्माण करता है और स्वस्थ समाज की परिभाषा बड़ी होती है जिसकी व्याख्या साहित्यकार ही करता है।

वर्तमान समय की ज्वलन्त समस्याओं को हम देखें तो आज भी पुरूष द्वारा नारी पर अत्याचार किया जा रहा है। 'निर्भया काण्ड' इसका ज्वलन्त उदाहरण है। नारी के प्रति जब तक मानसिकता स्वस्थ नहीं होगी तब तक अपराध होते रहेंगे और संस्कारित व आदर्श परिवार ही स्वस्थ समाज का निर्माण कर सकता है। साहित्यकार समाज का चतुर चितेरा होता है वह अपनी रचना के माध्यम से समाज को स्वस्थ एवं आदर्श संदेश देना चाहता है जैसे कि नाटककार जयशंकर प्रसाद ध्रुवस्वामिनी के माध्यम से देना चाहते हैं। रामगुप्त आज के उन खलनायकों का प्रतीक है जो नारी का सम्मान नष्ट कर उसे शत्रु के हाथों सौंपना चाहता है। नाटककार नारी का सम्मान करते हैं और उसको निरीह होता नहीं देख सकते हैं इस हेतु पुरजोर तरीके से यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं करते हैं कि किसी भी युवती का समाज में पुर्नविवाह नहीं हो सकता, अर्थात् हो सकता है। यह बात प्रसाद जी के नाटक में पुरोहित द्वारा स्पष्ट रूप से कहलवाया है- ''(हंसकर) राजनीति दास्यु! तुम शास्त्रार्थ न करो। क्लीव! श्रीकृष्ण ने अर्जुन को क्लीव किसलिए

कहा? जिसे अपनी स्त्री को दूसरे की अंकगामिनी बनाने के लिए भेजने में कुछ संकोच नहीं, वह क्लीव नहीं, तो और क्या है? मैं स्पष्ट कहता हूँ धर्मशास्त्र रामगुप्त से ध्रुवस्वामिनी के मोक्ष की आज्ञा देता है।''[8]

प्रसाद जी ने इस नाट्यकृति में शास्त्रों के पूर्ण विधान के साथ एक वृद्ध पुरोहित के माध्यम से पुर्नलग्न को वैध माना है। पुरोहित के माध्यम से वे कहते हैं कि- ''विवाह की विधि ने देवी ध्रुवस्वामिनी और रामगुप्त को एक भ्रांतिपूर्ण बन्धन में बांध दिया है। धर्म का उद्देश्य इस तरह पद-दलित नहीं किया जा सकता। माता और पिता के प्रमाण के कारण से धर्म विवाह केवल परस्पर द्वेष से नहीं टूट सकते, परन्तु यह सम्बन्ध उन प्रमाणों से भी विहीन है और भी (रामगुप्त को देखकर) यह रामगुप्त मृत और प्रव्रजित तो नहीं, पर गौरव से नष्ट, आचरण से पतित और कर्मों से राज-किल्विषी-क्लीव है। ऐसी अवस्था में रामगुप्त का ध्रुवस्वामिनी पर कोई अधिकार नहीं!''[9]

ध्रुवस्वामिनी की प्रासंगिकता इतनी महत्वपूर्ण है कि विवाह जैसे बन्धन को समाज की स्वीकारोक्ति के माध्यम से जीवन जीने की स्वतंत्रता का अहसास कराती है। साहित्यकार के साहित्य में समाज की जटिलताओं का एक भाव व अहसास दिखाई देता है। समाज का चतुर चितेरा होने के कारण वह सामाजिक बन्धनों से परे नहीं रह सकता जिस परिवेश में वह जीता है उसका ऋण चुकाना वह नहीं भूलता, यह कालजयी साहित्यकार की समाज को सबसे बड़ी देन है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'ध्रुवस्वामिनी' भी उस आधुनिक स्त्री का भी प्रतिनिधित्व करती है जिसमें अन्याय के खिलाफ खड़े होने का नैतिक साहस है। इसीलिए प्रसाद जी ने 'ध्रुवस्वामिनी' को आधुनिक नारी चेतना के रूप में स्थापित किया है। तभी तो रामगुप्त की कायरता पर क्लीव रामगुप्त को लज्जित करने का प्रयास करती हुई कहती है- ''मेरी निर्लज्जता का दायित्व क्लीव, कायर पुरूष को है।'' ध्रुवस्वामिनी का आधुनिक संदर्भ एवं नारी मुक्ति दोनों ही ज्वलन्त प्रश्न हैं। आज नारी स्वतंत्रता की तलाश में है, किन्तु वह अपने आत्मसम्मान पर भी आँच आने नहीं देती है। 1933 में प्रसाद का लिखा 'ध्रुवस्वामिनी' अपनी प्रासंगिकता पर हमेशा अडिग रहेगा क्योंकि जब तक समाज है, ध्रुवस्वामिनी की प्रासंगिकता ज्यों की त्यों बनी रहेगी।

==========

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. कामायनी- जयशंकर प्रसाद, पृ0सं0- 44।
2. ध्रुवस्वामिनी- जयशंकर प्रसाद, सुमित पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0सं0-24।
3. ध्रुवस्वामिनी- जयशंकर प्रसाद, सुमित पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0सं0-24।
4. ध्रुवस्वामिनी- जयशंकर प्रसाद, सुमित पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0सं0-25।

5. ध्रुवस्वामिनी- जयशंकर प्रसाद, सुमित पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0सं0-25।
6. ध्रुवस्वामिनी- जयशंकर प्रसाद, सुमित पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0सं0-27।
7. ध्रुवस्वामिनी- जयशंकर प्रसाद, सुमित पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0सं0-30-31।
8. ध्रुवस्वामिनी- जयशंकर प्रसाद, सुमित पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0सं0-62।
9. ध्रुवस्वामिनी- जयशंकर प्रसाद, सुमित पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ0सं0-61-62।

सम्पादक परिचय

डॉ. एस. अखिलेश एक ऐसे युवा समाज वैज्ञानिक हैं, जिन्हें भारत सरकार द्वारा उत्कृष्ट लेखन के लिये छः बार प्रतिष्ठित **''पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त एवार्ड''** तथा सन् 2006 में भारत सरकार द्वारा **''भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड''** से सम्मानित किया गया है। डॉ. शुक्ल प्रारम्भ से ही एक मेधावी अध्येता रहे हैं। जिन्होंने ''जुविनाइल डिलिनक्वेंसी'' जैसे गूढ़ विषय पर शोध कार्य पूर्ण करके अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा से डॉक्टर आफ फिलासफी की उपाधि 1994 में अर्जित की। 1997–98 में उन्हें सरदार वल्लभ भाई पटेल नेशनल पुलिस अकादमी, भारत सरकार द्वारा **''गोल्डन जुबली रिसर्च फेलोशिप''** स्वीकृत की गई थी। डॉ. अखिलेश को **''प्रो. रमाकुमार सिंह मेमोरियल गोल्ड मेडल''** (1990) से सम्मानित किया गया है। डॉ. शुक्ल की अभी तक 36 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। प्रो. अखिलेश के 300 से अधिक शोध पत्र अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय रिसर्च जरनल्स में प्रकाशित हो चुके हैं और अनेक शोध पत्र प्रकाशनाधीन हैं। डॉ. अखिलेश इस समय शासकीय टी. आर.एस. आटोनामस कालेज (एक्सीलेन्स सेन्टर) रीवा में कार्यरत हैं। इनके निर्देशन में अनेक शोधार्थी समाजशास्त्र एवं अपराधशास्त्र के क्षेत्र में शोध कार्य कर रहे हैं। डॉ. अखिलेश **रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेज (आई. एस.एस.एन. 0973-3914)** तथा **रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेज (आई.एस.एस.एन. 0975-4083)** के ऑनरेरी एडिटर का कार्य भी सम्पादित कर रहे हैं।

GAYATRI PUBLICATIONS
Rewa - 486001 (M.P.) INDIA
Mobile : 07974781746
E-mail : gayatripublicationsrewa@rediffmail.com
www.researchjournal.in

978-81-87364-78-8